ओ३म्

विदुरनीतिः

(विदुरप्रजागरः)

(Trilingual—Sanskrit, Hindi & English)

अनुवादक एवं व्याख्याता

परमहंस स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द

भूमिका

नीतिशास्त्र और धर्मशास्त्र पर्यायवाची शब्द हैं। वैदिक परिभाषा में 'धर्म' शब्द का अर्थ कर्त्तव्य है, अतः धर्मशास्त्र या नीतिशास्त्र में चारों वर्णों के कर्त्तव्य और राजनीति का सविस्तर वर्णन किया गया है।

महाभारत भारतीय साहित्य में बेजोड़ ग्रन्थ है। महर्षि व्यास की घोषणा है—

धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च पुरुषर्षभ ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित् ॥

—महा० आदि० ६२।५३

भरतश्रेष्ठ ! धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के सम्बन्ध में जो बात इस ग्रन्थ में है, वहीं अन्यत्र भी है। जो बात इसमें नहीं है, वह अन्यत्र भी नहीं है।

महाभारत में प्रसंगवश अनेक नीतिशास्त्रकारों की नीतियों का संग्रह उपलब्ध होता है। इनमें तप और स्वाध्यायनिरत नारद, कूटनीतिज्ञ कणिक और महात्मा विदुर के नीतिशास्त्र प्रसिद्ध हैं।

इन सबमें महात्मा विदुर का धृतराष्ट्र के प्रति किया गया उपदेश अत्यन्त मार्मिक और अनूठा है। हो भी क्यों न ? स्वयं विदुरजी महाबुद्धिमान्, नीतिज्ञ, विद्वान् और सदाचारी थे। वे निर्भीक और सत्यवादी भी थे। इसमें राजनीति के मूल तथा गहन तत्त्वों का वर्णन और विवेचन तो है ही, साथ ही चरित्र का उत्थान करनेवाले नैतिक उपदेशों का भी प्रवचन है। इसी दृष्टि से महान् शिक्षाशास्त्री महर्षि दयानन्द सरस्वती ने 'विदुरनीतिः' के पठन-पाठन का विशेष विधान किया है।

आज के भ्रष्ट राज्याधिकारियों और देश के भावी कर्णधार विद्यार्थियों को इस ग्रन्थ पर गहन चिन्तन और मनन करना चाहिए तथा काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकाररूप पाँच शत्रुओं पर विजय पानी चाहिए। जब तक शासक

वर्ग व्यसनों को नहीं त्यागेगा तब तक न भारत की उन्नति होगी और न प्रजा को सुख-शान्ति मिलेगी।

'विदुरनीतिः' के अनेक संस्करण निकले हैं। यह संस्करण अब तक प्रकाशित संस्करणों में सर्वश्रेष्ठ है क्योंकि—

१. मूल संस्कृतपाठ को शुद्धतम रूप में छापा गया है।

२. विशद भावार्थ दिया गया है।

३. अनेक स्थानों पर जहाँ आवश्यक था, वहाँ 'विशेष' वक्तव्य लिखे गये हैं।

४. अनेक स्थानों पर पाठभेद दर्शाये गये हैं।

५. अंग्रेजी अनुवाद भी दिया गया है।

जहाँ तक हमें ज्ञात है, तीन भाषाओं में यह ग्रन्थ पहली बार छप रहा है। हमें आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि प्रबुद्ध पाठक इसका समादर करेगा।

विदुषामनुचरः
—जगदीश्वरानन्द सरस्वती

वेद सदन
एच-१।२, मॉडल टाउन,
दिल्ली-११०००६

Foreword

In the literature of the whole world the historic epic Mahabharata is unparallel. Maharsi Vyasa declares—

धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च पुरुषर्षभ ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित् ॥

—Maha. Adi. 62/53

O the best among the *Bharata* Race ! In connection with *Dharma* (Religion), *Aratha* (Wealth), *Kama* (Desire) and *Moksha* (Liberation) whatever has been said in this book, the same is elsewhere. Whatever is not narrated here, is nowhere else.

According to context in *Mahabharata,* several *Nitis* have been compiled. In which *Narada-Niti, Kanik-Niti* and *Vidura-Niti* are very famous.

Amongst them all, the sermon which was delivered by high souled *Vidura* to *Dhrtrastra* is the most pathetic and marvellous. It should have been so, because *Vidura* himself was a great polititian, most learned and righteous person endued with great wisdom . He was fearless and truthful.

In this book besides the fundamental principles and deep knowledge of politics, there are sermons which elevate the character of a man. It is for this reason the great educationist Maharsi Dayananda Saraswati has prescribed this book in the course of the studies.

The corrupt officials of the state and the promising students should study it minutely and ponder over it. By doing so they should achieve victory over five enemies, viz., passion, anger, greed, attachment and self-conçeit. Untill and unless the officials of the state will not give up their addiction to evil passion and vice, neither India will progress nor the subject will enjoy peace

and happiness.

Many editions of *Vidura-Niti* have been published in *Hindi* language. According to my knowledge, this is the first edition comprising three languages i.e. *Sanskrit, Hindi* and *English.* Among the editions published uptill now, this is the best because—

1. The *Sanskrit*-Text has been published correctly with great accuracy.

2. Elaborate translation of each verse has been given.

3. Where necessary special notes have been given, so that the meaning may become clear.

4. The variations of the text have also been shown.

I thank my operator Mr. Vijay Kumar Jha for taking great pains in composing and setting the matter in a stylish way. I also thank Shri Dhanañjaya Kulkarni, lecturer and journalist of Hydrabada, Shri Amolak Singh Kanva of Paschim Vihar, Delhi and Smt. Savitri Gupta of Saraswati Vihar, Delhi for going through English translation.

I hope the intelligent reader will appriciate this work.

—Jagdishwarananda Saraswati

Veda Sadan

H-1/2, Model Town

Delhi-110009

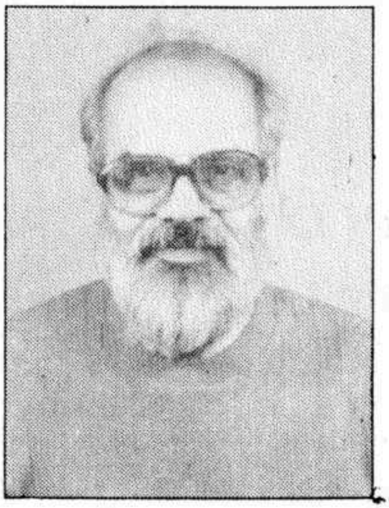

स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

जन्म—२० जनवरी, १६३१ ।

शिक्षा—पंजाब विश्वविद्यालय से 'प्रभाकर' तथा बी०ए०, दिल्ली विश्वविद्यालय से संस्कृत में एम०ए० ।

लेखन-कार्य—वेद, रामायण, महाभारत, दर्शन और आयुर्वेद पर अब तक आपके ७५ ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं, जिनकी विद्वानों और पाठकों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है ।

प्रभावशाली वक्ता—लेखक होने के साथ आप प्रभावशाली वक्ता भी हैं । वेद और योग के रहस्यों को अत्युत्तम रीति से प्रकट करने में दक्ष हैं । पाखण्डवाद के प्रति बड़े जोश से बोलते हैं ।

विदेश भ्रमण—संन्यास में दीक्षित होने के पश्चात् आपने सूरिनाम, गुयाना, ट्रीनिडाड, हालैण्ड, फिजी-द्वीप, श्रीलंका और नेपाल में भी वैदिक धर्म की दुन्दुभि बजाई । आपके जीवन और उपदेश दोनों ने ही लोगों को प्रभावित किया ।

पुस्तकालय—आपका व्यक्तिगत पुस्तकालय बहुत विशाल है । इतना बड़ा धार्मिक पुस्तकालय देहली में शायद ही कोई हो ।

संन्यास-प्रवेश—आप नैष्ठिक ब्रह्मचारी हैं । आपने अपना सारा जीवन वैदिक धर्म के प्रचार और प्रसार के लिए अर्पित किया हुआ है । १६ फरवरी, १६७५ वसन्त पञ्चमी के ऐतिहासिक तथा पावन पर्व पर आप अपने अति समृद्ध परिवार को त्यागकर संन्यासाश्रम में दीक्षित हो गये ।

आप वेद के विद्वान् हैं, उपनिषदों का आपने मन्थन किया है, रामयण और महाभारत के आप समालोचक हैं । मतमतान्तरों पर आपका गम्भीर अध्ययन है, सिद्धन्तों के आप मर्मज्ञ हैं, वैदिक कर्मकाण्ड के आप विशेषज्ञ हैं । इस सबके साथ आप योगाभ्यासी भी हैं । स्वभाव के बड़े मधुर हैं, सादगी के पुञ्ज हैं, सच्चरित्र और ईमानदार हैं, बड़े मिलनसार और विनोदी हैं ।

PRONUNCIATION OF TRANSLITERATED WORDS

			Sounds Like
ā	a	आ	in Jar
ū	oo	ऊ	in Cool
ç	ch	च	in Church
ṛ	ri	ऋ	in Marrily
d	da	ड	in Do
ḍ	da	द	in These
t	ta	ट	in But
ṭ	ta	त	in Water (as in Ireland)
ṅ	na	ञ	in Sing
ṇ	na	ण	
s	sa	स	in Saint
ś	sha	श	in Sure
ṣ	sha	ष	in Shun
ṁ	m	म्	in Simple

ओ३म्

विदुरनीतिः

प्रथमोऽध्यायः—First Chapter

अवतरणिका=Introductory

पाण्डवों के वनवास के बारह और अज्ञातवास का एक वर्ष पूर्ण होने पर जब वे प्रकट हुए तब विराटनगर में भावी कार्यक्रम के विषय में मन्त्रणा हुई। युद्ध की तैयारियाँ होने लगीं। राजा द्रुपद ने अपने पुरोहित को धृतराष्ट्र के पास भेजा। उनके युक्तियुक्त कथन का भीष्मादि द्वारा अनुमोदन किये जाने पर भी दुर्योधन ने उसे स्वीकार नहीं किया। पुरोहित के लौट जाने पर धृतराष्ट्र ने संजय को दूत बनाकर युधिष्ठिर के पास भेजा और कहलवाया कि युद्ध में भीष्मादि को मारकर राज्य भोगने से तो भीख माँगकर खा लेना अच्छा है। इसके उत्तर में युधिष्ठिर और श्रीकृष्ण का सन्देश लेकर संजय ने वापस आकर कहा—"पाण्डव धर्मपूर्वक ही अपना राज्य चाहते हैं, यदि उनका उचित भाग उन्हें न दिया गया तो विश्व में भारी अनर्थ होगा। यात्रा में थक जाने के कारण विशेष बातें कल सभा में ही कहूँगा।" संजय के वचनों से सन्तप्त धृतराष्ट्र ने महात्मा विदुर को बुलाने का आदेश दिया।

After completing twelve years of banishment and one year of disguise, when the *Pāndavās* appeared, then a meeting was held at *Virātanagar* in order to discuss and finalise the future programme. The prepations for war began. King *Ḍrupaḍa* sent his priest to deliver the message of the *Pāndavās* to *Dhṛṭrāṣtra*. His befitting statement full of arguements was much appreciated by *Bhiṣma* and others, but *Duryodhana* did not accept it. When the priest returned, then *Dhṛṭrāṣtra* sent *Sanjaya* as his messenger, who after reaching *Yudhiṣthira* said—'It is good to beg alms instead of accession to the throne after slaying *Bhiṣma* and others in the war." In reply receiving the message of *Yudhiṣthira* and *Śri Kṛṣṇa*, *Sanjaya* on returning back said—'The *Pāndavās* only want their due share righteously, if their due share is not given to them, there will be a great disaster in the whole world. In the course of journey, I have been tired much and therefore, whatever I have to say, I shall tell in the assembly

to-morrow.' Stricken with grief by the words of *Sanjaya, Dhṛtraṣtra* sent for high souled *Viḍura*.

वैशम्पायन उवाच

द्वाःस्थं प्राह महाप्राज्ञो धृतराष्ट्रो महीपतिः ।
विदुरं द्रष्टुमिच्छामि तमिहानय मा चिरम् ॥१॥

भावार्थ—वैशम्पायनजी कहते हैं—महाबुद्धिमान् महाराज धृतराष्ट्र ने द्वारपाल को आदेश दिया कि महात्मा विदुर को शीघ्र यहाँ बुला लाओ, क्योंकि मैं उनसे मिलना चाहता हूँ ।

Vaiśampāyana says—King *Dhṛtrāṣtra*, endued with great wisdom, said to the door-keeper—'I desire to see *Viḍura*. Bring him here without delay'.

प्रहितो धृतराष्ट्रेण दूतः क्षत्तारमब्रवीत् ।
ईश्वरस्त्वां महाराजो महाप्राज्ञ दिदृक्षति ॥२॥

भावार्थ—धृतराष्ट्र द्वारा भेजे हुए दूत ने जाकर विदुरजी से कहा—'हे महाप्राज्ञ ! महाराज धृतराष्ट्र आपका दर्शन करना चाहते हैं, कृपया चलिए ।'

Sent by *Dhṛtrāṣtra*, the messenger went to Kshattā (क्षत्ता)§ and said—'O most learned man ! Our lord, the mighty king, desires to see you. Kindly accompany me.'

***विशेष**—क्षत्ता का अर्थ है—दासी से उत्पन्न । ये व्यास द्वारा विचित्रवीर्य की पत्नी अम्बिका की दासी से उत्पन्न नियोगज पुत्र थे ।*

एवमुक्तस्तु विदुरः प्राप्य राजनिवेशनम् ।
अब्रवीद् धृतराष्ट्राय द्वाःस्थं मां प्रतिवेदय ॥३॥

भावार्थ—राजदूत का वचन सुनकर विदुरजी राजभवन में पहुँचे और वहाँ द्वारपाल से कहा—'राजा धृतराष्ट्र को मेरे आगमन की सूचना दो ।'

Thus addressed by the messenger, *Viḍura* set out and after reaching the palace, spoke to the door-keeper—'Inform king *Dhṛtrāṣtra* of my arrival.'

***विशेष**—श्लोक में पठित 'तु' अव्यय पादपूर्ति के लिए है । वैसे यह अव्यय*

---

§ क्षत्ता means born from a maid-servant. He was born from *Ambika's* maid-servant by *Vyasa* by *Niyoga*. *Ambika* was the wife of *Vicitravirya*.

'किन्तु, प्रत्युत, और, अब' आदि अर्थों का भी बोधक है

द्वा:स्थ उवाच

विदुरोऽयमनुप्राप्तो राजेन्द्र तव शासनात् ।
द्रष्टुमिच्छति ते पादौ किं करोतु प्रशाधि माम् ॥४॥

भावार्थ—द्वारपाल ने धृतराष्ट्र के पास जाकर कहा—'हे राजेन्द्र ! आपके आदेशानुसार महात्मा विदुर उपस्थित हो गये हैं। वे आपके चरणों का दर्शन करना चाहते हैं। मुझे आज्ञा दीजिए कि वे क्या करें ?'

Thereupon, the gate-keeper went to *Dhṛṭrāṣtra* and said—'O foremost among kings ! *Viḍura* is here at your command. He wants to behold your feet. Command me as to what he is to do.'

धृतराष्ट्र उवाच

प्रवेशय महाप्राज्ञं विदुरं दीर्घदर्शिनम् ।
अहं हि विदुरस्यास्य नाऽकल्पो जातु दर्शने ॥५॥

भावार्थ—द्वारपाल की बात सुनकर धृतराष्ट्र ने कहा—'विवेकी एवं महाप्राज्ञ विदुर को भीतर ले-आओ। मैं विदुर से मिलने में कभी भी असमर्थ नहीं हूँ, मैं उनके दर्शन के लिए सदा लालायित रहता हूँ।'

Thereupon (after listening to the door-keeper), *Dhṛṭraṣtra* said—'Let *Viḍura* of great wisdom and foresight enter. I am never unwilling to see *Viḍura.* I am always eager to see him.'

विशेष—*कहीं-कहीं 'नाकाल्य:' पाठ है। इसका अर्थ है—'समयाभाववाला नहीं हूँ'।*

द्वा:स्थ उवाच

प्रविशान्तःपुरं क्षत्तर्महाराजस्य धीमतः ।
न हि ते दर्शनेऽकल्पो जातु राजाऽब्रवीद्धि माम् ॥६॥

भावार्थ—द्वारपाल ने बाहर आकर विदुरजी से कहा—'हे विदुर ! आप बुद्धिमान् महाराज के राजभवन के भीतर (रनिवास में) चलिए। महाराज ने मुझे कहा है कि वे आपसे मिलने में कभी भी असमर्थ नहीं हैं, आपसे सदा मिल सकते हैं।'

The gate-keeper then came out and spoke unto *Viḍura*—O *Kshattā—Viḍura* ! enter the inner appartments of the wise king. The

king says that he is always willing and eager to see you.

वैशम्पायन उवाच

ततः प्रविश्य विदुरो धृतराष्ट्रनिवेशनम् ।
अब्रवीत् प्राञ्जलिर्वाक्यं चिन्तयानं नराधिपम् ॥७॥

भावार्थ—वैशम्पायनजी कहते हैं—द्वारपाल के वैसा कहने पर विदुरजी धृतराष्ट्र के राजभवन में गये और हाथ जोड़कर चिन्तामग्न महाराज से कहा—

Viaśampāyana says—When the door-keeper said so, *Viḍura* entered *Dhṛtrāṣtra's* chamber and with folded hands said unto that ruler of men (King) who was then absorbed in thought.

विदुरोऽहं महाप्राज्ञ सम्प्राप्तस्तव शासनात् ।
यदि किञ्चन कर्तव्यमयमस्मि प्रशाधि माम् ॥८॥

भावार्थ—'हे महामते ! आपके आदेश से मैं उपस्थित हूँ। यदि मेरे योग्य कोई कार्य हो तो मुझे आज्ञा कीजिए।'

'C you of great intelligence ! I, *Viḍura*, am, here at your command. If there is anything to be done by me, here I am, command me.'

धृतराष्ट्र उवाच

सञ्जयो विदुर प्राप्तो गर्हयित्वा च मां गतः ।
अजातशत्रोः श्वो वाक्यं सभामध्ये स वक्ष्यति ॥९॥

भावार्थ—धृतराष्ट्र ने कहा—'हे विदुर ! पाण्डवों से मिलकर संजय वापस आ गया है और मुझे ही बुरा-भला कह कर चला गया है। वह कल राजसभा में युधिष्ठिर का सन्देश सुनाएगा।'

Dhṛtrāṣtra said—'O *Viḍura* ! after delivering my message to the *Pāndavās, Sanjaya* has come back. He has gone away after rebuking me. To-morrow he will deliver, in the midst of the court, *Ajāṭaśatru's* (अजातशत्रु=having no enemy) message.'

तस्याद्य कुरुवीरस्य न विज्ञातं वचो मया ।
तन्मे दहति गात्राणि तदकार्षीत् प्रजागरम् ॥१०॥

भावार्थ—'मैं कुरुवीर युधिष्ठिर के सन्देश को आज नहीं जान सका, यह बात मेरे तन-मन को जला रही है और इसी ने मुझे प्रजागर=निद्राहीन कर दिया है।

'I have not been able to ascertain today, what the message of Kuru-hero is. This anxiety is burning my body and mind and has made me sleepless.

जाग्रतो दह्यमानस्य श्रेयो यदनुपश्यसि ।
तद् ब्रूहि त्वं हि नस्तात धर्मार्थकुशलो ह्यसि ॥११॥

भावार्थ—'हे भाई ! मुझ जागते हुए और चिन्ता से व्याकुल का जिस बात में कल्याण हो वह मुझे बताओ, क्योंकि हम सबमें तुम्हीं धर्म और अर्थ= राजनीति का प्रवचन करने में कुशल हो ।

'O brother ! tell me what is good for a person like me, who is sleepless and burning with anxiety, because among us you alone are, well-versed both in religion and politics.

यतः प्राप्तः सञ्जयः पाण्डवेभ्यो
न मे यथावन्मनसः प्रशान्तिः ।
सर्वेन्द्रियाण्यप्रकृतिं गतानि
किं वक्ष्यतीत्येव हि मेऽद्य चिन्ता ॥१२॥

भावार्थ—'जब से संजय पाण्डवों के पास से लौटकर मुझसे मिला है, तब से मेरा मन अशान्त है, मेरी सारी इन्द्रियाँ विकल हो गई हैं। 'कल वह सभा में क्या कहेगा'—यही चिन्ता मुझे सता रही है ।'

'Ever since *Sanjaya* after returning from the *Pāndavās*, has met me, my heart knows no peace. Filled with anxiety about what he will say in the court, all my sense-organs have been disordered.'

विदुर उवाच

अभियुक्तं बलवता दुर्बलं हीनसाधनम् ।
हृतस्वं कामिनं चौरमाविशन्ति प्रजागराः ॥१३॥
कच्चिदेतैर्महादोषैर्न स्पृष्टोऽसि नराधिप ।
कच्चिन्न परवित्तेषु गृध्यन्न परितप्यसे ॥१४॥

भावार्थ—विदुर ने कहा—'हे राजन् ! बलवान् से दबाये हुए, साधनरहित, दुर्बल, जिसका धन चुरा लिया गया हो ऐसे नष्ट-धन, कामी और चोर को उन्निद्रता आ घेरती है। कहीं ये दोष आपको तो नहीं लग गये ? कहीं आप पराये धन के लालच में तो सन्तप्त नहीं हो रहे हो ?'

Vidura said—'O king ! sleeplessness overtakes the one, who has been attacked by a strong person, who is devoid of means of enjoyment, who is weak, whose wealth has been stolen, who is lustful and who is a thief. I hope, that none of these grave calamities have over-taken you. Are you not grieved over coveting the wealth of others?'

धृतराष्ट्र उवाच

श्रोतुमिच्छामि ते धर्म्यं परं नैःश्रेयसं वचः ।
अस्मिन् राजर्षिवंशे हि त्वमेकः प्राज्ञसम्मतः ॥१५॥§

---

§ इस श्लोक के पश्चात् निम्न प्रक्षिप्त श्लोक हैं—

विदुर उवाच

राजा लक्षणसम्पन्नस्त्रैलोक्यस्याधिपो भवेत् । प्रेष्यस्ते प्रेषितश्चैव धृतराष्ट्र युधिष्ठिरः ॥१॥
विपरीततरश्च त्वं भागधेये न सम्मतः । अर्चिषां प्रक्षयाच्चैव धर्मात्मा धर्मकोविदः ॥२॥
आनृशंस्यादनुक्रोशाद्धर्मात्सत्यात्पराक्रमात् । गुरुत्वात्त्वयि सम्प्रेक्ष्य बहून् क्लेशाँस्तितिक्षते ॥३॥
दुर्योधने सौबले च कर्णे दुःशासने तथा । एतेष्वैश्वर्यमाधाय कथं त्वं भूतिमिच्छसि ॥४॥

भावार्थ—विदुरजी बोले—'हे धृतराष्ट्र ! सब उत्तमलक्षणों से युक्त आपका सेवक युधिष्ठिर तीनों लोकों का राजा हो सकता है, परन्तु आपने उसे वनवास दे दिया ।

'धर्मात्मा और धर्मज्ञ होकर भी आप अत्यन्त विपरीत चल रहे हो । नेत्र-ज्योति के नष्ट हो जाने से राजलक्षणों से हीन हो जाने के कारण आप राज्यांश के अधिकारी नहीं हो ।

'युधिष्ठिर सरल, निश्छल, धर्मात्मा, सत्यवादी और पराक्रमी है । आपमें गुरुबुद्धि होने के कारण आपके गौरव का ध्यान करते हुए वह अनेक प्रकार के दुःखों को सह रहा है ।

'दुर्योधन, सुबलपुत्र शकुनि, कर्ण और दुःशासन—इनपर राज्य का भार डालकर आप कल्याण की कामना कैसे कर रहे हैं ?'

§ After this verse there are above enumerated four interpolated verses—

Vidura said—'O *Dhrtrastra* ! king *Yudhiṣthira*, graced with all the virtues, who is loyal to you, is worthy of being the sovereign of the three worlds. He was worthy of being kept by your side, but he was exiled by you.

'Although you are virtuous and versed in morality, yet you are going astray. Due to the loss of sight and thus being devoid of royal virtues, you have no right to a share in the kingdom.

'*Yudhiṣthira* is kind-hearted, honest, righteous, truthful and energetic. Having reverence for you, thinking of your prestige, he is patiently bearing innumerable sorrows.

'Having bestowed on *Duryodhana*, *Subala's* son—*Śakuni, Karṇa* and *Dusasana*, the management of the empire, how can you hope for prosperity and welfare?'

भावार्थ—धृतराष्ट्र ने कहा—'हे विदुर ! मैं तुम्हारे धर्मयुक्त परम कल्याण-कारक (मोक्षदायक) वचनों को सुनना चाहता हूँ, क्योंकि राज-ऋषियों के इस कुरुवंश में तुम अकेले ही महाबुद्धिमान् हो।'

Dhrtrastra said—'O *Vidura* ! I want to listen to your words that are in accordance with *Dharma*, beneficial, leading to libration and fraught with high morality. In the Kuru-race of royal *Ṛṣis* you alone are revered by the wise.'

पण्डितों के लक्षण=Characteristics of wise persons.

विदुर उवाच

आत्मज्ञानं समारम्भस्तितिक्षा धर्मनित्यता ।
यमर्था नापकर्षन्ति स वै पण्डित उच्यते ॥१६॥

भावार्थ—विदुरजी ने कहा—'जिसे अपने सामर्थ्य का ज्ञान है, जो अपनी शक्ति के अनुसार उद्योग करता है, जो सुख-दुःख, लाभ-हानि, मान-अपमान आदि कष्टों को सह लेता है, जो सदा धर्म में स्थिर रहता है और सांसारिक विषय जिसे अपनी ओर आकृष्ट नहीं कर पाते, वस्तुतः ऐसा व्यक्ति ही पण्डित है।

Vidura said—'He alone is a wise man, who knows his capacity, who is never idle or lazy but puts himself into exertion according to his might, who is not affected by pleasure or pain, profit or loss, honour or dishonour, who has a firm faith in *Dharma* and who is not tempted by sensual objects.

निषेवते प्रशस्तानि निन्दितानि न सेवते ।
अनास्तिकः श्रद्दधान एतत्पण्डितलक्षणम् ॥१७॥

भावार्थ—'जो मनुष्य यज्ञ, दान, तपादि उत्तम कर्मों का आचरण करता है, चोरी, जारी, हिंसा, मद्य-मांसभक्षणादि दुष्ट कर्मों का सेवन नहीं करता, जो आस्तिक (ईश्वर, आत्मा, वेद और पुनर्जन्म में विश्वास रखनेवाला) है, श्रद्धालु है, वही वस्तुतः पण्डित है।

'A person who performs *Yajñas*, gives alms, undergoes austerity and practises good deeds, who avoids sin—i.e. keeps away from theft, adultry, violence, flesh and wine, who is a theist (who has unbounded faith in God, in the *Vedas*, in the transmigration of the soul) and who is devotional, he is really a wise man.

क्रोधो हर्षश्च दर्पश्च ह्रीः स्तम्भो मान्यमानिता ।
यमर्थान्नापकर्षन्ति स वै पण्डित उच्यते ॥१८॥

भावार्थ—'जिस मनुष्य को क्रोध और प्रसन्नता, अभिमान और लज्जा, धृष्टता तथा मनमानी की प्रवृत्ति—ये दोष जीवनोद्देश्य से परे नहीं खींच ले-जाते, वह पण्डित कहाता है।

'He, whom neither anger nor joy, neither pride nor false modesty, neither insolence nor vanity can distract from the high goals of life, is considered a wise person.

यस्य कृत्यं न जानन्ति मन्त्रं वा मन्त्रितं परे ।
कृतमेवास्य जानन्ति स वै पण्डित उच्यते ॥१९॥

भावार्थ—'जिस व्यक्ति के भावी कार्यक्रम को और गुप्तरूप से विचारी हुई मन्त्रणा को शत्रु लोग नहीं जान पाते, उसके किये हुए कार्य को ही जानते हैं, वही पण्डित कहाता है।

'He, whose intended acts and proposed counsels remain concealed from foes, whose acts become known only after they have been performed, is really a wise man.

यस्य कृत्यं न विघ्नन्ति शीतमुष्णं भयं रतिः ।
समृद्धिरसमृद्धिर्वा स वै पण्डित उच्यते ॥२०॥

भावार्थ—'गर्मी-सर्दी, भय और प्रीति, सम्पत्ति और दरिद्रता—ये सब जिस व्यक्ति के भावी कार्यक्रम में बाधा नहीं डाल सकते, वस्तुतः ऐसा नरपुङ्गव ही पण्डित कहलाता है।

'Whose proposed actions are never obstructed by heat or cold, fear or attachment, prosperity or adversity such a great man is considered wise.

यस्य संसारिणी प्रज्ञा धर्मार्थावनुवर्तते ।
कामादर्थं वृणीते यः स वै पण्डित उच्यते ॥२१॥

भावार्थ—'जिस व्यक्ति की संसार में विचरण करनेवाली—अस्थिर बुद्धि भी धर्म और अर्थ के अनुकूल चलती है और जो विषय-वासना का त्याग करके धर्मरूपी प्रयोजन का वरण करता है, वही पण्डित कहाता है।

'He, whose worldly intelligence follows both *Dharma* (virtue) and *Artha* (wealth) and who disregarding worldly pleasures chooses *Dharma* which is serviceable in both worlds, is considered wise.

यथाशक्ति चिकीर्षन्ति यथाशक्ति च कुर्वते ।
न किञ्चिदवमन्यन्ते नराः पण्डितबुद्धयः ॥२२॥

भावार्थ—'पण्डितबुद्धि नर यथाशक्ति कार्य करना चाहते हैं और यथाशक्ति ही करते भी हैं तथा किसी भी वस्तु की उपेक्षा अथवा किसी भी मनुष्य का तिरस्कार नहीं करते, किसी को तुच्छ नहीं समझते ।

'Those, who not only wish but also act to the best of their might and ability and disregard none as insignificant or negligible, are called wise.

क्षिप्रं विजानाति चिरं शृणोति
विज्ञाय चार्थं भजते न कामात् ।
नासम्पृष्टो व्युपयुंक्ते परार्थे
तत्प्रज्ञानं प्रथमं पण्डितस्य ॥२३॥

भावार्थ—'जो शीघ्र समझ लेता है, दूसरे की बात को धैर्यपूर्वक देर तक सुनता है, शब्द-रूप-रस आदि इन्द्रियों के विषयों का कामना से सेवन नहीं करता, बिना पूछे दूसरों के कार्यों में सम्मति नहीं देता अथवा पराये कार्य में बिना कहे टाँग नहीं अड़ाता—ये पण्डित की प्रमुख पहचान हैं ।

'He, who grasps the most difficult subject in a very short time, listens to the talks of others patiently for a long time, pursues the objects of the senses with judgment and not from desire and does not give his opinion unasked—these are the foremost marks of a wise man.

नाप्राप्यमभिवाञ्छन्ति नष्टं नेच्छन्ति शोचितुम् ।
आपत्सु न मुह्यन्ति नराः पण्डितबुद्धयः ॥२४॥

भावार्थ—पण्डितों की-सी बुद्धिवाले मनुष्य दुर्लभ पदार्थ की कामना नहीं करते। नष्ट हुई वस्तु के विषय में शोक नहीं करते और विपत्ति आने पर घबराते नहीं हैं।

'Those having the intelligence of a wise man, do not strive for objects which are unattainable, do not grieve for what is lost and

gone and never lose their heart (remain firm) in calamities.

निश्चित्य यः प्रक्रमते नान्तर्वसति कर्मणः ।
अवन्ध्यकालो वश्यात्मा स वै पण्डित उच्यते ॥२५॥

भावार्थ—'जो अपनी शक्ति को सोच-विचारकर कार्य आरम्भ करता है, जो कार्य के मध्य में नहीं ठहरता, अर्थात् कार्य को अधूरा नहीं छोड़ता, जिसका समय व्यर्थ नहीं जाता, अर्थात् जो सदा निर्माणात्मक कार्यों में लगा रहता है और जितेन्द्रिय है, वही पण्डित कहाता है ।

'He, who commences his act with due thought and consideration, who never gives up things half way, who never idles away his time—who is always engaged in constructive deeds, who has his senses under his control, is regarded as a wise man.

आर्यकर्मणि रज्यन्ते भूतिकर्माणि कुर्वते ।
हितं च नाभ्यसूयन्ति पण्डिता भरतर्षभ ॥२६॥

भावार्थ—'हे भरतकुलभूषण ! पण्डितजन श्रेष्ठ कर्मों को करने में रुचि लेते हैं, ऐश्वर्य को बढ़ानेवाले और उन्नत करनेवाले कार्यों को करते हैं तथा हित करनेवालों से न ईर्ष्या करते हैं, न उनमें दोष निकालते हैं ।

'O the best among the *Bharata* race ! those who are wise, always feel delighted in performing honest deeds, do such acts which enhance their happiness and prosperity and never sneer at their well-wishers, nor find fault with them.

न हृष्यत्यात्मसम्माने नावमानेन तप्यते ।
गाङ्गो ह्रद इवाक्षोभ्यो यः स पण्डित उच्यते ॥२७॥

भावार्थ—'जो अपना सम्मान होने पर फूलकर कुप्पा नहीं हो जाता और अपमान होने पर दुःखी नहीं होता तथा जिसका मन समुद्र की भाँति गम्भीर और अक्षोभ्य (क्षोभरहित) रहता है, वही वस्तुतः पण्डित है ।

'He, who is never exulted at the honour and grieves not at disgrace, whose mind remains cool and unagitated like an ocean, is reckoned as a wise person.

तत्त्वज्ञः सर्वभूतानां योगज्ञः सर्वकर्मणाम् ।
उपायज्ञो मनुष्याणां नरः पण्डित उच्यते ॥२८॥

भावार्थ—'जो मनुष्य सब प्राणियों की क्षणभंगुरता अथवा भौतिक पदार्थों की वास्तविकता को जानता है, जो सब कार्यों को करने की विधि को जाननेवाला है और मनुष्यों में कार्यसिद्धि के उपायों को जानता है, वही पण्डित कहाता है।

'That man, who knows the nature of all creatures (*i.e.* that everything is subject to destruction), or who knows the reality of the worldly things, who knows the technique of doing all kinds of deeds and who is proficient in the knowledge of the means for attaining their objects, is reckoned as wise.

प्रवृत्तवाक् चित्रकथ ऊहवान् प्रतिभानवान् ।
आशु ग्रन्थस्य वक्ता च यः स पण्डित उच्यते ॥२६॥

भावार्थ—'जिसकी वाणी कहीं रुकती नहीं, जो शास्त्रों के रहस्यों का विचित्र वक्ता है, जो सूझबूझवाला है, जो प्रत्युत्पन्नमति=हाज़िरजवाब है और ग्रन्थ के अभिप्राय को शीघ्र कह सकता है, वही वस्तुतः पण्डित है।

'Who speaks eloquently (whose speech is fluent), who is a wonder- ful orator and can converse on various subjects, who is a man of imagination, who is a genius—ready witted and can interpret the hidden meaning of the sacred books, is reckoned as wise.

श्रुतं प्रज्ञानुगं यस्य प्रज्ञा चैव श्रुतानुगा ।
असम्भिन्नार्यमर्यादः पण्डिताख्यां लभेत सः ॥३०॥

भावार्थ—'जिसका शास्त्रज्ञान बुद्धि के अनुसार हो और जिसकी बुद्धि सुने हुए सत्य अर्थ के अनुकूल चलनेवाली हो, जो श्रेष्ठ, धार्मिक पुरुषों की मर्यादाओं का उल्लंघन करनेवाला न हो, वही पण्डित कहलाता है।

'He, whose studies of the *Śāsṭrās* (scriptures) are regulated by reason and whose reason follows the scriptures, who abides by the ideals or virtues of good persons, is called a wise man.

अर्थं महान्तमासाद्य विद्यामैश्वर्यमेव वा ।
विचरत्यसमुन्नद्धो यः स पण्डित उच्यते ॥३१॥§

§ महाभारत में यह श्लोक उद्योगपर्व के ३३वें अध्याय का ४०वाँ श्लोक है। प्रकरण की संगति के कारण हमने इसे यहाँ रक्खा है।

§ This is the 40th verse of section 33 of the *Udogaparva* of *Mahabhārata*. We have put it here because of its consistency.

भावार्थ—'जो बहुत बड़ी सम्पत्ति, विद्या अथवा राज्य, स्वामित्व आदि पाकर भी निरभिमान होकर विचरता है, वही पण्डित कहाता है।

'He, who even after gaining immense wealth and prosperity or acquiring vast learning and possession, is free from pride and vanity, is called a wise man.

मूर्खों के लक्षण—Signs of fools

अश्रुतश्च समुन्नद्धो दरिद्रश्च महामनाः।
अर्थांश्चाकर्मणा प्रेप्सुर्मूढ इत्युच्यते बुधैः॥३२॥

भावार्थ—जो शास्त्रज्ञान-शून्य होकर भी अतीव घमण्डी है, जो दरिद्र होकर भी बड़े-बड़े मनोरथोंवाला है, जो बिना कर्म किये ही धन प्राप्त करना चाहता है, ज्ञानीजन ऐसे व्यक्ति को मूर्ख कहते हैं।

He, who is ignorant of the scriptures yet proud, who is poor but builds castles in the air, wishes to obtain things or wealth without any exertion on his part, is called a fool by the wisemen.

स्वमर्थं यः परित्यज्य परार्थमनुतिष्ठति।
मिथ्या चरति मित्रार्थे यश्च मूढः स उच्यते॥३३॥

भावार्थ—जो अपने कार्य को छोड़कर शत्रु के कार्य के पीछे दौड़ता है और अपने मित्र के साथ भी कपट का व्यवहार करता है, वह मूढ़=मूर्ख कहाता है।

He, who forsaking his own work, concerns himself with the objects of his enemies and who is deceitful with his friends, is called a fool.

अकामान्कामयति यः कामयानान्परित्यजेत्।
बलवन्तं च यो द्वेष्टि तमाहुर्मूढचेतसम्॥३४॥

भावार्थ—जो न चाहने योग्य व्यक्तियों की चाहना करता है, चाहने योग्य को छोड़ देता है और बलवान् से द्वेष करता है, उसे मूर्ख कहते हैं।

He, who likes those persons who should not be liked and forsakes those who may legitimately be desired and who bears malice to those who are powerful, is regarded to be a foolish person.

अमित्रं कुरुते मित्रं मित्रं द्वेष्टि हिनस्ति च।
कर्म चारभते दुष्टं तमाहुर्मूढचेतसम् ॥३५॥

भावार्थ—जो शत्रु को मित्र समझता है, मित्र से द्वेष और विश्वासघात करता है तथा दुष्ट कर्म करता है, उसे मूढ़चेता=मूर्ख कहते हैं।

He, who regards his foe as his friend, who hates and bears malice to his friend and who commits wicked deeds, is said to be a fool.

संसारयति कृत्यानि सर्वत्र विचिकित्सते।
चिरं करोति क्षिप्रार्थे स मूढो भरतर्षभ ॥३६॥

भावार्थ—हे भरतकुलशिरोमणे ! जो अपने भावी कार्यक्रमों का सर्वत्र प्रचार करता है, सबके प्रति सन्देह करता है, शीघ्र करने योग्य कार्यों में विलम्ब करता है, वह मूर्ख है।

O the best among the *Bharata* race ! he, who propagates his future programmes, one who trusts none and takes a long time in doing an act which requires a short time, is a fool.

श्राद्धं पितृभ्यो न ददाति दैवतानि न चार्चति।
सुहृन्मित्रं न लभते तमाहुर्मूढचेतसम् ॥३७॥

भावार्थ—जो व्यक्ति अपने पितरों=माता-पिता आदि वृद्धजनों, नगर और देश के रक्षकों को श्रद्धापूर्वक अन्न, पान, वस्त्रादि उनका देयभाग उन्हें प्रदान नहीं करता, जो देवों=चेतनदेव परमेश्वर की उपासना, विद्वानों का सत्कार और जड़देव अग्नि, वायु जलादि का होम द्वारा उपकार नहीं करता और जिसे स्नेही मित्र प्राप्त नहीं होता, उसे मूढ़चेता कहते हैं।

He, who does not assign their due share of corn, water, clothes with *Śraddha* to the *Piṭṛs* i.e. father, mother, old persons, protectors of the city and country, who does not worship the deities—i.e. who does not worship God Almighty, who does not honour the learned and does not do good to fire, air, water etc. by pouring oblations in the fire and who does not acquire noble minded friends, is said to be a person of foolish soul.

***विशेष**—श्राद्ध का अर्थ है श्रद्धापूर्वक माता-पिता आदि का सत्कार। 'पितृ'*

शब्द का अर्थ बहुत व्यापक है । पितृ शब्द माता-पिता के अतिरिक्त साधु-सन्त, पुरोहित, गुरु, नगर और देश-रक्षक के लिए भी प्रयुक्त होता है । 'दैवत' का अर्थ है देवता । देवता दो प्रकार के होते हैं—चेतन और जड़ । चेतन देव हैं—ब्राह्मण, संन्यासी, आचार्य, अतिथि आदि और देवों का देव महादेव=परमपिता परमात्मा । जड़ देव हैं—अग्नि, वायु, जल, पृथिवी आदि । जो इन सबसे लाभ उठाता हुआ बदले में इन्हें देता कुछ नहीं, वह वस्तुतः मूर्ख है ।

Note—*Śraddhā means to honour the parents with reverence. The meaning of the word Pitṛ is very wide. In addition to father and mother this word is also used for saintly persons, priests, preceptors and protectors of the city and the country. दैवत means deity, they are of two kinds—viz. living and non-living. Living or animate gods are Brāhmaṇās, Sannyāsins, Learned Guests, Preceptors etc., God of gods—the Supreme Lord. The unanimate gods are—fire, air, water, earth etc. One who taking advantage from all of them, does not offer anything in return, is really a stupid.*

अनाहूतः प्रविशति अपृष्टो बहु भाषते ।
अविश्वस्ते विश्वसिति मूढचेता नराधमः ॥३८॥

भावार्थ—जो मनुष्य किसी के घर अथवा सभा आदि में बिना बुलाये प्रविष्ट होता है, बिना पूछे बहुत बोलता है और अविश्वासी पर विश्वास करता है, वह नराधम मूढचेता है ।

He, who enters an assembly or another man's house uninvited, talks much without being asked, who trusts the untrustworthy or believes in what should not be believed, is verily a fool and the lowest of the low.

परं क्षिपति दोषेण वर्तमानः स्वयं तथा ।
यश्च क्रुध्यत्यनीशानः स च मूढतमो नरः ॥३९॥

भावार्थ—जो मनुष्य स्वयं दूषित आचरण करता हुआ दूसरे की उसी दोष के कारण निन्दा करता है और जो असमर्थ होता हुआ भी क्रोध करता है, वह महामूर्ख होता है ।

That man, who being himself guilty blames the other person for

the same conduct and who though impotent gives vent to anger, is the most foolish among men.

आत्मनो बलमज्ञाय धर्मार्थपरिवर्जितम् ।
अलभ्यमिच्छन्नैष्कर्म्यान्मूढबुद्धिरिहोच्यते ॥४०॥

भावार्थ—जो मनुष्य अपनी शक्ति को विचारे बिना धर्म और अर्थ से रहित तथा अलभ्य पदार्थ अथवा ऐश्वर्य को बिना पुरुषार्थ के पाना चाहता है, ऐसा मनुष्य इस संसार में मूर्ख कहलाता है ।

That man, who without knowing his own strength desires an object which is devoid of both virtue and wealth, difficult of acquisition, without adopting adequate means, is said to be a fool in this world.

अशिष्यं शास्ति यो राजन् यश्च शून्यमुपासते ।
कदर्यं भजते यश्च तमाहुर्मूढचेतसम् ॥४१॥

भावार्थ—हे राजन् ! जो अनधिकारी को उपदेश देता है, दरिद्र, दीन-हीन के पास उठता-बैठता है और कंजूस=सूम, अदाता का आश्रय लेता है, उसे मूढचेता कहते हैं ।

O king ! he, who advises the undeserving, who keeps company with the wretched and destitute and takes refuge in misers, is said to be having little sense.

संख्या द्वारा ज्ञान—Knowledge by numbers

एकः सम्पन्नमश्नाति वस्ते वासश्च शोभनम् ।
योऽसंविभज्य भृत्येभ्यः को नृशंसतरस्ततः ॥४२॥

भावार्थ—जो स्वामी अपने नौकर-चाकर आदि को बाँटे बिना अकेला ही स्वादु भोजन कर लेता है और उत्तम वस्त्र पहनता है, उससे बढ़कर क्रूर और कौन होगा ?

Who is more cruel and heartless than he who, though possessing wealth in piles eats alone and wears excellent robes himself without distributing his wealth among his servants and dependents.

एकः पापानि कुरुते फलं भुङ्क्ते महाजनः ।
भोक्तारो विप्रमुच्यन्ते कर्ता दोषेण लिप्यते ॥४३॥

भावार्थ—मनुष्य अकेला पाप करके धन कमाता है, परन्तु उसका उपभोग अनेक लोग करते हैं। उपभोग करनेवाले तो दोष से छूट जाते हैं, परन्तु पापकर्त्ता को उस पाप का फल भोगना पड़ता है।

While one person commits sins—earns money by evil means, many get the fruit resulting therefrom, but in the end, it is the doer alone to whom the sin is attached, while those who enjoy the fruit escape unhurt.

***विशेष**—हमारे विचार में भोगनेवालों को भी कुछ-न-कुछ पाप लगेगा ही। अन्याय से उपार्जित धन परिवार अथवा राष्ट्र को भी ले डूबेगा।*

***Note**—In our opinion those who enjoy the fruit, they also suffer to some extent. The money earned by evil means will destroy the whole family. It can harm the country also.*

एकं हन्यान्न वा हन्यादिषुर्मुक्तो धनुष्मता ।
बुद्धिर्बुद्धिमतोत्सृष्टा हन्याद्राष्ट्रं सराजकम् ॥४४॥

भावार्थ—किसी धनुर्धारी वीर द्वारा छोड़ा गया बाण एक को भी मारे अथवा न मारे इसमें सन्देह है, परन्तु बुद्धिमान् के द्वारा प्रयुक्त की गयी बुद्धि (किसी के नाश करने की युक्ति) राजा-सहित सम्पूर्ण राष्ट्र का विनाश कर सकती है।

When an archer shoots an arrow, he may or may not succeed in killing even a single person, but when an intelligent individual applies his intelligence viciously, it may destroy an entire kingdom along with the king.

एकया द्वे विनिश्चित्य त्रींश्चतुर्भिर्वशे कुरु ।
पञ्च जित्वा विदित्वा षट् सप्त हित्वा सुखी भव ॥४५॥

भावार्थ—एक (बुद्धि) के द्वारा दो का निश्चय करके तीन को चार के द्वारा वश में करो। पाँच को जीतकर, छह को जानकर और सात को छोड़कर सुखी हो जाओ।

Discriminating the two by means of one, bring three under control by means of four, conquering the five and knowing the six and abstaining from the seven, be happy.

विशेष—*यह कूट श्लोक है। एक बुद्धि है। बुद्धि के द्वारा दो=कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य का निश्चय करना चाहिए। मित्र, उदासीन और शत्रु—इन तीनों को साम, दान, दण्ड और भेद—इन चार उपायों से वश में करना चाहिए। मित्र १। साम=मधुर वचनों द्वारा, उदासीन=तटस्थ को दान तथा भेद-नीति से और शत्रु को चारों उपायों से वश में करना चाहिए। पाँच ज्ञानेन्द्रियों को जीतकर सन्धि=मेल करना, विग्रह=लड़ाई, यान=शत्रु पर आक्रमण, आसन=चुप बैठे रहना, द्वैध=अपनी सेना को दो भागों में बाँट देना और समाश्रय=किसी बलवान् का सहारा लेना—इन छह का स्वरूप जानना चाहिए। पर-स्त्रीगमन, जुआ खेलना, शिकार करना, मद्यपान, कठोर भाषण, कठोर दण्ड और धन को दूषित कार्यों में व्यय करना—इन सात को छोड़कर सुखी हो जाइए।*

व्याख्याकारों ने इस श्लोक की आध्यात्मिक व्याख्या भी की है जो इस प्रकार है—एक परमार्थ बुद्धि के द्वारा दो—जीवात्मा और परमात्मा का निश्चयात्माक ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। काम, क्रोध और लोभ इन तीनों को शम, दम, उपरम और श्रद्धा के द्वारा वश में करना चाहिए। पाँच ज्ञानेन्द्रियों को जीतकर षट्क सम्पत्ति—शम, दम, उपरति, तितिक्षा, श्रद्धा और समाधान—*इन छह को जानना चाहिए। सात छोड़ने योग्य वही हैं जिनका ऊपर संकेत किया है।*

Note—*It is a* Kūta Śloka—*a puzzling verse. One is intellect. By means of intellect one should discriminate the two right and wrong. Allies, neutral and foes—these three should be brought under control by four expedients i.e.* Sāma, Ḍāna, Daṇda and B̲heda. *The allies should be put under control by Sāma—by tranquilizing words, neutral powers by giving something and by discrimination and the foe should be brought under control by all the four expedients. By conquering the five sense organs you should know the reality of* Sandhi—*making peace with the enemy,* Vigraha—*declaring war against the wicked enemy,* Yāna—*marching to action,* Āsana—*remaining passive,* Ḍwedha—*gaining victory by dividing the forces into two and* Samasrya—*seeking protection of, or alliance with a powerful king. By abstaining from seven evils i.e.* adultry, gambling *(playing with dice),* hunting, *use of* intoxicants *like* liquor *etc., saying* unkind *or hard words,* infliction of punishment *without any offence and spending money for sinful purposes, be happy.*

A spiritual translation of the verse has also been made which is as follows—by summnum bonun intellect one should aquire definite knowledge of soul and God. Desire, anger and greed—these three should be controlled by Śama, Ḍama, Uparaṭi and Śraddhā. By controlling five sense organs, one should be well-versed in Ṣataka Sampaṭṭi—*the performance of six kinds of acts*—Śama—*restraining one's mind and soul from sins and temptations,* Ḍama—*controlling the organs of action and living a chaste life,* Uparaṭi—*keeping aloof from wicked persons,* Titiksa—*to be indifferent to worldly pleasures and pains and throwing oneself heart and soul into the pursuit of the ways and means of liberation,* Śraddhā—*to have faith in scriptures, profound scholars and men of great piety and high ideals,* Samadhana—*the concentration of the mind. The seven addictions, one should abstain from, are the same as explained above.*

एकं विषरसो हन्ति शस्त्रेणैकश्च बध्यते ।
सराष्ट्रं सप्रजं हन्ति राजानं मन्त्रविप्लवः ॥४६॥

भावार्थ—पिया हुआ विष केवल पीनेवाले को ही मारता है, शस्त्र से भी एक ही व्यक्ति मारा जाता है, परन्तु गुप्त विचार के प्रकट हो जाने से राष्ट्र और प्रजासहित राजा का भी नाश हो जाता है ।

Poison kills only one person who takes it, a weapon also ends the life of one man only, but when the secret counsels become known, they destroy the entire kingdom, along with the king and the subjects.

विशेष—*जो हाथ में रखकर चलाया जाए वह शस्त्र कहलाता है, जैसे भाला, तलवार आदि और जो फेंककर मारा जाए वह अस्त्र कहलाता है, जैसे तीर, बन्दूक, तोप, बम्ब आदि ।*

Note—Śastra—*means a weapon which is used by holding it in the hand just like a spear and sword. That which is thrown at the enemy from a distance is* Asṭra *i.e. an arrow, a gun, bomb etc.*

एकः स्वादु न भुञ्जीत एकश्चार्थान्न चिन्तयेत् ।
एको न गच्छेदध्वानं नैकः सुप्तेषु जागृयात् ॥४७॥

भावार्थ—मनुष्य को चाहिए कि औरों को खिलाये बिना अकेला स्वादिष्ट भोजन या पदार्थ न खाये । अकेला धन के विषय में विचार न करे अर्थात् धनागम और व्यय आदि के सम्बन्ध में दूसरों से परामर्श अवश्य करे । अकेला

यात्रा न करे, एक से दो भले ! और बहुत-से लोग सोये हुए हों तो उनमें अकेला जागता न रहे ।

One should not partake of any savoury food alone, nor one should reflect alone in the matter of acquiring wealth (profits) i.e. in the matter of earning and spending he should consult others. One should not travel alone. One should not remain awake when all the other companions are sleeping.

एकमेवाद्वितीयं तद्यद्राजन्नावबुध्यसे ।
सत्यं स्वर्गस्य सोपानं पारावारस्य नौरिव ॥४८॥

भावार्थ—हे राजन् ! जिस प्रकार समुद्र के पार जाने के लिए नौका ही एकमात्र साधन है, उसी प्रकार स्वर्ग=मोक्ष-प्राप्ति के लिए एक और अद्वितीय ब्रह्म का ज्ञान ही एकमात्र साधन है, परन्तु आप इस बात को समझ नहीं रहे हैं ।

O king ! just as a boat is the only means to cross an ocean, similarly the Lord Almighty who is incomparable and one without a second is the only way to attain salvation, but you are unable to comprehand this truth.

एकः क्षमावतां दोषो द्वितीयो नोपपद्यते ।
यदेनं क्षमया युक्तमशक्तं मन्यते जनः ॥४९॥§

---

§ इस श्लोक के पश्चात् तीन प्रक्षिप्त श्लोक उपलब्ध होते हैं—

सोऽस्य दोषो न मन्तव्यः क्षमा हि परमं बलम् । क्षमा गुणो ह्यशक्तानां शक्तानां भूषणं क्षमा ॥१॥
क्षमा वशीकृतिर्लोके क्षमया किं न साध्यते । शान्तिखड्गः करे यस्य किं करिष्यति दुर्जनः ॥२॥
अतृणे पतितो वह्निः स्वयमेवोपशाम्यति । अक्षमावान् परं दोषैरात्मानं चैव योजयेत् ॥३॥

क्षमाशील पुरुष की क्षमा को दोष नहीं माना जाना चाहिए, क्योंकि क्षमा परम बल है । निर्बलों का यह गुण है और बलवानों का आभूषण है ॥१॥ इस जगत् में क्षमा वशीकरण है, क्षमा के द्वारा क्या सिद्ध नहीं हो सकता ! जिसके हाथ में शान्तिरूपी तलवार हो, दुष्ट उसका क्या बिगाड़ लेंगे ॥२॥ तृणरहित स्थान में पड़ी हुई अग्नि अपने-आप बुझ जाती है । क्षमारहित पुरुष अपने को और दूसरों को भी दोष का भागी बना लेता है ॥३॥

§ After this verse there are three interpolated verses—

(i) That defect of the forgiving persons, however, should not be taken into consideration because forgiveness is a great power. It is a virtue of the weak and an ornament of the strong. (ii) Forgiveness subdues all in this world—it is a talisman; what is there that forgiveness cannot achieve? What can a wicked person dc unto him who carries the sword of forgiveness in his hand ? (iii) Fire falling on a grassless ground is extinguished by itself. An unforgiving individual not only defiles himself but others also.

भावार्थ—क्षमाशील पुरुषों में एक ही दोष होता है, दूसरे किसी दोष की तो सम्भावना ही नहीं है। वह दोष यह है कि क्षमाशील मनुष्य को लोग असमर्थ समझने लगते हैं।

There is only one defect without a second in forgiving persons. The defect is that people consider a forgiving person to be weak.

एको धर्मः परं श्रेयः क्षमैका शान्तिरुत्तमा।
विद्यैका परमा तृप्तिरहिंसैका सुखावहा ॥५०॥

भावार्थ—केवल धर्म ही परम कल्याणकारक=मोक्षदायक है। एकमात्र क्षमा ही शान्ति का सर्वश्रेष्ठ उपाय है। अकेली विद्या ही परम सन्तोष देनेवाली है और एकमात्र अहिंसा ही सुख प्रदान करनेवाली है।

Righteousness (*Dharma*) is the one highest good which leads to salvation. Forgiveness is the only supreme way to peace. Knowledge alone gives contentment and benevolence, and Ahimsa (non-injury) alone gives happiness.

द्वाविमौ ग्रसते भूमिः सर्पो बिलशयानिव।
राजानं चाविरोद्धारं ब्राह्मणं चाप्रवासिनम् ॥५१॥

भावार्थ—जो राजा आक्रान्ता शत्रु से युद्ध नहीं करता और जो ब्राह्मण= संन्यासी उपदेशार्थ भ्रमण नहीं करता, इन दो को भूमि उसी प्रकार निगल लेती है, जैसे सर्प बिल में रहनेवाले चूहों को निगल जाता है।

Just as a serpent swallows the rats living in the holes, similarly the earth devoures these two, viz., a king who is incompetent to fight against an invader and a *Brāhmaṇa*—a *Sannyāsi* who does not move from one place to another for preaching.

***विशेष**—राजा शत्रु के साथ युद्ध नहीं करेगा तो अपने राज्य से हाथ धो बैठेगा और संन्यासी प्रवास न करेगा तो न उसकी विद्या बढ़ेगी और न उसका यश फैलेगा।*

***Note**—A king who does not fight against an invader will lose his kingdom and a sannyāsi, who does not move about for preaching, will neither acquire knowledge nor fame.*

द्वे कर्मणी नरः कुर्वन्नस्मिंल्लोके विरोचते।
अब्रुवन्परुषं किञ्चिदसतोऽनर्चयंस्तथा ॥५२॥

भावार्थ—किसी के प्रति भी कठोर वचन न बोलना और दुष्टों का आदर-सम्मान न करना—इन दो कर्मों को करता हुआ मनुष्य इस संसार में यश और गौरव पाता है ।

A man can attain glory and fame in this world by doing two things, viz. by refraining from harsh speech and by discarding those who are wicked.

***विशेष**—यहाँ धृतराष्ट्र को कहा जा रहा है कि युधिष्ठिर किसी के प्रति कठोर वचन नहीं बोलता, अतः उसका यश फैल रहा है । आप शकुनि आदि दुष्टों का आदर कर रहे हैं, इसलिए आपकी अपकीर्ति हो रही है ।*

***Note**—Here Dhṛtrāṣtra is being told that Yudhiṣthira does not use harsh words against anyone, therefore he is attaining fame. You are honouring the wicked like Śakuni etc., therefore, you are gaining notoriety everywhere.*

द्वाविमौ पुरुषव्याघ्र परप्रत्ययकारिणौ ।
स्त्रियः कामितकामिन्यो लोकः पूजितपूजकः ॥५३॥

भावार्थ—हे नरश्रेष्ठ ! दो व्यक्ति दूसरों पर विश्वास करके कार्य करनेवाले होते हैं—१. दूसरी स्त्री द्वारा चाहे गये पुरुष की कामना करनेवाली स्त्रियाँ और २. दूसरों के द्वारा पूजित मनुष्य का सम्मान करनेवाला मनुष्य ।

O the best among men ! these two do not have a will of their own, viz., those women who covet men simply because the latter are coveted by others of their sex and that person who regards another simply because the latter is worshipped by others.

***विशेष**—यहाँ धृतराष्ट्र को उद्‌बोधन दिया जा रहा है कि तुम कर्ण का आदर-सम्मान इसलिए कर रहे हो, क्योंकि आपका पुत्र दुर्योधन उसकी पूजा कर रहा है ।*

***Note**—Here Dhṛtrāṣtra is being told that you are regarding Karṇa because your son Duryodhana is worshiping him.*

द्वाविमौ कण्टकौ तीक्ष्णौ शरीरपरिशोषिणौ ।
यश्चाधनः कामयते यश्च कुप्यत्यनीश्वरः ॥५४॥

भावार्थ—शरीर को सर्वथा सुखा देनेवाले ये दो तीखे काँटे हैं—१. निर्धन होकर महत्त्वाकाँक्षी होना—बड़े-बड़े मनोरथ करना और २. असमर्थ होकर क्रोध करना।

These two are like the sharp thorns afflicting the body, viz., building castles in the air by a poor man and the anger of the incompetent.

विशेष—*'दुर्योधन असमर्थ होकर भी पाण्डवों पर क्रोध कर रहा है' यह ध्वनि श्लोक के चतुर्थ चरण से निकल रही है।*

Note—*Duryodhana is angery towords the Pāndavās even being weak. This is the implied meaning.*

द्वामिमौ न विराजेते विपरीतेन कर्मणा।
गृहस्थश्च निरारम्भः कार्यवाँश्चैव भिक्षुकः ॥५५॥

भावार्थ—अपनी मर्यादा के विपरीत कार्य करनेवाले ये दो प्रकार के मनुष्य संसार में सुशोभित नहीं होते—१. पुरुषार्थहीन अथवा उदासीन गृहस्थ और सांसारिक प्रपञ्च में फँसा हुआ संन्यासी।

These two persons never shine (become glorious) in this world because of their incompatible acts, viz., a house-holder who is indifferent or without exertion and a *Sannyāsi* who is indulging in worldly affairs.

विशेष—*यहाँ श्लोक के तृतीय चरण में विदुरजी ने धृतराष्ट्र की ओर संकेत किया है कि तुम कौरव-पाण्डवों के कलह-निवारण में उदासीन हो।*

गृहस्थी चलाने के लिए गृहस्थ को आजीविका-उपार्जन का कोई कार्य अवश्य करना चाहिए। संन्यासी को प्रपञ्च में न फँसकर लोक-कल्याण और आत्मचिन्तन में तत्पर रहना चाहिए।

Note—*Here Vidura points out to Dhṛtrāstra that you are indifferent to making peace between the Kuaravās and the Pāndavās.*

A house-holder should put himself under exertion to earn his livelihood. A Sannyāsi *should not indulge in worldly affairs, instead he should engage himself in self-realisation and welfare of others.*

द्वामिवौ पुरुषौ राजन् स्वर्गस्योपरि तिष्ठतः।
प्रभुश्च क्षमया युक्तो दरिद्रश्च प्रदानवान् ॥५६॥

भावार्थ—हे राजन् ! दो प्रकार के मनुष्य अत्यन्त आनन्दित रहते हैं—१. समर्थ होते हुए भी क्षमाशील और २. दरिद्र होकर भी दान देनेवाला।

O king ! Two types of persons live (as it were) in a region higher than the heaven itself, i.e. they are most happy, viz., a man possessed of power but at the same time endued with forgiveness and a poor man who is charitable.

विशेष—*इस श्लोक से यह ध्वनि निकल रही है कि पाण्डव शक्तिशाली होकर भी क्षमाशील हैं, अतः उनकी विजय निश्चित है।*

Note—*The implied meaning of the verse is that the Pāndavās are powerful, even then they are endued with forgiveness, therefore, their victory is certain.*

न्यायागतस्य द्रव्यस्य बौद्धव्यौ द्वावतिक्रमौ ।
अपात्रे प्रतिपत्तिश्च पात्रे चाप्रतिपादनम् ॥५७॥

भावार्थ—न्यायपूर्वक कमाये हुए धन के दो ही दुरुपयोग हैं—१. कुपात्र को तो दान देना, और २. सत्पात्र को कुछ न देना।

These are only two misuses of the wealth which is honestly earned, viz., making gifts to the unworthy and not to the worthy.

द्वावम्भसि निवेष्टव्यौ गले बध्वा दृढां शिलाम् ।
धनवन्तमदातारं दरिद्रं चातपस्विनम् ॥५८॥

भावार्थ—दो प्रकार के मनुष्यों के गले में बहुत बड़ा पत्थर बाँधकर उन्हें समुद्र में डुबो देना चाहिए—१. दान न देनेवाले धनिक को और २. पुरुषार्थ न करनेवाले अर्थात् कामचोर दरिद्र को।

These two should be thrown into the ocean, after tightly binding heavy stones to their necks, viz., a wealthy person who does not give alms and a poor man who does not exert himself and remains idle.

द्वाविमौ पुरुषव्याघ्र सूर्यमण्डलभेदिनौ ।
परिव्राड् योगयुक्तश्च रणे चाभिमुखो हतः ॥५९॥

भावार्थ—हे पुरुषश्रेष्ठ ! संसार में दो प्रकार के मनुष्य सूर्यमण्डल का भेदन करके ऊर्ध्वगति को प्राप्त होते हैं—१. योगाभ्यास में लगा हुआ संन्यासी और २. युद्ध में शत्रुओं के सम्मुख, पीठ न दिखाकर मारा गया योद्धा।

O the best among the men ! these two can pierce the orb of the sun, viz., a mandicant *(Sannyāsi)* accomplished in *Yoga* and a warrior who loses his life but does not run away from the battle field.

***विशेष**—शरीर में सूर्यचक्र पर ध्यान लगाने से समाधि सुलभ होती है और उससे मोक्ष की प्राप्ति होती है। धर्मयुद्ध में पीठ न दिखानेवाले को भी मोक्ष का अधिकारी माना गया है।*

***Note**—Meditating on* Suryachakra *(Sun-disc) in the body, a man attains* Samadhi, *by which he gets salvation. A person fallen in war is also liberated.*

त्रयोपाया मनुष्याणां श्रूयन्ते भरतर्षभ ।
कनीयान्मध्यमः श्रेष्ठ इति वेदविदो विदुः ॥६०॥

भावार्थ—हे भरतश्रेष्ठ ! संसार में मनुष्यों की कार्यसिद्धि के लिए उत्तम, मध्यम और अधम—ये तीन प्रकार के उपाय सुने जाते हैं, ऐसा वेदवेत्ता बताते हैं।

O the best among the *Bharata* race ! the persons well-versed in the *Vedas* say that men's means of accomplishment of an object are three-fold, i.e.—good, middle and bad.

***विशेष**—त्रयः+उपायाः='त्रयोपायाः' यह आर्ष सन्धि है।*

युद्ध द्वारा किसी को वश में करना अधम उपाय है। भेद और दान से वश में करना मध्यम तथा साम से वश में करना उत्तम उपाय है।

***Note**—To bring under control someone by means of battle is the lowest way, by* Bheda—*discremination and* Ḍāna—*by giving something is the medium way and by* Sāma—*by tranquillizing words is the best way.*

त्रिविधाः पुरुषा राजन्नुत्तमाधममध्यमाः ।
नियोजयेद्यथावत्ताँस्त्रिविधेष्वेव कर्मसु ॥६१॥

भावार्थ—हे राजन् ! संसार में तीन प्रकार के मनुष्य होते हैं—उत्तम, मध्यम और अधम । उन्हें यथायोग्य तीन ही प्रकार के कर्मों में नियुक्त करना चाहिए ।

O king ! there are three kinds of men—good, middle or indifferent and bad. They should, therefore, be respectively employed in that kind of work for which they may be fit.

***विशेष**—इस श्लोक से विदुर धृतराष्ट्र को संकेत कर रहे हैं कि तुमने कर्ण*

आदि को उत्तम कार्य पर नियुक्त किया हुआ है, जो अनुचित है।

***Note**—By this verse,* Viḍura *points out to* Dhṛtrāṣtra *that you have employed* Karṇa *etc., at high position, which is not good.*

त्रय एवाधना राजन् भार्या दासस्तथा सुतः ।
यत्ते समधिगच्छन्ति यस्य ते तस्य तद्धनम् ॥६२॥

भावार्थ—हे राजन् ! लोक में स्त्री, पुत्र और सेवक—ये तीनों धन के अधिकारी नहीं माने जाते। ये तीनों जो कुछ कमाते हैं, वह उसी का होता है, जिसके अधीन वे रहते हैं।

O king ! these three are not deemed to have wealth of their own, viz., the wife, the son and the slave or an employee. Whatever they earn would be his to whom they belong.

***विशेष**—राजकर्मचारी जो धन प्राप्त करता है, वह राज्य का होता है, अतः सेवक को अधन कहा गया है। पत्नी का धन पति से और पुत्र का पिता से विभक्त नहीं होता, इसलिए ये दोनों भी अधन हैं।*

यह श्लोक कुछ पाठभेद से मनुस्मृति ६/४१६ में भी उपलब्ध होता है।

***Note**—Whatever a state employee earns belongs to the state. The wealth of wife is not separate from that of the husband, and the wealth of the son is not divisible from that of the father, therefore, these two are also without their own wealth.*

This verse occurs in Manu (9/416) with a slight difference.

हरणं च परस्वानां परदाराभिमर्शनम् ।
सुहृदश्च परित्यागस्त्रयो दोषाः क्षयावहाः ॥६३॥

भावार्थ—निन्द्य उपायों से दूसरों के धन को छीन लेना, पर-स्त्रियों के साथ व्यभिचार करना और मित्र का परित्याग—ये तीनों दोष मनुष्य की आयु, धर्म और यश का विनाश करनेवाले हैं।

The three crimes shorten the life of a man, deny him of *Dharma* (righteousness) and bring a bad name to him, viz., snatching the property of the others by foul means, adultry with others' wives and deceiving his friends.

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः ।
कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत् ॥६४॥

भावार्थ—काम, क्रोध और लोभ—ये तीनों आत्मा को अधोगति में ले-जानेवाले और नरक=दु:ख के द्वार हैं, अतः बुद्धिमान् को चाहिए कि इन तीनों को त्याग दे।

These three, besides being destructive to one's ownself, are the gates to the hell, viz., lust, anger and covetousness. Therefore, the wise man should give up all of them.

***विशेष**—यह श्लोक गीता १६/२१ में भी उपलब्ध है।*

***Note**—This verse also occures in Gita (16.21)*

वरप्रदानं राज्यं च पुत्रजन्म च भारत ।
शत्रोश्च मोक्षणं कृच्छ्रात्त्रीणि चैकं च तत्समम् ॥६५॥

भावार्थ—हे भरतश्रेष्ठ ! किसी को अभिलषित पदार्थों का दान, राज्य की प्राप्ति और पुत्र का जन्म—ये तीनों बातें एक ओर और शत्रु को कष्ट से छुड़ाना—यह एक ओर, वे तीन और यह एक बराबर ही हैं।

O the best among the *Bharata* race ! liberating a foe from distress alone amounts in point of merit to these three taken together, viz., conferring a boon to the needy, acquiring a kingdom and obtaining a son.

भक्तं च भजमानं च तवास्मीति च वादिनम् ।
त्रीनेताञ्शरणं प्राप्तान्विषमेऽपि न सन्त्यजेत् ॥६६॥

भावार्थ—पूर्व के भक्त, वर्तमान के सेवक और 'मैं तुम्हारा हूँ' ऐसा कहनेवाले—इन तीन प्रकार के शरणागतों को संकट आने पर भी नहीं छोड़ना चाहिए।

These three refugees should never be forsaken even in great danger, viz., an old devotee (follower), one who is serving at present and who seeks protection, saying—'I am thine.'

चत्वारि राज्ञा तु महाबलेन
वर्ज्यान्याहुः पण्डितस्तानि विद्यात् ।
अल्पप्रज्ञैः सह मन्त्रं न कुर्यान्
न दीर्घसूत्रै रभसैश्चारणैश्च ॥६७॥

भावार्थ—महाशक्तिशाली राजा के लिए भी चार कर्म त्यागने योग्य बताये गये हैं, बुद्धिमान् राजा को उन्हें जानना चाहिए। विद्वान् राजा को चाहिए कि वह मूर्खों, दीर्घसूत्रियों, जोशीलों अथवा विचारशून्यों और भाटों के साथ मन्त्रणा= परामर्श न करे।

Four acts are said to be forsaken even by a king with power and might. A wise king should know them. He should never consult with these four, viz., men of small sense (foolish persons), men that are procrastinating (slow in action), men that are very enthusiastic or who are thoughtless and men that are flatterers.

विशेष—*इस श्लोक में 'रभसैः' के स्थान पर 'अलसैः' पाठ भी उपलब्ध होता है। इसका अर्थ होगा आलसी के साथ भी विचार न करे। चारणैः का सन्धिविच्छेद च+अरणैः ऐसा भी हो सकता है। तब अर्थ होगा—युद्ध-भीरुओं के साथ भी मन्त्रणा न करे। 'चारणैः' के स्थान पर पाठभेद है 'अशनैः'। तब अर्थ होगा भोजनभट्टों के साथ भी मन्त्रणा न करे।*

Note—*In the verse the word अलसैः is found in place of रभसैः. In that case the meaning would be that he should not consult with slothful (lazy) men. The word चारणैः can be split as च+अरणैः—then the meaning would be that he should not consult with men fearful of fight. For चारणैः there is the substitute अशनैः—then the meaning would be that he should not consult with gluttons.*

चत्वारि ते तात गृहे वसन्तु
श्रियाभिजुष्टस्य गृहस्थधर्मे ।
वृद्धो ज्ञातिरवसन्नः कुलीनः
सखा दरिद्रो भगिनी चानपत्या ॥६८॥

भावार्थ—हे भ्रातः! गृहस्थधर्म में स्थित धन-धान्य से भरपूर आपके घर में चार प्रकार के व्यक्ति अवश्य रहने चाहिएँ—१. बूढ़ा सम्बन्धी, २. कष्ट में पड़ा हुआ कुलीन, ३. धनहीन मित्र और ४. सन्तानहीन बहिन।

O sire ! crowned with prosperity and leading the life of a house-holder, let these four kinds of persons must dwell in your house, viz., old consanguineous, high-born person fallen into adversity, poor friends and chitoless sisters.

***विशेष**—कुटुम्ब का वृद्ध घर में रहेगा तो कुलधर्म, कुलमर्यादा का उपदेश करता रहेगा। संकटग्रस्त कुलीन घर में रहेगा तो बालकों को आचार की शिक्षा देता रहेगा तथा आश्रयदाता की वृद्धि की कामना करेगा। मित्र हित की बात कहेगा। निस्सन्तान बहिन भाई के बच्चों से प्रेम और घर की रक्षा करेगी।*

***Note**—If old consanguineous will remain in the home, he will teach the young generation about the family conduct, ideals and traditions. High born person fallen into adversity will teach morality to the boys and will pray for the well-being of the patron. The friend will offer advise for his good. Chitoless sister will love the children and protect the home.*

चत्वार्याह महाराज सद्यस्कानि बृहस्पतिः।
पृच्छते त्रिदशेन्द्राय तानीमानि निबोध मे ॥६९॥
देवतानां च संकल्पमनुभावं च धीमताम्।
विनयं कृतविद्यानां विनाशं पापकर्मणाम् ॥७०॥

भावार्थ—हे राजेन्द्र ! देवराज इन्द्र के पूछने पर देवगुरु बृहस्पति ने जिन चार बातों को तत्काल फल देनेवाला बताया था, उन्हें आप मुझसे सुनिए, वे हैं—१. देवों का संकल्प, २. बुद्धिमानों का वर्चस्व (प्रभाव), ३. विद्वानों की विनम्रता और ४. दुर्गुणों का परित्याग अथवा पापियों का संहार—ये चारों तत्काल फल देनेवाले होते हैं।

O mighty king ! on being asked by the chief of the celestials—Indra, the preceptor of the gods, *Bṛhaspati* declared four things that are capable of fructifying immediately, listen to them from me. They are—the resolve of the gods, influence of the intelligent persons, the humility of the learned men and renunciation of evil habits or destruction of the sinner.

चत्वारि कर्माण्यभयंकराणि
भयं प्रयच्छन्त्ययथाकृतानि।
मानाग्निहोत्रमुत मानमौनं
मानेनाधीतमुत मानयज्ञः ॥७१॥

भावार्थ—शास्त्रानुकूल किया गया अग्निहोत्र, शास्त्रानुकूल किया गया मौन,

शास्त्रविधि के अनुसार किया गया अध्ययन और शास्त्रानुसार किया गया यज्ञ—ये चार कर्म अभय देनेवाले हैं, परन्तु शास्त्रविपरीत किये जाने पर ये ही भय देनेवाले हो जाते हैं। शास्त्रानुकूल किये गये अग्निहोत्रादि उत्तम फलदायक होते हैं, परन्तु मान=दम्भ=दिखावे के लिए किये जाने पर वे सब अनर्थकारी हो जाते हैं।

The four acts that are performed to remove fear, bring on fear when they are improperly performed, viz., the *Agni-hoṭra* (pouring oblations in the fire), in accordance with the scriptures, the vow of silence according to *Sastrās*, study in accordance with scriptures and *Yajña*—any good deed for the benefit of the society. The *Agni-hoṭra* etc. when performed according to *Śastra* bear good fruit but when they are performed with vanity or conceit they become harmful.

पञ्चाग्नयो मनुष्येण परिचर्याः प्रयत्नतः।
पिता माताऽग्निरात्मा च गुरुश्च भरतर्षभ ॥७२॥

भावार्थ—हे भरतश्रेष्ठ ! पिता, माता, अग्निहोत्र, आत्मा और गुरु—इन पाँच अग्नियों की मनुष्य को प्रयत्नपूर्वक सेवा करनी चाहिए।

O the best among the *Bharata* race ! father, mother, *Agni-hotra*, soul and preceptor—these five fires should be worshipped with regard by a person.

विशेष—*आत्मा शब्द से आत्मा=अपना आपा, परमात्मा और अतिथि आदि का ग्रहण भी हो सकता है। अग्नि से परमात्मा और अग्निहोत्र दोनों का ग्रहण हो सकता है।*

Note—*The word आत्मा may mean आत्मा=Soul (the self), God and अतिथि (the guests etc.). The word Agni can denote God and Agni-hotra (pouring oblations in the fire).*

पञ्चैव पूजयँल्लोके यशः प्राप्नोति केवलम्।
देवान्पितॄन्मनुष्याँश्च भिक्षूनतिथिपञ्चमान् ॥७३॥

भावार्थ—देव=विद्वान्; पितर=माता-पिता आदि; मनुष्य=वृद्धजन, पाप-रोगी—कोढ़ी आदि अथवा लूले-लँगड़े, असहाय, दीन-दुःखी; भिक्षु=संन्यासी और अतिथि=अकस्मात् घर पर पधारे व्यक्ति—इन पाँच की पूजा=आदर-सत्कार, सेवा करनेवाला मनुष्य संसार में महान् यश पाता है।

By serving five kinds of persons i.e., *Deva*—learned persons; *Piṭara*—father, mother, teacher and the like; *Manuṣya*—old persons, leper etc.; maimed and crippled, humble and distressed; *Sannyāsins* and *Aṭithi's* (guests—who come by chance, no date is fixed of whose coming and going), men attain great fame and glory in this world.

पञ्च त्वानुगमिष्यन्ति यत्र यत्र गमिष्यसि ।
मित्राण्यमित्रा मध्यस्था उपजीव्योपजीविनः ॥७४॥

भावार्थ—हे राजन् ! आप जहाँ-जहाँ भी जाओगे, वहाँ-वहाँ मित्र, शत्रु, उदासीन, आश्रय देनेवाले और आश्रय पानेवाले—ये पाँच आपके साथ अवश्य रहेंगे ।

O king ! where-ever you will go, these five will follow you, viz., friends, foes, those that are indifferent, shelter providers and those who want refuge.

पञ्चेन्द्रियस्य मर्त्यस्य छिद्रं चेदेकमिन्द्रियम् ।
ततोऽस्य स्रवति प्रज्ञा दृतेः पात्रादिवोदकम् ॥७५॥

भावार्थ—नेत्रादि पाँच ज्ञानेन्द्रियोंवाले मनुष्य की यदि एक भी इन्द्रिय में दोष उत्पन्न हो जाए, रूपादि का चस्का लग जाए तो उसकी बुद्धि उसी प्रकार नष्ट हो जाती है, जैसे मशक से पानी चू जाता है ।

Out of the five sense-organs (eye, ear, nose, tongue, skin) of a man, if there is a leak in any one of them, then from that single hole all his intelligence runs out just like water runs out from a perforated leathern vessel.

विशेष—*इसी भाव से मिलता-जुलता श्लोक मनु० २/९९ में है ।*

Note—*A verse resembling in meaning like this is found in Manu. (2.99) also.*

षड् दोषाः पुरुषेणेह हातव्या भूतिमिच्छता ।
निद्रा तन्द्रा भयं क्रोध आलस्यं दीर्घसूत्रता ॥७६॥

भावार्थ—ऐश्वर्य अथवा कल्याण चाहनेवाले मनुष्य को इस संसार में निद्रा, तन्द्रा=ऊँघते रहना, भय, क्रोध, आलस्य और दीर्घसूत्रता—ये छह दुर्गुण त्याग देने चाहिएँ ।

These six faults should be avoided by a person who wishes to

attain prosperity and happiness in this world viz., sleep, drowsiness, fear, anger, laziness and procrastination.

षडेव तु गुणाः पुंसा न हातव्याः कदाचन ।
सत्यं दानमनालस्यमनसूया क्षमा धृतिः ॥७७॥§

भावार्थ—सत्य भाषण, दान देना, पुरुषार्थ करना, चुग़ली न करना (ईर्ष्या न करना), क्षमाशीलता और धैर्य—इन छह गुणों का त्याग मनुष्य को कदापि नहीं करना चाहिए ।

Verily, the following six qualities should never be forsaken by men, viz., truthfulness, charity, diligence, non-backbiting or jealousy, forgiveness and patience.

षडिमान् पुरुषो जह्याद् भिन्नां नावमिवार्णवे ।
अप्रवक्तारमाचार्यमनधीयानमृत्वजम् ॥७८॥
अरक्षितारं राजानं भार्यां चाप्रियवादिनीम् ।
ग्रामकामं च गोपालं वनकामं च नापितम् ॥७६॥

भावार्थ—जैसे समुद्र में टूटी हुई नौका को त्याग दिया जाता है, उसी प्रकार इन छह व्यक्तियों को भी छोड़ देना चाहिए—१. न पढ़ानेवाले अथवा उपदेश न देनेवाले आचार्य को २. स्वाध्याय न करनेवाले अथवा मन्त्रोच्चारण न करनेवाले ऋत्विक् को, ३. रक्षा न करनेवाले राजा को, ४. दुर्भाषिणी व व्यभिचारिणी पत्नी को ५. ग्राम में रहने की इच्छावाले ग्वाले को और ६. वन में रहने की इच्छावाले नाई को ।

These six should be renounced like a broken boat in the sea, viz., a preceptor who cannot expound the scriptures (who cannot teach), a priest who is illiterate, a king who is unable to defend, a wife who is disloyal, a cow-herd who does not want to go to the fields, instead who wishes to remain in the village, and a barber who wishes to live in woods instead of a village.

विशेष—*अनेक बार 'च' का प्रयोग पादपूर्ति के लिए हुआ है । अप्रियवादिनी का अर्थ है व्यभिचारिणी । अप्रियवादो व्यभिचारः । जो पर-पुरुषों के साथ व्यभिचार*

---

§ अन्य संस्करणों में यह श्लोक ८१ संख्या पर है । संगति की दृष्टि से हमने इसे पहले रख दिया है।
In other editions this verse is 81. But because of consistency we have put it here.

करे और रोकने पर पति को जली-कटी सुनाये, ऐसी स्त्री अप्रियवादिनी है।

***Note**—अप्रियवादिनी means an adulteress. अप्रियवादो व्यभिचारः A wife who commits adultery and when prevented by the husband, **abuses** him, such a women is called अप्रियवादिनी।*

अर्थागमो नित्यमरोगिता च
प्रिया च भार्या प्रियवादिनी च।
वश्यश्च पुत्रोऽर्थकरी च विद्या
षड् जीवलोकस्य सुखानि राजन्॥८०॥

भावार्थ—हे राजन्! धन की प्राप्ति, सदा नीरोग रहना, पत्नी का लावण्यमयी और मधुरभाषिणी होना, पुत्र का आज्ञाकारी होना और धन प्राप्त करानेवाली अथवा समझकर पढ़ी गयी विद्या–ये छह इस संसार में सुख प्रदान करनेवाले हैं।

O king ! these six, comprise the happiness of men viz., acquirement of wealth, uninterrupted sound health, a good-looking and beloved wife with sweet-speech, an obedient son and knowledge that is lucrative or the knowledge which is learnt by knowing its meaning.

आरोग्यमानृण्यमविप्रवासः
सद्भिर्मनुष्यैः सह सम्प्रयोगः।
स्वप्रत्यया वृत्तिरभीतवासः
षड् जीवलोकस्य सुखानि राजन्॥८१॥

भावार्थ—हे राजन्! नीरोगता, ऋणी न होना, परदेश में न रहना, सज्जन मनुष्यों के साथ मेल-जोल होना, अपने अधीन आजीविका होना, निर्भय होकर रहना—ये छह संसार के सुख हैं।

O king ! sound health, debtlessness, not living in foreign lands, companionship with good men, certainty as regards to the means of livelihood and living without fear—these six conduce to the happiness of men.

***विशेष**—अन्य संस्करणों में यह श्लोक ८६वाँ है। विषय की दृष्टि से इसे उचित स्थान पर रख दिया है। नीरोगता दोनों में समान है। श्लोक-संख्या ८० में 'प्रिया' और 'प्रियवादिनी' में विशिष्ट भेद प्रतीत नहीं होता, अतः श्लोक*

असंगत-सा लगता है। पूना-संस्करण में इन दोनों श्लोकों को प्रक्षिप्त माना है।

In other editions this verse is 89. But because of consistency we h ve put it at its proper place. 'नीरोगता' is similar in both of the verses. In the previous verse there is no special difference between 'प्रिया' and 'प्रियवादिनी'. Therefore, the verse seems to be inconsistent. According to Poona edition both the verses are later interpolations.

षण्णामात्मनि नित्यानामैश्वर्यं योऽधिगच्छति।
न स पापैः कुतोऽनर्थैर्युज्यते विजितेन्द्रियः ॥८२॥

भावार्थ—जो मनुष्य आत्मा या चित्त में रहनेवाले काम, क्रोध, शोक, मोह, मद और मान—इन छह पर अधिकार प्राप्त कर लेता है, इन्हें वश में कर लेता है, वह जितेन्द्रिय पापों से युक्त नहीं हो सकता, फिर भला उनसे उत्पन्न होनेवाले अनर्थों या कष्टों से युक्त होने की तो बात ही क्या है ?

He who brings under his control the six—i.e. lust, anger, sorrow, attachment, vanity and self-conceit, which are always present in the human heart, and thus becomes the master of his senses never commits sins and therefore, can never suffer from calamities.

***विशेष**—श्लोक में निर्दिष्ट छह से तात्पर्य नीलकण्ठ के अनुसार काम, क्रोध, शोक, मोह, मद और मान हैं। मनसहित पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ भी छह हो सकते हैं। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य भी छह हो सकते हैं।*

***Note**—According to Nilkantha the purport of six is lust, anger, sorrow, attachment, vanity and self-conceit. Five sense-organs and mind can also be taken by the word six. Lust, anger, greed, attachment, vanity and jealousy can also be six.*

षडिमे षट्सु जीवन्ति सप्तमो नोपलभ्यते।
चोराः प्रमत्ते जीवन्ति व्याधितेषु चिकित्सकाः ॥८३॥
प्रमदाः कामयानेषु यजमानेषु याजकाः।
राजा विवदमानेषु नित्यं मूर्खेषु पण्डिताः ॥८४॥

भावार्थ—वक्ष्यमाण—आगे कहे जानेवाले छह व्यक्ति छह प्रकार के व्यक्तियों के आश्रय पर जीवन निर्वाह करते हैं, सातवाँ ऐसा नहीं मिलता जो अन्य किसी के आश्रय पर जीता हो। १. चोर—प्रमादी=असावधान पुरुषों के आश्रय पर, २. वैद्य

रोगियों पर, ३. वेश्याएँ कामियों पर ४. पुरोहित यजमानों पर, ५. राजा लड़ाई-झगड़ा करनेवालों पर और ६. पण्डित=विद्वान् मूर्खों के आश्रय पर जीते हैं।

The following six may be seen to subsist upon other six. There is no seventh who depends on some other. These are—thieves upon persons who are careless, physicians on persons that are ailing, prostitutes upon persons suffering from lust, the priests upon their *Yajamāna*—the institutor of a sacrifice (who pour oblations in the fire), a king upon persons that quarrel and lastly men of learning upon them who are without it.

षडिमानि विनश्यन्ति मुहूर्तमनवेक्षणात् ।
गावः सेवा कृषिर्भार्या विद्या वृषलसङ्गतिः ॥८५॥

भावार्थ—थोड़ी देर की भी लापरवाही से—गौएँ, सेवा, खेती, स्त्री, विद्या और नीच पुरुष की संगति—ये छह नष्ट हो जाती हैं।

These six are instantly destroyed, if neglected, viz., kine, service—the work which is under the supervision of servants, agriculture, a wife, learning and the company of a base person.

विशेष—*'भार्या' शब्द यहाँ सामान्य स्त्रियों के लिए प्रयुक्त हुआ है। नीचों की मित्रता तो होती ही अस्थायी है। निरन्तर अभ्यास न करने से विद्या नष्ट हो जाती है। ऐसी ही स्थिति गौ, खेती आदि की भी है।*

Note—*The word 'Bhāryā' (भार्या) in the verse is used for ordinary woman. The company of a base person is verily unstable. If not revised the learning is destroyed. The similar is the case with other things like kine and agriculture.*

षडेते ह्यवमन्यन्ते नित्यं पूर्वोपकारिणम् ।
आचार्यं शिक्षिताः शिष्याः कृतदाराश्च मातरम् ॥८६॥
नारीं विगतकामास्तु कृतार्थाश्च प्रयोजकम् ।
नावं निस्तीर्णकान्तारा आतुराश्च चिकित्सकम् ॥८७॥

भावार्थ—वक्ष्यमाण—आगे कहे जानेवाले छह व्यक्ति प्रायः अपने पूर्व-उपकारी का सदा तिरस्कार किया करते हैं—१. शिक्षा प्राप्त कर लेने पर शिष्य आचार्य का, २. विवाह हो जाने पर पुत्र माता का ३. कामवासना की तृप्ति हो जाने पर कामीजन नारी का, ४. कृतकार्य मनुष्य सहायक का ५. नदी पार कर

लेनेवाला मनुष्य नौका का और ६. स्वस्थ हो जाने पर रोगी वैद्य का।

These six forget those who have bestowed obligations on them, viz., educated disciples forget their preceptors, married persons their mothers, the lustful person whose desires are gratified forget women, they who have achieved success forget those who had rendered help, they who have crossed a river forget the boat (which carried them over) and the patients who have been cured forget their physicians.

विशेष—श्लोक में पठित 'तु' और अनेक बार 'च' पादपूर्ति के लिए हैं।

ईर्ष्युर्घृणी न सन्तुष्टः क्रोधनो नित्यशङ्कितः।
परभाग्योपजीवी च षडेते नित्यदुःखिताः ॥८८॥

भावार्थ—ईर्ष्या करनेवाला, घृणा करनेवाला, असन्तोषी, क्रोधी, सदा शंका करनेवाला और दूसरे के आश्रय पर जीनेवाला—ये छह नित्य दुःखी रहते हैं।

These six are always miserable, viz., the envious, the malicious, the discontended, the hot-tempered, the ever suspicious and those who depend upon others or depend upon the fortune of others.

सप्त दोषाः सदा राज्ञा हातव्या व्यसनोदयाः।
प्रायशो यैर्विनश्यन्ति कृतमूला अपीश्वराः ॥८९॥
स्त्रियोऽक्षा मृगया पानं वाक्पारुष्यं च पञ्चमम्।
महच्च दण्डपारुष्यमर्थदूषणमेव च ॥९०॥

भावार्थ—स्त्रियों में आसक्ति, जुआ खेलना, शिकार खेलना, शराब पीना, कठोर भाषण, अत्यन्त कठोर दण्ड और धन का दुरुपयोग करना—ये सात दुःखोत्पादक दोष राजा को सदा छोड़ देने चाहिएँ, क्योंकि इन दोषों के कारण प्रायः दृढ़मूल राजा भी नष्ट हो जाते हैं।

A king should renounce these seven faults which are productive of calamity, because they bring the ruin of those monarchs also who are firmly established, viz., attachment with women, gambling, hunting, drinking, harshness of speech, severity of punishment and misuse of wealth.

अष्टौ पूर्वनिमित्तानि नरस्य विनशिष्यतः।
ब्राह्मणान् प्रथमं द्वेष्टि ब्राह्मणैश्च विरुध्यते ॥९१॥

ब्राह्मणस्वानि चादत्ते ब्राह्मणाँश्च जिघांसति ।
रमते निन्दया चैषां प्रशंसां नाभिनन्दति ॥६२॥
नैनान् स्मृति कृत्येषु याचितश्चाभ्यसूयति ।
एतान्दोषान्नरः प्राज्ञो बुध्येद् बुद्ध्वा विसर्जयेत् ॥६३॥

भावार्थ—विनष्ट होनेवाले मनुष्य के आठ चिह्न=निशानियाँ होते हैं—१. वह ब्राह्मणों से मन में द्वेष करता है, २. फिर ब्राह्मणों का कर्म द्वारा विरोध करता है, ३. ब्राह्मणों का धन हड़पता है, ४. ब्राह्मणों की हत्या करना चाहता है, ५. ब्राह्मणों की निन्दा से प्रसन्न होता है, ६. ब्राह्मणों की प्रशंसा को पसन्द नहीं करता, ७. उत्सव, यज्ञ-यागादि धार्मिक कृत्यों में इन्हें बुलाता नहीं है और ८. ब्राह्मणों के याचना करने पर कुढ़ता है । बुद्धिमान् मनुष्य को चाहिए कि इन दोषों को समझे और समझकर छोड़ दे ।

These eight are the immediate indications of a man destined to destruction, viz., hating the *Brāhmaṇās* in the heart, disputing with the *Brāhmaṇās* in deed, appropriation of the *Brāhmaṇās'* possessions, taking the life of the *Brāhmaṇās,* taking pleasure in reviling the *Brāhmaṇās,* grieving to hear the praises of the *Brāhmaṇās,* forgetting them on ceremonious occasions and repining when they ask for anything. A wise man should understand these transgressions and understanding renounce them.

अष्टाविमानि हर्षस्य नवनीतानि भारत ।
वर्तमानानि दृश्यन्ते तान्येव स्वसुखान्यपि ॥६४॥
समागमश्च सखिभिर्महाँश्चैव धनागमः ।
पुत्रेण च परिष्वङ्गः सन्निपातश्च मैथुने ॥६५॥
समये च प्रियालापः स्वयूथ्येषु समुन्नतिः ।
अभिप्रेतस्य लाभश्च पूजा च जनसंसदि ॥६६॥

भावार्थ—हे भरतकुलश्रेष्ठ ! मित्रों के साथ मिलाप, विपुल धन की प्राप्ति, पुत्र का आलिंगन, मैथुन में पति-पत्नी—दोनों का साथ-साथ निवृत्त होना, समय पर अवसरानुकूल और मधुर बोलना (अथवा प्रियजनों के साथ बातचीत), अपने

वर्ग में उन्नति, अभीष्ट वस्तु की प्राप्ति और जनसमाज में मान-सम्मान—ये आठ हर्ष के सार दिखाई देते हैं और ये ही अपने लौकिक सुख के भी साधन होते हैं।

O *Bhārata* ! these eight are the very cream of happiness and these are the only means for prosperity in this world, viz., meeting with friends, acquisition of immence wealth, embracing a son, full satisfaction of husband and wife after intercourse, speaking sweet words at the right occasion or conversation with friends at proper times, advancement in one's own class or party, the acquisition of what was most cherished and respect in the society.

नवद्वारमिदं वेश्म त्रिस्थूणं पञ्चसाक्षिकम् ।
क्षेत्रज्ञाधिष्ठितं विद्वान् यो वेद स परः कविः ॥६७॥

भावार्थ—जो विद्वान् नौ द्वारोंवाले, तीन खम्भोंवाले, पाँच साक्षियोंवाले, जीवात्मा के निवास-स्थान इस शरीररूपी गृह को भली-भाँति जानता है, वही श्रेष्ठ ज्ञानी अर्थात् ब्रह्मवित् है।

The learned man who knows the abode of the soul—the human body which has nine gates, three pillars and five witnesses, is truly a wise man.

***विशेष**—दो आँख, दो कान, दो नासा-छिद्र, एक मुख, दो मल और मूत्र के छिद्र—ये नौ द्वार हैं। सत्त्व, रजस् और तमस्—ये तीन खम्भे हैं। शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध—ये पाँच साक्षी हैं।*

***Note**—Two eyes, two ears, two holes of the nostril, one mouth, the hole of the anus and penis—these are nine doors. Sattava, Rajas and Ṭamas i.e. goodness, passion and darkness or virtue, foulness and ignorance—are three pillars. Sound, tangibility, shape or colour, flavour and smell—these five are witnesses.*

दश धर्मं न जानन्ति धृतराष्ट्र निबोध तान् ।
मत्तः प्रमत्त उन्मत्तः श्रान्तः क्रुद्धो बुभुक्षितः ॥६८॥
त्वरमाणश्च लुब्धश्च भीतः कामी च ते दश ।
तस्मादेतेषु भावेषु न प्रसज्जेत पण्डितः ॥६९॥

भावार्थ—हे धृतराष्ट्र ! दस मनुष्य धर्म के तत्त्व को नहीं जानते। उनके नाम सुनो। वे दस ये हैं—१. नशे में चूर, २. असावधान, ३. पागल, ४. थका

हुआ, ५. क्रोधी, ६. भूख से पीड़ित, ७. उतावला=जल्दबाज़, ८. लोभी, ६. डरा हुआ और १०. कामी । इसलिए बुद्धिमान् मनुष्य को चाहिए कि इनसे लगाव न रक्खे ।

O *Dhṛtrāṣtra* ! these ten do not know what *Dharma* (virtue) is. Listen their names from me. They are—intoxicated, inattentive, the mad, the fatigued, the angry, the hungery, the hasty, the covetous, the frightened and the lustful. Therefore, he who is wise should not keep company with them.

अत्रैवोदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम् ।
पुत्रार्थमसुरेन्द्रेण गीतं चैव सुधन्वना ॥१००॥

भावार्थ—पूर्वोक्त विषयों के सम्बन्ध में इस पुराने इतिहास को सुनाते हैं, जिसे असुरों के स्वामी प्रह्लाद ने सुधन्वा के साथ अपने पुत्र को उपदेशरूप में कहा था ।

In this connection is cited the old story with sermon which transpired between *Sudhanva* and *Prahlāḍa*—The chief of Ausurās, in relation to the latter's son.

विशेष—*आगे उपदेश तो है, परन्तु इतिहास नहीं है, अतः यह श्लोक प्रक्षिप्त (Interpolation) है ।*

Note—*There is sermon ahead, but no history. Therefore, the verse is a later interpolation.*

यः काममन्यू प्रजहाति राजा
पात्रे प्रतिष्ठापयते धनं च ।
विशेषविच्छ्रुतवान् क्षिप्रकारी
तं सर्वलोकः कुरुते प्रमाणम् ॥१०१॥

भावार्थ—जो राजा काम और मन्यु=क्रोध को त्याग देता है, जो सुपात्र को दान देता है, जो ऊँच-नीच को जाननेवाला है, जो शास्त्रज्ञ और शीघ्रकारी है, ऐसे व्यक्ति के व्यवहार और वचनों को सब लोग प्रमाण मानते हैं ।

The king who renounces lust and anger, who bestows wealth upon proper recipients, who is discriminating, learned and active, is regareded as an authority by all men.

विशेष–*(पात्रे प्रतिष्ठापयते धनं च) पात्र को दान देना धन की प्रतिष्ठा है। मन्यु और क्रोध में अन्तर है। होशयुक्त क्रोध का नाम मन्यु है और यह गुण है। सुध-बुध खोकर आपे से बाहर हो जाना क्रोध है और यह दुर्गुण है।*

श्लोक ६६ में 'त्वरमाणः' शब्द आया है और इस श्लोक में क्षिप्रकारी। इन दोनों में भी अन्तर है। जो व्यक्ति किसी कार्य को विधि-विधान से अल्प समय में कर लेता है, उसे 'क्षिप्रकारी' कहते हैं; यह गुण है। त्वरमाण का अर्थ है जल्दबाज़। जो कार्य का आगा-पीछा, ऊँच-नीच जाने बिना ही उसमें प्रवृत्त हो जाता है, उसे 'त्वरमाण' कहते हैं; यह दोष है।

Note—*'पात्रे प्रतिष्टापयते धनं च' bestowing wealth upon proper recipients is the real establishment (proper use) of wealth. There is difference between 'मन्यु' and 'क्रोध'. The anger with sense is 'मन्यु' and it is a quality. Losing all awareness and selfcontrol is 'क्रोध' and it is a vice.*

In the verse 99 there occurs the word 'त्वरमाणः' and in this verse we have 'क्षिप्रकारी'. There is a difference in these two also. The man who accomplishes any work with rules and regulations in a very short time is called 'क्षिप्रकारी'. It is a virtue. The word 'त्वरमाणः' means hasty. One who indiscriminately puts himself into some work, he is called 'त्वरमाणः' (hasty). It is a vice.

जानाति विश्वासयितुं मनुष्यान
विज्ञातदोषेषु दधाति दण्डम् ।
जानाति मात्रां च तथा क्षमां च
तं तादृशं श्रीर्जुषते समग्रा ॥१०२॥

भावार्थ—जो राजा मनुष्यों को विश्वास दिलाना जानता है, जो अपराध प्रमाणित हो जाने पर अपराधियों को दण्ड दे सकता है, जो अपराध के अनुसार दण्ड की मात्रा तथा क्षमा करना भी जानता है, उसे सम्पूर्ण सम्पत्ति प्राप्त होती है, लक्ष्मी उसकी चरण-चेरी बनकर उसकी सेवा करती है।

Great prosperity serves that king like a slave who knows how to inspire confidence in others, who inflicts punishment on those whose guilt has been proved, who is acquainted with the proper

measure of punishment and who knows when mercy is to be shown.

सुदुर्बलं नावजानाति कञ्चिद्
युक्तो रिपुं सेवते बुद्धिपूर्वम् ।
न विग्रहं रोचयते बलस्थैः
काले च यो विक्रमते स धीरः ॥१०३॥

भावार्थ—जो किसी दीन-हीन व्यक्ति का भी अपमान नहीं करता, सदा सावधान रहकर शत्रु के साथ बुद्धिपूर्वक व्यवहार करता है, बलवानों के साथ लड़ाई- झगड़ा पसन्द नहीं करता और समय आने पर पराक्रम दिखाता है, वही धीर है।

He is a self-possessed person who does not disregard even a very weak and humble person, who proceeds with intelligence and care in the matter of a foe who is anxiously watching for an opportunity, who does not desire hostilities with persons stronger than himself and who displays his prowess at proper time.

प्राप्यापदं न व्यथते कदाचि-
दुद्योगमन्विच्छति चाप्रमत्तः ।
दुःखं च काले सहते महात्मा
धुरन्धरस्तस्य जिताः सपत्नाः ॥१०४॥

भावार्थ—जो धुरन्धर महापुरुष आपत्ति पड़ने पर कभी दुःखी नहीं होता, अपितु प्रमादरहित होकर उद्योग का आश्रय लेता है और समय पड़ने पर दुःख भी सह लेता है, उसके शत्रु तो पराजित ही हैं।

That illustrious person who does not grieve when a calamity befalls on him, who exerts with all his collected senses, who bears misery patiently when in distress, is really the foremost of persons and all his foes are already vanquished.

अनर्थकं विप्रवासं गृहेभ्यः
पापैः सन्धिं परदाराभिमर्शम् ।
दम्भं स्तैन्यं पैशुनं मद्यपानं
न सेवते यः स सुखी सदैव ॥१०५॥

भावार्थ—जो मनुष्य बिना प्रयोजन के प्रवास में नहीं रहता, पापियों से मेल-जोल नहीं रखता, पर-स्त्रीगमन नहीं करता, दम्भ, चोरी, चुग़ली और मदिरापान नहीं करता—वह सदा सुखी रहता है।

He, who does not live away from home uselessly, who does not make friendship with sinful persons, who never indulges with another's wife, who never betrays arrogance and who never commits a theft, who neither back-bites nor indulges in drinking, is always happy.

न संरम्भेणारभते त्रिवर्ग-
माकारितः शंसति तत्त्वमेव।
न मात्रार्थे रोचयते विवादं
नापूजितः कुप्यति चाप्यमूढः ॥१०६॥

भावार्थ—बुद्धिमान् पुरुष जोश में आकर धर्म, अर्थ और काम—इस त्रिवर्ग का आरम्भ नहीं करता, कोई बात पूछे जाने पर यथार्थ ही कहता है, थोड़ी-सी बात के लिए लड़ाई-झगड़ा पसन्द नहीं करता और यथेष्ट आदर-मान न पाने पर भी क्रोध नहीं करता।

He, who never strives boastfully to attain virtue, wealth and desire—the three objects of human persuit, who when asked tells the truth, who does not quarrel over trifles and who never becomes angry even if he is not well-honoured, is reckoned as wise.

न योऽभ्यसूयत्यनुकम्पते च
न दुर्बलः प्रातिभाव्यं करोति।
नात्याह किञ्चित्क्षमते विवादं
सर्वत्र तादृग्लभते प्रशंसाम् ॥१०७॥

भावार्थ—जो ईर्ष्या और क्रोध नहीं करता अपितु दया करता है, दुर्बल होकर किसी का विरोध नहीं करता अथवा किसी की ज़मानत नहीं देता, बढ़-चढ़कर बातें नहीं करता और विवाद की उपेक्षा करता है, ऐसा मनुष्य सर्वत्र प्रशंसा पाता है।

He, who neither bears malice towards others, nor becomes angry, but is kind to all, who being weak never quarrels with others or does not stand as surety for anyone, who does not speak arrogantly and

avoids controversy, is praised every where.

यो नोद्धतं कुरुते जातु वेषं
न पौरुषेणापि विकत्थतेऽन्यान् ।
न मूर्च्छितः कटुकान्याह कञ्चित्
प्रियं सदा तं कुरुते जनो हि ॥१०८॥

भावार्थ—जो कभी भी उजड्ड, बेढंगा, गँवारू वेष नहीं बनाता, दूसरों के समक्ष अपने पराक्रम की श्लाघा नहीं करता, क्रोध से व्याकुल होकर भी किसी को कटुवचन नहीं कहता—ऐसे मनुष्य से सभी लोग सदा प्रेम करते हैं।

The man who never assumes a haughty mien, does not boast of his valour in the presence of others, agitated even by anger never speaks harsh words to others—is ever loved by all.

न वैरमुद्दीपयति प्रशान्तं
न दर्पमारोहति नास्तमेति ।
न दुर्गतोऽस्मीति करोत्यकार्यं
तमार्यशीलं परमाहुरार्याः ॥१०९॥

भावार्थ—जो शान्त हुए वैर को फिर नहीं भड़काता, जो गर्व नहीं करता, जो अपने को हीन भी नहीं जताता, 'मैं विपत्ति में पड़ा हूँ' ऐसा कहकर जो अधर्म-कार्य नहीं करता, उसे आर्यजन अत्यन्त आर्यशील=श्रेष्ठ आचरणवाला कहते हैं।

He, who arouses not calm hostilities, who behaves neither arrogantly nor with too much humility, 'I am in distress'—saying so who does not commit improper acts, is considered by respectable men as a person of good conduct—a noble man.

न स्वे सुखे वै कुरुते प्रहर्षं
चान्यस्य दुःखे भवति विषादी ।
दत्त्वा न पश्चात्कुरुतेऽनुतापं
स कथ्यते सत्पुरुषार्यशीलः ॥११०॥

भावार्थ—जो अपने सुख में फूलकर कुप्पा नहीं हो जाता, जो दूसरे के दुःख

में दुःखी हो जाता है, जो दान देकर बाद में पश्चात्ताप नहीं करता, वह सत्पुरुष आर्यशील कहलाता है।

He, who never exults at his own happiness and becomes sad in the misery of others, who does not repent after giving charity, is said to be a man of good nature and conduct.

देशाचारान् समयाञ्जातिधर्मान्
बुभूषते यः स परावरज्ञः।
स यत्र तत्राभिगतः सदैव
महाजनस्याधिपत्यं करोति ॥१११॥

भावार्थ—जो मनुष्य विभिन्न देशों के व्यवहारों को, नियमों और भाषाओं को तथा जातियों के विभिन्न आचारों को तत्त्वरूप से जानता है, वह परावरज्ञ= विवेकी है। वह जहाँ कहीं भी चला जाए, जनसमूह को अपने वश में करके उनपर राज्य करता है, सभी उसका आदर-सम्मान करते हैं।

He, who has a knowledge of the customs of different countries, and also the rules and languages of different nations and usages of different orders of men, is a discreet person—he knows at once all i.e. high and low. Wherever he may go, he is sure to gain sway over public and rules them. He is respected and adored by all.

दम्भं मोहं मत्सरं पापकृत्यं
राजद्विष्टं पैशुनं पूगवैरम्।
मत्तोन्मत्तैर्दुर्जनैश्चापि वादं
यः प्रज्ञावान् वर्जयेत्स प्रधानः ॥११२॥

भावार्थ—जो बुद्धिमान् पाखण्ड, मोह, मात्सर्य, पापाचार, राजा के साथ वैर, चुगलखोरी, जनसमुदाय से वैर, मत्त, उन्मत्त और दुर्जनों के साथ वाद-विवाद को त्याग देता है, वह श्रेष्ठ होता है।

The prudent person who relinquishes hypocrisy (performing of religious ceremony in order to cheat the public), folly, jealousy, sinful acts, disloyalty towards the king, crookedness of behaviour, enemity with many and also quarrelling with men that are drunk, mad and wicked, is the foremost of his species.

दानं शौचं दैवतं मङ्गलानि
प्रायश्चित्तान् विविधाँल्लोकवादान् ।
एतानि यः कुरुते नैत्यिकानि
तस्योत्थानं देवता राधयन्ति ॥११३॥

भावार्थ—जो व्यक्ति दान देना, बाहर और अन्दर की पवित्रता रखना, यज्ञादि करना, शुभ कर्मों का अनुष्ठान, प्रायश्चित, अनेक प्रकार के लौकिक आचार-व्यवहारों का सेवन—इन नित्य करने योग्य कर्मों को करता है, देवता=विद्वान् और दिव्य शक्तियाँ उसे उत्कर्ष=उन्नति की ओर ले-जाती हैं ।

The very gods—learned men and divine powers bestow prosperity upon him and lead him towards excellence who does the following deeds daily, viz., gives charity, purifies himself inworldly and outworldly, performs *Agnihoṭra,* performs auspicious rites, repents for his bad deeds and performs rites of universal observance.

समैर्विवाहं कुरुते न हीनैः
समैः सख्यं व्यवहारं कथां च ।
गुणैर्विशिष्टाँश्च पुरो दधाति
विपश्चितस्तस्य नयाः सुनीताः ॥११४॥

भावार्थ—जो अपने बराबरवालों के साथ विवाह-सम्बन्ध करता है, हीनों के साथ नहीं; मैत्री, लेन-देन और बातचीत भी अपने बराबरवालों से ही करता है; जो गुणों में श्रेष्ठों को आगे रखता है, उस विवेकी की नीतियाँ उत्तम नीतियाँ हैं ।

The policies of that learned man are good policies—his policies are successful who forms matrimonial alliances with persons of equal position and not with those that are inferior, who talks, behaves and makes friendship with persons of equal position, who places those before him who are more qualified—thinks them as his ideal.

मितं भुंक्ते संविभज्याश्रितेभ्यो
मितं स्वपित्यमितं कर्म कृत्वा ।
ददात्यमित्रेष्वपि याचितः सं-
स्तमात्मवन्तं प्रजहत्यनर्थाः ॥११५॥

भावार्थ—जो अपने आश्रित सेवकादि को यथायोग्य बाँटकर भोजन, वस्त्र आदि का अल्पमात्रा में उपभोग करता है, जो बहुत कार्य, भारी परिश्रम करके भी थोड़ा सोता है, जो माँगने पर शत्रु को भी धन देता है, अनर्थ=आपत्तियाँ, कष्ट, दुःखादि उस मनस्वी के पास नहीं फटकते।

The calamities and sufferings always keep themselves aloof from that person, who has his soul under his control—who is determined, who eats after accordingly dividing the food amongst his dependents, uses the clothing etc., in small quantity, who sleeps little after working much and who when solicited gives away unto his foes also.

चिकीर्षितं विप्रकृतं च यस्य
नान्यं जनाः कर्म जानन्ति किञ्चित्।
मन्त्रे गुप्ते सम्यगनुष्ठिते च
नाल्पोऽप्यस्य च्यवते कश्चिदर्थः ॥११६॥

भावार्थ—जिस मनुष्य के सोचे और चाहे हुए तथा बिगड़े हुए कार्य के विषय में दूसरे लोग कुछ भी नहीं जान पाते, जिसकी मन्त्रणा के गुप्त विचारों को कार्य के भली-भाँति पूर्ण हो जाने पर ही दूसरे जान पाते हैं, पहले नहीं, ऐसे व्यक्ति का कोई भी कार्य बिगड़ता नहीं है, उसके सब कार्य ठीकरूप से सिद्ध होते हैं।

The man whose well planned and spoiled works are never known to others, whose counsels are well-kept and become known to others only when they are carried out into practice, his works are never spoiled—he succeeds in all his objects.

यः सर्वभूतप्रशमे निविष्टः
सत्यो मृदुर्मानकृच्छुद्धभावः।
अतीव स ज्ञायते ज्ञातिमध्ये
महामणिर्जात्य इव प्रसन्नः ॥११७॥

भावार्थ—जो सब प्राणियों को शान्ति देने में लगा हुआ है, जो सत्यवादी, कोमलस्वभाव, दूसरों का आदर करनेवाला और पवित्र विचारोंवाला है, वह व्यक्ति अपनी जातिवालों में वैसे ही बड़ा माना जाता है, जैसे उत्तम खान में उत्पन्न हुई

चमकदार महामणि श्रेष्ठ मानी जाती है।

He who is intent upon bestowing peace upon all creatures, who is truthful and tender-hearted, who respects others and is pure in mind, shines among his kinsmen like a precious gem of the purest ray having its origion in an excellent mine.

य आत्मनाऽपत्रपते भृशं नरः
स सर्वलोकस्य गुरुर्भवत्युत।
अनन्ततेजाः सुमनाः समाहितः
स तेजसा सूर्य इवावभासते॥११८॥

भावार्थ—जो मनुष्य बिना किसी के बताये अपनी भूल को जानकर अत्यधिक लज्जित रहता है, वह सारे संसार का गुरु बन सकता है। वह अनन्त तेजवाला, प्रसन्नचित्त, शुद्ध हृदय और स्थिर बुद्धिवाला मनुष्य अपने तेज से सूर्य की भाँति चमकता है।

That man, who without being told by another, himself knowing his fault, feels ashamed, becomes the preceptor of the whole wrold—he is highly honoured among all men. He, who is possessed of immense lusture, cheerful mind, pure-heart and steady intellect, shines with energy like the very sun.

***विशेष**—प्रह्लाद द्वारा अपने पुत्र के प्रति दिये हुए उपदेश को सुनाकर विदुरजी धृतराष्ट्र को मर्म की बात कहते हैं—*

***Note**—After relating* Prahalāda's *sermon to his son,* Viḍura *says to* Dhṛtrāṣtra *striking at the vital point—*

वने जाताः शापदग्धस्य राज्ञः
पाण्डोः पुत्राः पञ्च पञ्चेन्द्रकल्पाः।
त्वयैव बाला वर्धिताः शिक्षिताश्च
तवादेशं पालयन्त्याम्बिकेय॥११९॥

भावार्थ—हे अम्बिका के पुत्र धृतराष्ट्र! पाण्डु रोगरूपी शाप=बीमारी से मृत महाराज पाण्डु के वन में उत्पन्न हुए ये पाँचों पुत्र पाँच इन्द्रों के समान तेजस्वी हैं। आपने ही इन बालकों को पाल-पोसकर बड़ा किया और आपने ही इन्हें शिक्षित भी किया है। ये भी सदा आपके आदेश का पालन करते हैं।

O son of *Ambika—Dhṛtrāṣtra* ! the king *Pāndu* consumed by jaundice, had five sons born unto him in the woods. These are like five *Indrās*. You have brought up these children and taught them everything. They are also obedient to your commands.

प्रदायैषामुचितं तात राज्यं
सुखी पुत्रैः सहितो मोदमानः ।
न देवानां नापि च मानुषाणां
भविष्यसि त्वं तर्कणीयो नरेन्द्र ॥१२०॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि प्रजागरपर्वणि विदुरनीतिवाक्ये त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ।

॥ इति विदुरनीतौ (विदुरप्रजागरे) प्रथमोऽध्यायः ॥

भावार्थ—हे भाई ! पाण्डवों को उनका न्यायोचित राज्यभाग देकर आप अपने पुत्रों के साथ सुखी और प्रसन्न रहो । हे नरेन्द्र ! ऐसा करने पर देव और मनुष्य कोई भी तुमपर अंगुली न उठा सकेगा, तुम किसी की भी आलोचना के पात्र नहीं बनोगे, अपितु तुम सबकी दृष्टि में न्यायकारी सिद्ध होओगे ।

O sire ! by giving them back their just share of the kingdom, be happy and cheerful with your sons. O monarch ! by doing so no person learned and ordinary will point a censuring finger towards you. You will be above criticism and will be proved just.

॥ यह विदुरनीति (विदुरप्रजागर) का प्रथम अध्याय सम्पूर्ण हुआ ॥

Here ends the first chapter of Viḍura-Niti.

अथ द्वितीयोऽध्यायः—Second Chapter

धृतराष्ट्र उवाच

जाग्रतो दह्यमानस्य यत्कार्यमनुपश्यसि ।
तद् ब्रूहि त्वं हि नस्तात धर्मार्थकुशलो ह्यसि ॥१॥

भावार्थ—धृतराष्ट्र बोले—हे भाई ! चिन्ता के कारण जागते हुए और निरन्तर सन्तप्त होते हुए मेरे लिए तुम जो कर्त्तव्य कर्म उचित समझते हो, वह मुझे बताओ, क्योंकि तुम हम सबमें धर्म और राजनीति में प्रवीण हो ।

Dhṛtrāṣtra said—O sire *Viḍura* ! tell me what may be done by a person like me who is sleepless and burning with anxieties, because among us you alone are well-versed in both religion and politics.

त्वं मां यथावद् विदुर प्रशाधि
प्रज्ञापूर्वं सर्वमजातशत्रोः ।
यन्मन्यसे पथ्यमदीनसत्त्व
श्रेयस्करं ब्रूहि तद्वै कुरूणाम् ॥२॥

भावार्थ—हे उदारचित्त विदुर ! जिसे तुम अजातशत्रु युधिष्ठिर के लिए हितकारक और कुरुओं के लिए कल्याणकारी समझो, वह सब मुझे अवश्य बताओ ।

O magnanimous hearted *Viḍura* ! advise me wisely. Tell me what you deem to be beneficial for *Ajātśatru Yudhisthra* and what is productive of good to the *Kurus*.

पापाशङ्की पापमेवानुपश्यन्
पृच्छामि त्वां व्याकुलेनात्मनाऽहम् ।
कवे तन्मे ब्रूहि सर्वं यथावन्
मनीषितं सर्वमजातशत्रोः ॥३॥

भावार्थ—पाप=अनिष्ट की आशंकावाला और परिणाम में पाप को ही देखता हुआ, व्याकुल चित्त से मैं तुमसे पूछता हूँ, हे विद्वन् ! युधिष्ठिर क्या चाहता है, य सब मुझे ठीक-ठीक बताओ ।

Apprehending future evils and in consequence looking evil only, I ask you with anxious heart, O learned one ! tell me what exactly is in *Ajātśatru's* (*Yudhiṣthira's*) mind.

विदुर उवाच

शुभं वा यदि वा पापं द्वेष्यं वा यदि वा प्रियम् ।
अपृष्टस्तस्य तद् ब्रूयाद्यस्य नेच्छेत्पराभवम् ॥४॥
तस्माद् वक्ष्यामि ते राजन् हितं यत्स्यात्कुरून् प्रति ।
वचः श्रेयस्करं धर्म्यं ब्रुवतस्तन्निबोध मे ॥५॥

भावार्थ—विदुरजी ने कहा—मनुष्य जिसका पराजय अथवा हानि न चाहता हो उसे बिना पूछे भी अच्छी या बुरी, कल्याणकारक अथवा अनिष्टकारक—जो भी बात हो, वह बता दे ।

इसलिए हे राजन् ! जो बात कौरवों के लिए हितकारक होगी, मैं वही बात आपसे कहूँगा । मैं जो कल्याणकारी और धर्मानुकूल वचन कह रहा हूँ, उन्हें आप ध्यान देकर सुनो और समझो ।

Viḍura said—Even if unasked, one should speak truly, whether his words may be good or bad, hateful or pleasing, unto him whose defeat or loss one does not wish.

O king ! therefore, I shall say, what is good for the *Kurus*. What I am going to say is both beneficial and consistant with morality. Listen to me attentively and get the point.

मिथ्योपेतानि कर्माणि सिद्ध्येयुर्यानि भारत ।
अनुपायप्रयुक्तानि मा स्म तेषु मनः कृथाः ॥६॥
तथैव योगविहितं यत्तु कर्म न सिध्यति ।
उपाययुक्तं मेधावी न तत्र ग्लपयेन्मनः ॥७॥

भावार्थ—हे भरतकुलभूषण ! छलयुक्त द्यूत आदि से और असद् उपायों

(अन्यायपूर्ण युद्ध आदि) से (जो परिणाम में दुःखरूप हों) जो कार्य सिद्ध हो, ऐसे कार्यों में मन मत लगाओ।

ठीक उसी प्रकार उत्तम उपायों से प्रयत्नपूर्वक किये जाने पर भी जो कार्य सिद्ध न हो, उसके लिए भी बुद्धिमान् मनुष्य अपने मन में दुःखी न हो।

O the best among the race of *Bharata* ! do not set your heart upon means of success that are unjust and improper. (Like deceitful gambling and unjust war etc., which bring distress and sorrow in consequence).

Similarly, if by applying fair and proper means, one does not succeed in attaining his goal, a man of intelligence must not grieve over it.

विशेष—*पाश्चात्यों का सिद्धान्त है—उत्तम उद्देश्य की पूर्ति के लिए निकृष्ट साधनों का प्रयोग भी उचित है, परन्तु वैदिक राजनीति में कुशल विदुरजी का कहना है कि हीन साधनों से प्राप्त होनेवाली सिद्धि की इच्छा मत करो।*

Note—*According to Western philosophy in order to achieve good end, unfair means are also just. But well-versed in Vedic politics* Viḍura *says that do not wish for the success attained through unjust and improper means.*

अनुबन्धानवेक्षेत सानुबन्धेषु कर्मसु ।
सम्प्रधार्य च कुर्वीत न वेगेन समाचरेत् ॥८॥
अनुबन्धं च सम्प्रेक्ष्य विपाकाँश्चैव कर्मणाम् ।
उत्थानमात्मनश्चैव धीरः कुर्वीत वा न वा ॥९॥

भावार्थ—किसी प्रयोजन से किये जानेवाले कार्यों में पहले प्रयोजन का विचार कर लेना चाहिए। अच्छी प्रकार सोच-विचारकर ही कोई कार्य आरम्भ करना चाहिए, जल्दबाज़ी में, बिना सोचे-समझे कोई कार्य नहीं करना चाहिए।

धैर्यवान् मनुष्य को चाहिए कि पहले कर्मों के प्रयोजन और उनके परिणाम= फल को भली-भाँति विचार ले, फिर अपना उद्योग करे अथवा न करे।

Before one engages in an act, one should consider the competence of the agent, the nature of the act itself and its purpose, because all acts are dependent on these. Considering these, one should begin an act and should not take it upon a sudden impulse.

He, who is firm and wise, should either do an act or desist from it fully considering his own ability, the nature of the act and also the consequences of the success.

यः प्रमाणं न जानाति स्थाने वृद्धौ तथा क्षये ।
कोशे जनपदे दण्डे न स राज्येऽवतिष्ठते ॥१०॥
यस्त्वेतानि प्रमाणानि यथोक्तान्यनुपश्यति ।
युक्तो धर्मार्थयोर्ज्ञाने स राज्यमधिगच्छति ॥११॥

भावार्थ—जो राजा दुर्गादि की स्थिति, लाभ-हानि, कोश, देश और सेना अथवा राज्य-व्यवस्था के विषय में यथावत् ज्ञान नहीं रखता, वह अपने राज्य से भ्रष्ट हो जाता है ।

जो राजा पूर्वकथित दुर्गादि के विषय में ठीक-ठीक ज्ञान रखता है और धर्म तथा अर्थ=राजनीति के ज़ान में भी संलग्न है, वह राज्य प्राप्त करता है ।

The king who does not know properly about his forts, gain or loss, treasury, proportion or measure as regards his territory, his army and polity cannot retain his kingdom for long i.e. he loses his kingdom.

On the other hand, the king, who is fully acquainted with the measure of the aforesaid treatises i.e. forts, gain and losses etc., and is possessed of the knowledge of religion and polity, can retain his kingdom.

न राज्यं प्राप्तमित्येव वर्तितव्यमसाम्प्रतम् ।
श्रियं ह्यविनयो हन्ति जरा रूपमिवोत्तमम् ॥१२॥

भावार्थ—'अब तो राज्य प्राप्त हो ही गया है'—ऐसा सोचकर, गर्व में चूर होकर राजा को अनुचित व्यवहार नहीं करना चाहिए, क्योंकि जैसे बुढ़ापा सुन्दर रूप को नष्ट कर देता है, उसी प्रकार अविनय=उद्दण्डता अथवा अनीति राज्यलक्ष्मी को नष्ट कर देती है ।

'Now I have gained the kingdom', thinking so and being proudy a king should not behave improperly, because just as old-age ruins the charm of the body, similarly immodesty or immorality destroys the kingdom.

भक्ष्योत्तमप्रतिछन्नं मत्स्यो बडिशमायसम् ।
लोभाभिपाती ग्रसते नानुबन्धमवेक्षते ॥१३॥

भावार्थ—लोभ के वशीभूत हुई मछली खाने योग्य उत्तम वस्तु से ढके हुए लोहे के काँटे को निगल जाती है, परन्तु उससे होनेवाले परिणाम पर विचार नहीं करती, अतएव जीवन से हाथ धो बैठती है ।

The fish which is caught in greed swallows the iron-hook which is covered with delicious feed, it does not think its consequence, and therefore, loses its life.

विशेष—*जो मनुष्य आरम्भ में सुखदायी, परन्तु अन्त में अनिष्टकारी कर्म का विचार नहीं करता, वह मछली के समान मृत्यु का ग्रास बन जाता है ।*

Note—*The man who does not think over the act which is pleasing in the beginning but harmful in the end, he like the fish becomes a morsel of death.*

यच्छक्यं ग्रसितुं ग्रस्यं ग्रस्तं परिणमेच्च यत् ।
हितं च परिणामे यत्तदाद्यं भूतिमिच्छता ॥१४॥

भावार्थ—जो निगलने योग्य पदार्थ निगला (खाया) जा सके और निगला हुआ पच भी जाए तथा पचने पर जो हितकारी भी हो, अपना कल्याण चाहनेवाले को ऐसा पदार्थ ही निगलना=खाना चाहिए ।

The food which can be swallowed and after swallowing which may be digested and after digestion which should be beneficial for the health, only such a substance should be eaten by a person who wishes his welfare.

विशेष—*विदुरजी संकेत से धृतराष्ट्र से कह रहें हैं कि कौरवों द्वारा पाण्डवों का जो राज्य छल से हड़पा गया है, वह पचेगा नहीं और पच भी गया तो उसका परिणाम अनिष्टकारी होगा । यदि कल्याण की इच्छा है तो उनका राज्य उन्हें लौटा दो ।*

Note—Here Viḍura *is pointing to king* Dhṛtrāṣtra *that* Kuru's *have snatched the kingdom of the* Pāndavā's *by fraud, which will not be digested and even if it is digested, its result will be adverse. If you desire your own welfare, return their kingdom and be happy.*

वनस्पतेरपक्वानि फलानि प्रचिनोति यः ।
स नाप्नोति रसं तेभ्यो बीजं चास्य विनश्यति ॥१५॥
यस्तु पक्वमुपादत्ते काले परिणतं फलम् ।
फलाद्रसं स लभते बीजाच्चैव फलं पुनः ॥१६॥

भावार्थ—जो मूर्ख वृक्ष से कच्चे फलों को तोड़ लेता है, उसे उन फलों से रस की प्राप्ति नहीं होती और बीज भी नष्ट हो जाता है।

परन्तु जो बुद्धिमान् समय पर तैयार हुए पके फलों को ग्रहण करता (तोड़ता) है, वह उन फलों से रस भी प्राप्त करता है और समय पर बीज से पुनः फल भी प्राप्त करता है।

The foolish person who plucks the raw fruits from the tree, does not get juice from them and the seed is also destroyed.

On the other hand, the intelligent man who plucks the ripe fruits at the proper time, gets juice from those fruits and the seeds again get fruits, when the time comes.

यथा मधु समादत्ते रक्षन् पुष्पाणि षट्पदः ।
तद्वदर्थान्मनुष्येभ्य आदद्यादविहिंसया ॥१७॥

भावार्थ—जैसे भौंरा फूलों को हानि न पहुँचाता हुआ उनसे रस प्राप्त कर लेता है, वैसे ही राजा को चाहिए कि प्रजाओं को पीड़ा दिये बिना उनसे कर ग्रहण करे।

Just like a black bee which without harming the flowers, gets juice from them, similarly a king should receive taxes from the subjects without oppressing them.

पुष्पं पुष्पं विचिन्वीत मूलच्छेदं न कारयेत् ।
मालाकार इवारामे न यथाङ्गारकारकः ॥१८॥

भावार्थ—जैसे उद्यान का रक्षक माली उद्यान से एक-एक फूल को चुनता है, कोयला बनानेवाले के समान वृक्ष को जड़ से नहीं काटता, उसी प्रकार राजा प्रजा की रक्षापूर्वक ही उनसे कर ग्रहण करे, प्रजा का समूलोच्छेद न करे।

Just as a gardener—the protector of a garden plucks every flower carefully, does not cutdown the tree from the very root like a

charcoal-burner, similarly the king should receive taxes protecting his subjects. He should not destroy his subjects root and branch.

किन्नु मे स्यादिदं कृत्वा किन्नु मे स्यादकुर्वतः ।
इति कर्माणि सञ्चिन्त्य कुर्याद्वा पुरुषो न वा ॥१६॥

भावार्थ— इस कार्य को करने से मुझे क्या लाभ होगा अथवा न करने से मेरी क्या हानि होगी', इस प्रकार कर्मों के विषय में भली-भाँति सोच-विचारकर मनुष्य कर्मों को करे अथवा न करे ।

'What shall I gain by doing this act and what shall I lose by not doing it', in this way a man after thinking deeply should or should not do the acts.

अनारभ्या भवन्त्यर्थाः केचिन्नित्यं तथागताः ।
कृतः पुरुषकारो हि भवेद्येषु निरर्थकः ॥२०॥
काँश्चिदर्थान्नरः प्राज्ञो लघुमूलान्महाफलान् ।
क्षिप्रमारभते कर्तुं न विघ्नयति तादृशान् ॥२१॥

भावार्थ—कुछ कार्य स्वभाव से ही करने योग्य नहीं होते (जैसे प्रबल शत्रु के साथ युद्ध), वैसे ही जिन कर्मों में किया हुआ पुरुषार्थ निष्फल होता है, वे भी त्याज्य होते हैं ।

बुद्धिमान् मनुष्य साधारण उपायों से सिद्ध होनेवाले, परन्तु महाफल प्रदान करनेवाले कार्यों को शीघ्र आरम्भ कर देता है, उनमें विलम्ब नहीं होने देता ।

There are some acts which should not be done by nature, viz., war with a strong foe, similarly the acts in which the valour is wasted in vain, they are also renounceable.

A wise man at once begins, without delay, the acts which can be accomplished with ordinary means, but in the end yield great fruit.

प्रसादो निष्फलो यस्य क्रोधश्चापि निरर्थकः ।
न तं भर्तारमिच्छन्ति षण्ढं पतिमिव स्त्रियः ॥२२॥§
ऋजुः पश्यति यः सर्वं चक्षुषानुपिबन्निव ।
आसीनमपि तूष्णीकमनुरज्यन्ति तं प्रजाः ॥२३॥

§ पूना-संस्करण में यह श्लोक नहीं मिलता ।

भावार्थ—जिस राजा की प्रसन्नता=कृपा और क्रोध—दोनों निष्फल हों, प्रजाएँ उस राजा को उसी प्रकार नहीं चाहतीं, जिस प्रकार स्त्रियाँ नपुंसक पति को नहीं चाहतीं।

जो राजा सम्पूर्ण प्रजा को दया-दृष्टि से निहारता है, मानो आँखों से पीना चाहता है, ऐसे राजा के चुपचाप बैठे रहने पर भी प्रजा उससे प्रेम करती है।

The king whose compassion and wrath both are fruitless, the subjects of his state do not like that king, just as women do not like an impotent man.

The king who has an attitude of kindness towards al! his subjects—who looks towards his subjects with heart's content, the subjects also love such a king even if he remains quiet—takes no measures for the upliftment of the subjects.

सुपुष्पितः स्यादफलः फलितः स्याद् दुरारुहः ।
अपक्वः पक्वसंकाशो न तु शीर्येत कर्हिचित् ॥२४॥§

भावार्थ—राजा को उस वृक्ष की भाँति होना चाहिए जो फूलों से लदा हुआ हो, परन्तु फलों से रहित हो। यदि फल बहुत हों तो उसपर चढ़ा न जा सके और कच्चा होने पर भी पक्के के समान प्रतीत हो। ऐसा करने पर वह राजा कभी भी नष्ट नहीं हो सकता।

The king should be like that tree which is laden with flowers, but without fruits—being passionate he should not be very liberal. If it (the tree) is laden with fruits it should be unmountable i.e. if the king is generous he should be beyond the control of his servants. Even if unripe, it should show itself as if fully ripe—the king even if powerless from within he should present himself as if he is the most strong. The king, who behaves in this manner, is never vanquished.

चक्षुषा मनसा वाचा कर्मणा च चतुर्विधम् ।
प्रसादयति लोकं यस्तं लोकोऽनुप्रसीदति ॥२५॥

भावार्थ—जो राजा दयादृष्टि से, हितचिन्तन से, मधुर भाषण से और दान आदि कर्म से—इन चार प्रकार से प्रजाओं को प्रसन्न रखता है, प्रजाएँ भी उसे प्रसन्न रहती हैं।

§ पूना-संस्करण के अनुसार यह श्लोक पीछे से मिलाया गया है।

The king who keeps his subjects happy in four ways viz., by looking after them affectionately, by well-wishing, by speaking sweet words, and by giving alms generously—the subjects also like such a king.

यस्मात् त्रस्यन्ति भूतानि मृगव्याधान्मृगा इव ।
सागरान्तामपि महीं लब्ध्वा स परिहीयते ॥२६॥

भावार्थ—जिस राजा से प्रजाएँ व्याध से मृग के समान भयभीत होती हैं, वह सारे भूमण्डल का राज्य प्राप्त करके भी नष्ट हो जाता है ।

Where the subjects feel frightened of the king, just as the animals are afraid of a hunter, such a king even after gaining the kingdom of the whole universe, is completely ruined.

पितृपैतामहं राज्यं प्राप्तवान् स्वेन कर्मणा ।
वायुरभ्रमिवासाद्य भ्रंशयत्यनये स्थितः ॥२७॥

भावार्थ—अपने बाप-दादों का राज्य पाकर भी अनीति में स्थित राजा अपने कर्मों से उसे ऐसे ही नष्ट-भ्रष्ट कर देता है, जैसे वायु मेघ को प्राप्त होकर उसे छिन्न-भिन्न कर देता है ।

Even after obtaining the kingdom of his fore-fathers, the king who is immoral—who is unjust and whose policies are not for the betterment of the public, completely ruins his kingdom by his own deeds, just as the wind disperses the clouds.

धर्ममाचरतो राज्ञः सद्भिश्चरितमादितः ।
वसुधा वसुसम्पूर्णा वर्धते भूतिवर्धिनी ॥२८॥
अथ सन्त्यजतो धर्ममधर्मं चानुतिष्ठतः ।
प्रतिसंवेष्टते भूमिरग्नौ चर्माहितं यथा ॥२९॥

भावार्थ—परम्परा से श्रेष्ठ पुरुषों द्वारा आचरित धर्म का अनुष्ठान करनेवाले राजा का धन-धान्य से पूर्ण राज्य ऐश्वर्य बढ़ानेवाला होकर निरन्तर बढ़ता रहता है।

और धर्म को तिलाञ्जलि देकर अधर्म का आचरण करनेवाले राजा का राज्य ऐसे सिकुड़ जाता है, जैसे आग में डाला हुआ चमड़ा सिकुड़ जाता है।

The kingdom, with wealth and plenty brings more prosperity and goes on ever increasing of that king who acts upon the religious

duties which are followed by the good persons from the very beginning of the world.

And the kingdom of that king who renounces the virtue—religion and takes to immorality—does evil deeds, shrinks in the same way just as the leather is contracted when it is put in the fire.

य एव यत्नः क्रियते परराष्ट्रविमर्दने ।
स एव यत्नः कर्तव्यः स्वराष्ट्रपरिपालने ॥३०॥

भावार्थ—राजा को चाहिए कि शत्रु-राष्ट्र को नष्ट करने के लिए वह जैसा प्रयत्न करता है, उसे न करके वैसा ही प्रयत्न अपने राष्ट्र के पालन-पोषण और रक्षण के लिए करे ।

The attempts which a king makes in order to destroy the foe's kingdom, refraining from them, he should put himself whole-heartedly in the upbringing and protecting his own kingdom.

धर्मेण राज्यं विन्देत धर्मेण परिपालयेत् ।
धर्ममूलां श्रियं प्राप्य न जहाति न हीयते ॥३१॥

भावार्थ—राजा को चाहिए कि वह धार्मिक उपायों से राज्य को प्राप्त करे और धार्मिक साधनों से ही उसकी पूर्णरूप से रक्षा भी करे, क्योंकि धर्ममूलक राज्यलक्ष्मी को पाकर न वह राजा उस ऐश्वर्य को छोड़ता है और न वह ऐश्वर्य उस राजा को छोड़ता है ।

A king should acquire a kingdom by virtuous—religious means only and he should also protect his kingdom completely by religious means, because after gaining a kingdom, which is based upon religion neither the king renounces that kingdom, nor the kingdom leaves that king.

अप्युन्मत्तात्प्रलपतो बालाच्च परिजल्पतः ।
सर्वतः सारमादद्यादश्मभ्य इव काञ्चनम् ॥३२॥
सुव्याहृतानि सूक्तानि सुकृतानि ततस्ततः ।
सञ्चिन्वन् धीर आसीत शिलाहारी शिलं यथा ॥३३॥

भावार्थ—पागल, असम्बद्ध बोलनेवाले, बालक और वाचाल=बकवास करनेवाले—सबसे सार ग्रहण करना चाहिए, जैसे पत्थरों में से सोना प्राप्त किया

जाता है।

जैसे शिलाहारी (खेत कट जाने पर एक-एक बाली को चुननेवाला) एक-एक बाली को बीनता है, ऐसे ही धीर पुरुष को जहाँ-तहाँ से उत्तम रीति से उच्चारण किये गये पाण्डित्यपूर्ण वचनों, सूक्तियों और सत्कर्मों का संग्रह करते रहना चाहिए।

Just as gold is obtained from the stones, in the same way a man should draw out essence from—a mad, an irrelevant speaker, a boy (an innocent person) and a talkative.

Just as the gleaner (who collects the remnants of grains left over after harvesting) picks up every ear of corn, similarly a patient man should accumulate well-spoken scholarly-words, good-sayings and virtuous acts.

गन्धेन गावः पश्यन्ति वेदैः पश्यन्ति ब्राह्मणाः।
चारैः पश्यन्ति राजानश्चक्षुर्भ्यामितरे जनाः ॥३४॥

भावार्थ—गौएँ अपने खाद्य पदार्थ को गन्ध से पहचानती हैं। ब्राह्मण वेदरूपी नेत्र से अपने कर्तव्य-अकर्तव्य का ज्ञान प्राप्त करते हैं। राजा गुप्तचरों द्वारा अपने शत्रुओं के गुप्तभेदों को जानते हैं और साधारणजन चर्मचक्षुओं से ही देखते हैं।

The cows recognise their fodder by smell, the *Brahmanas* (the learned men) know their duty with the help of the *Vedas*. The kings know the hidden secrets of their foes with the help of spies, while the ordinary men see with the eyes (in the literal sense).

***विशेष**—यहाँ पाण्डवों के व्यवहार को गुप्तचरों द्वारा जानने का संकेत है।*

***Note**—Here* Vidura *points out to know the conduct of the* Pāndavās *by the help of the spies.*

भूयांसं लभते क्लेशं या गौर्भवति दुर्दुहा।
अथ या सुदुहा राजन्नैव तां वितुदन्त्यपि ॥३५॥

भावार्थ—हे राजन्! जो गाय कठिनता से दुहानेवाली होती है, वह बहुत दुःख पाती है, दूहनेवाले उसे कष्ट देते हैं; परन्तु जो गाय सरलता से दूध दे देती है, उसे लोग कष्ट भी नहीं देते।

O king! the cow which is not easy to be milked, suffers much. The milking-men tease it, but the cow which is easy to be milked, is not put to trouble by the milking-men.

***विशेष**—यहाँ विदुरजी संकेत से कह रहे हैं कि राजन्! तुम्हारे पुत्र दुर्दुहा गौ*

के समान हैं।

***Note**—Here* Vidura *points out that your sons are like a cow which is difficult to be milked.*

यदतप्तं प्रणमति न तत्सन्तापयन्त्यपि ।
यच्च स्वयं नतं दारु न तत्सन्नामयन्त्यपि ॥३६॥
एतयोपमया धीरः सन्नमेत बलीयसे ।
इन्द्राय स प्रणमते नमते यो बलीयसे ॥३७॥

भावार्थ—जो धातु बिना तपाये मुड़ जाती है, उसे अग्नि में नहीं तपाते। जो काष्ठ=लकड़ी स्वभाव से झुका हुआ होता है, उसे भी नहीं झुकाते।

इस दृष्टान्त से बुद्धिमान् मनुष्य को बलवान् के समक्ष झुक जाना चाहिए। जो मनुष्य बलवान् के आगे झुकता है, वह मानो इन्द्र के आगे झुकता है।

The metal which is bent (twisted) without heating, is not heated in the fire. The stick which is naturally bent, that too is not tilt.

By this simile a wiseman should bow down before a powerful man. The man who bows down before a powerful monarch, he bows-down, as if before Indra.

***विशेष**—यहाँ विदुरजी संकेत से कह रहे हैं—हे राजन् ! यदि अपना कल्याण चाहते हो तो अपने पुत्रों से कहो कि वे अकड़ छोड़कर पाण्डवों के प्रति विनम्र बनें।*

***Note**—Here* Viḍura *points out—O king ! if you wish your own welfare, then say to your sons that they should give up their arrogance and should be polite towards the* Pāndavās.

पर्जन्यनाथाः पशवो राजानो मन्त्रिबान्धवाः ।
पतयो बान्धवाः स्त्रीणां ब्राह्मणा वेदबान्धवाः ॥३८॥

भावार्थ—पशुओं के रक्षक मेघ=बादल होते हैं (यथासमय वृष्टि होने से चारा पर्याप्त मात्रा में उत्पन्न होता है)। राजाओं के सहायक मन्त्री होते हैं। स्त्रियों के रक्षक उनके पति होते हैं और ब्राह्मणों के बन्धु वेद होते हैं।

The clouds are the protectors of the animals (when there are rains at proper times then grass and fodder is produced in huge quantities). The ministers are the assistants of the kings. The husbands are the protectors of their wives and the *Vedas* are the friends of the *Brāhmaṇās.*

सत्येन रक्ष्यते धर्मो विद्या योगेन रक्ष्यते ।
मृजया रक्ष्यते रूपं कुलं वृत्तेन रक्ष्यते ॥३९॥

भावार्थ—धर्म की रक्षा सत्य के व्यवहार से होती है, विद्या की रक्षा निरन्तर अभ्यास से होती है, सौन्दर्य की रक्षा शुद्धि=सफ़ाई से होती है और कुल की रक्षा सदाचार=उत्तम चरित्र से होती है।

Virtue (religion) is protected by truthfulness, learning by constant practice, the beauty by cleanliness of the body and the family by good character.

मानेन रक्ष्यते धान्यमश्वान् रक्षत्यनुक्रमः ।
अभीक्ष्णदर्शनं गाश्च स्त्रियो रक्ष्याः कुचेलतः ॥४०॥

भावार्थ—भली-भाँति सँभालकर रखने से अन्न की सुरक्षा होती है। प्रशिक्षण, पादबन्धन और फिराने तथा लोटपोट कराने से घोड़ों की रक्षा होती है। प्यारभरी दृष्टि से देखने और सहलाने से गौओं की रक्षा होती है और स्त्रियों की मैले-कुचैले वस्त्रों से रक्षा करनी चाहिए, अर्थात् उन्हें उत्तम वस्त्र पहनाने चाहिएँ।

The grain is protected by properly taking care of it; the horse by proper training, tying its feet by rope, taking it around and rolling it; the cows by an affectionate look and fondling them gently, while the women should be protected from dirty clothes, i.e. they should be well-dressed.

न कुलं वृत्तहीनस्य प्रमाणमिति मे मतिः ।
अन्त्येष्वपि हि जातानां वृत्तमेव विशिष्यते ॥४१॥

भावार्थ—'आचारहीन मनुष्य का उत्तम कुल में उत्पन्न होना उसकी श्रेष्ठता में, उसके कुलीन होने में प्रमाण नहीं है', यह मेरा दृढ़ निश्चय है। शूद्रकुल में उत्पन्न हुओं की भी आचार के कारण ही विशिष्टता होती है।

'A man of loose character, born in a high family, is not the proof of his being a gentle man', it is my firm belief. A man born in a *Sudra* (low) family becomes honourable due to his good conduct.

***विशेष**—यहाँ गुण-कर्म-स्वभाव के समक्ष जन्म की निकृष्टता प्रतिपादित की*

गई है। उच्चकुल में जन्म लेकर भी मनुष्य नीच और नीच कुल में जन्म लेकर भी उच्च हो सकता है।

Note—*Here the inferiority of birth is expounded as against the qualifications, accomplishments and character of a superior class. A man born in a high family may be low and a man born in a low cast may be lofty.*

य ईर्ष्युः परवित्तेषु रूपे वीर्ये कुलान्वये ।
सुखसौभाग्यसत्कारे तस्य व्याधिरनन्तकः ॥४२॥

भावार्थ—जो मनुष्य पराये धन, सौन्दर्य, बल-पराक्रम, कुल, सुख, सौभाग्य के विषय में ईर्ष्या=डाह करता है, उसका रोग असाध्य है, अर्थात् वह सदा दुःखी रहता है।

A man who is envious, with regard to others' wealth, beauty, valour and power, family, happiness and good fortune, his disease is incurable i.e. he is always unhappy.

अकार्यकरणाद् भीतः कार्याणां च विवर्जनात् ।
अकाले मन्त्रभेदाच्च येन माद्येन्न तत्पिबेत् ॥४३॥

भावार्थ—मनुष्य को चाहिए कि वह अनुचित कार्य करने से, कर्त्तव्य कर्मों को त्याग देने से और समय से पूर्व—कार्यसिद्धि से पहले ही गुप्त मन्त्रणा के प्रकट हो जाने से डरता रहे और जिसका पान करके नशा चढ़े, ऐसी मादक वस्तुओं का सेवन न करे।

A man should be afraid of, doing the acts which are forbidden by the *Śāstrās* (sacred books), giving up the righteous acts and leaking out of secret counsel before its accomplishment. A man should not use intoxicants.

विद्यामदो धनमदस्तृतीयोऽभिजनो मदः ।
मदा एतेऽवलिप्तानामेत एव सतां दमाः ॥४४॥
ऐश्वर्यमदपापिष्ठा मदाः पानमदादयः ।
ऐश्वर्यमदमत्तो हि नाऽपतित्वा विबुध्यते ॥४५॥§

§ यह श्लोक अन्य पुस्तकों में ५३वाँ है, संगति की दृष्टि से यह यहाँ ही होना चाहिए।

भावार्थ—संसार में तीन मद प्रसिद्ध हैं—विद्यामद, धनमद और उच्चकुल का मद। अहंकारियों के लिए तो ये मद=बुद्धि को भ्रष्ट करने के साधन हैं, परन्तु सज्जनों के लिए ये ही दम=शान्ति देनेवाले हैं।

सुरापान आदि भी मद हैं, नशाकारक हैं, परन्तु ऐश्वर्य=धन का मद सबसे निकृष्ट है। ऐश्वर्य के मद में मत्त मनुष्य पतित=भ्रष्ट हुए बिना होश में नहीं आता।

In this world there are three intoxicants which are very famous viz., the intoxication of learning, wealth and high family. For a proud man they are 'मद'—intoxicants—they ruin his intellect, but for a gentle man they become 'दम'—they bestow peace upon him.

Drinking etc. are also intoxicants, but the intoxication of the wealth is the worst. The man who is drunk with wealth does not come to his senses before his ruin.

असन्तोऽभ्यर्थिताः सद्भिः क्वचित्कार्ये कदाचन।
मन्यन्ते सन्तमात्मानमसन्तमपि विश्रुतम् ॥४६॥

भावार्थ—कभी किसी कार्य की सिद्धि के लिए सज्जनों से प्रार्थित होने पर दुष्ट लोग अपने-आपको प्रसिद्ध दुष्ट जानते हुए भी सज्जन मानने लगते हैं।

If, at any time, a wicked person is requested by gentle men for the accomplishment of some good object, they knowing themselves to be notorious in the heart of hearts, think themselves to be gentle men.

***विशेष**—श्लोक का आशय यह है कि दुष्टों से किसी कार्य के लिए प्रार्थना नहीं करनी चाहिए।*

***Note**—The purport of the verse is that a wicked person should never be prayed for the fulfilment of any object.*

गतिरात्मवतां सन्तः सन्त एव सतां गतिः।
असतां च गतिः सन्तो नत्वसन्तः सतां गतिः ॥४७॥

भावार्थ—सन्तजन प्राणिमात्र को सहारा देनेवाले हैं, सन्तों को सहारा देनेवाले भी सन्त हैं और दुष्टों को सहारा देनेवाले भी सन्त हैं, परन्तु दुष्ट लोग सन्तों को कभी सहारा नहीं देते।

The saintly persons stand as a support of all the living beings of

the world, they also support the saints, they give a helping hand to the wicked also. But the wicked—the evil minded persons can never stand as a support for the saintly persons.

विशेष—*इस श्लोक से यह ध्वनित होता हे कि पाण्डव सन्त हैं, वे तुम्हारे उपकारक और सहायक बन सकते हैं, परन्तु तुम और तुम्हारे पुत्र उनके सहायक कभी नहीं बन सकते।*

Note—*This verse points out that the* Pāndavās *are saintly, they can be your benefactor and supporter, but you and your sons can never help them.*

जिता सभा वस्त्रवता मिष्टाशा गोमता जिता।
अध्वा जितो यानवता सर्वं शीलवता जितम् ॥४८॥
शीलं प्रधानं पुरुषे तद्यस्येह प्रणश्यति।
न तस्य जीवितेनार्थो न धनेन न बन्धुभिः ॥४९॥

भावार्थ—उत्तम वस्त्रधारी सभा में अपना प्रभाव जमा लेता है, गो-पालक घी, दूध, मक्खन आदि पदार्थों के सेवन से मीठे स्वाद की इच्छा को जीत लेता है। सवारी से चलनेवाला मार्ग को तय=पूर्ण कर लेता है और उत्तम स्वभाववाला मनुष्य सबके हृदयों को जीत लेता है।

इस संसार में मनुष्य का शील ही मुख्य है, जिसका शील नष्ट हो गया न उसके जीने का कोई प्रयोजन है, न उसे धन से कोई लाभ है और न बन्धु-बान्धवों से, अर्थात् शीलरहित मनुष्य का जीवन व्यर्थ है।

A well-dressed man has his influence over the whole assembly. A cow-owner (a man who keeps a cow) by using clarified butter, milk etc. wins over the desire of sweet taste. A man riding in a vehicle reaches his goal in no time. A men of good temperament wins the hearts of all the persons.

In this world a man's graceful modesty is prominent. A man who has lost his modesty, there is no use of his remaining alive, neither the wealth has any purpose for him, nor his kiths and kins i.e. the life of a man devoid of modesty is quite useless.

आढ्यानां मांसपरमं मध्यानां गोरसोत्तरम्।
तैलोत्तरं दरिद्राणां भोजनं भरतर्षभ ॥५०॥

भावार्थ—हे भरतश्रेष्ठ ! धनोन्मत्त (तामस स्वभाव) पुरुषों का भोजन मांसप्रधान होता है, मध्यम श्रेणी के लोगों के भोजन में गोरस=दूध, दही आदि की प्रधानता होती है और दरिद्रों के भोजन में तेल की प्रधानता होती है।

O the best among the *Bharata* race ! In the food of the persons who are intoxicated with wealth and are of gloomy nature flesh is prominent, in the food of the middle class, butter, milk, curd etc. are prominent and in the food of the poor oil is prominent.

सम्पन्नतरमेवान्नं दरिद्रा भुञ्जते सदा ।
क्षुत्स्वादुतां जनयति सा चाढ्येषु सुदुर्लभा ॥५१॥

भावार्थ—दरिद्र लोग सदा पौष्टिक भोजन ही करते हैं, क्योंकि उनके भोजन में विशेष स्वाद तो भूख ही उत्पन्न कर देती है, जो धनिकों के लिए सर्वथा दुर्लभ है। धनी लोग मन्दाग्नि का शिकार रहते हैं, अतः उन्हें भूख लगती ही नहीं।

Those who are poor always have a nutritive meal, because hunger brings taste in their meals, which is rare for the wealthy persons. They (wealthy persons) are always a prey to dyspepsia, therefore, they do not feel hungry at all.

प्रायेण श्रीमतां लोके भोक्तुं शक्तिर्न विद्यते ।
जीर्यन्त्यपि हि काष्ठानि दरिद्राणां महीपते ॥५२॥

भावार्थ—हे राजन् ! संसार में श्रीमानों में प्रायः खाने का सामर्थ्य ही नहीं होता, खा भी लें तो पचाने की शक्ति नहीं होती, किन्तु दरिद्रों के पेट में लक्कड़ भी पच जाते हैं।

O king ! the wealthy persons, in this world, generally have no capacity of eating, somehow if they eat, they have no power to digest it, but the poor can digest even the worst food.

अवृत्तिर्भयमन्त्यानां मध्यानां मरणाद्भयम् ।
उत्तमानां तु मर्त्यानामवमानात्परं भयम् ॥५३॥

भावार्थ—अधम पुरुषों को रोटी, कपड़ा और मकान न मिलने का भय होता है, मध्यम कोटि के लोगों को मरने का भय होता है और उत्तम पुरुषों को तो अपमानित हो जाने से ही महान् भय होता है।

The lowest among men fear for not getting food, clothing and

shelter, the middle class of persons is afraid of death and the upper-most persons are afraid of even being insulted.

इन्द्रियैरिन्द्रियार्थेषु वर्तमानैरनिग्रहैः ।
तैरयं ताप्यते लोको नक्षत्राणि ग्रहैरिव ॥५४॥

भावार्थ—वश में न होने के कारण अपने विषयों—रूप, रस, गन्ध आदि में रमण करनेवाली इन्द्रियों के द्वारा यह सारा जगत्=जगत् के निवासी इस प्रकार पीड़ित हो रहे हैं, जैसे सूर्यादि ग्रहों से नक्षत्र आक्रान्त हो जाते हैं ।

Just as the stars are affected by the planets, similarly, this world (the dewellers of this world) is affected by the senses, when they are directed, uncontrolled, to their respective objects i.e. sound, colour, smell etc.

यो जितः पञ्चवर्गेण सहजेनात्मकर्षिणा ।
आपदस्तस्य वर्धन्ते शुक्लपक्ष इवोडुराट् ॥५५॥

भावार्थ—जो मनुष्य सहजभाव से अपनी ओर आकर्षित करनेवाली पाँच इन्द्रियों के अधीन होकर उनका दास बन जाता है, उसकी आपत्तियाँ ऐसे बढ़ती हैं, जैसे शुक्लपक्ष में चन्द्रमा बढ़ता है ।

Just as the moon brightens during the moonlit fortnight, similarly the calamities of that person increase who becomes a slave of the five senses which in their natural state ever lead him towards various objects.

वश्येन्द्रियं जितात्मानं धृतदण्डं विकारिषु ।
परीक्ष्यकारिणं धीरमत्यन्तं श्रीर्निषेवते ॥५६॥§

भावार्थ—जो जितेन्द्रिय है, जिसने मन को वश में किया हुआ है, जो अपराधियों को दण्ड देता है और जो परीक्षा करके कार्य करता है, लक्ष्मी ऐसे धैर्यवान् पुरुष की सदा चेरी बनी रहती है—वह सदा ऐश्वर्यशाली बना रहता है।

The godess of wealth serves him as subservient devotee—great prosperity waits upon him, who has subdued his senses, who has controlled his mind, who is capable of punishing all criminals, who performs his duty after careful investigation and who is blessed with patience.

§ यह श्लोक अन्य पुस्तकों में ५८वाँ है । विषय की दृष्टि से यह यहाँ ही होना चाहिए ।

रथः शरीरं पुरुषस्य राज-
न्नात्मा नियन्तेन्द्रियाण्यस्य चाश्वाः ।
तैरप्रमत्तः कुशली सदश्वैर्
दान्तैः सुखं याति रथीव धीरः ॥५७॥

भावार्थ—हे राजन् ! यह शरीर पुरुष का रथ है, आत्मा इसका सारथि है और इन्द्रियाँ इसके घोड़े हैं। इनको वश में करके प्रमादरहित कुशल पुरुष वैसे ही सुखपूर्वक संसार-पथ का अतिक्रमण करता है, जैसे धीर रथवान् नियन्त्रित, उत्तम घोड़ों द्वारा सुखपूर्वक अपने गन्तव्य स्थान की ओर जाता है।

O king ! this body of man is a chariot (car); the soul within it is the driver and the senses are its horses. Just as a wise and clever charioteer with well-trained and controlled steeds easily reaches his goal, similarly, a skilful person after controlling the senses pleasantly performs the journey of his life.

विशेष—*यजुर्वेद ३४/६ और कठोपनिषद् १/३/३-४ में भी शरीर को रथ और आत्मा को रथी आदि की उपमा दी गयी है।*

Note—In Yajurveda *(34/6) and* Kathopniṣad *(1/3/3-4) also the body is compared with a chariot and the soul with a charioteer.*

एतान्यनिगृहीतानि व्यापादयितुमप्यलम् ।
अविधेया इवादान्ता हयाः पथि कुसारथिम् ॥५८॥

भावार्थ—जैसे गतिकुशलता न पाये हुए और वश में न आनेवाले घोड़े मूर्ख सारथि को मार्ग में ही मार डालते हैं, वैसे ही वश में न की हुई इन्द्रियाँ मनुष्य को नष्ट करने में समर्थ होती हैं।

Just as untrained (unbroken) and uncontrolled horses always lead an unskilful driver to destruction in the course of the journey, similarly, the unsubdued senses lead a man to destruction only.

अनर्थमर्थतः पश्यन्नर्थं चैवाप्यनर्थतः ।
इन्द्रियैरजितैर्बालः सुदुःखं मन्यते सुखम् ॥५९॥

भावार्थ—जिसकी इन्द्रियाँ वश में नहीं हैं, ऐसा मूर्ख व्यक्ति अनर्थ=छल-कपट

से प्राप्त द्रव्य को अर्थ और अर्थ को अनर्थ के रूप में विपरीतभाव से देखता है। ऐसा अजितेन्द्रिय मनुष्य महान् दुःख को भी सुख मान बैठता है।

The money which is obtained by deceitful means, is considered to be real wealth by the foolish person, whose senses are unsubdued, the real wealth which is earned by sweat of the brow is something highly improper for him or he hopes to extract evil from good or good from evil. Such a person who has not controlled his senses confounds misery with happiness.

धर्मार्थौ यः परित्यज्य स्यादिन्द्रियवशानुगः।
श्रीप्राणधनदारेभ्यः क्षिप्रं स परिहीयते ॥६०॥

भावार्थ—जो मनुष्य धर्म और धर्मानुकूल अर्थ को छोड़कर इन्द्रियों का दास बन जाता है, वह शीघ्र ही यश, प्राण=जीवन, धन और स्त्री=परिवार, बन्धु-बान्धवों से भी हाथ धो बैठता है।

He who forsakes religion and wealth which is acquired in accordance with virtue and becomes the slave of the senses, loses without delay his fame, life, wealth and wife i.e. family—kiths and kins.

अर्थानामीश्वरो यः स्यादिन्द्रियाणामनीश्वरः।
इन्द्रियाणामनैश्वर्यादैश्वर्याद् भ्रश्यते हि सः ॥६१॥

भावार्थ—जो मनुष्य धन-सम्पत्ति का तो स्वामी है, परन्तु इन्द्रियों का स्वामी न होकर उनका दास है, इन्द्रियों को वश में न रखने के कारण वह शीघ्र ही उस ऐश्वर्य से भ्रष्ट हो जाता है।

He, who is the owner of the riches—who has plenty of wealth, but instead of being the master of his senses, is the slave of the senses, certainly loses his wealth in consequence of his want of mastery over his senses.

आत्मनाऽऽत्मानमन्विच्छेन्मनोबुद्धीन्द्रियैर्यतैः।
आत्मा ह्येवात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः ॥६२॥
बन्धुरात्मात्मनस्तस्य येनैवात्मात्मना जितः।
स एव नियतो बन्धुः स एव नियतो रिपुः ॥६३॥§

§ पूना-संस्करण के अनुसार यह श्लोक प्रक्षिप्त है। वस्तुतः इस श्लोक में कोई नई बात कही भी नहीं गई है।

भावार्थ—मन, बुद्धि और इन्द्रियों को वश में करके मनुष्य आत्मा के द्वारा अपनी आत्मा को खोजे—उसे पहचाने, क्योंकि आत्मा ही अपना मित्र और आत्मा ही अपना शत्रु है।

यह आत्मा उस आत्मा का बन्धु है, जिसने आत्मा के द्वारा आत्मा को जीत लिया है। वही आत्मा जीता गया होने पर मित्र है और न जीता हुआ होने पर शत्रु है।

By controlling his mind, intellect and senses, a man should seek to know his own soul by his ownself,because a man's soul is really his true friend and indeed it is his own foe too.

The soul is the friend of that soul, who has conquered his soul by his own soul. The soul, which is under control, is a friend, whereas the soul which is not subdued is a foe.

अविजित्य य आत्मानममात्यान् विजिगीषते।
अमित्रान्वाजितामात्यः सोऽवशः परिहीयते ॥६४॥
आत्मानमेव प्रथमं द्वेष्यरूपेण यो जयेत्।
ततोऽमात्यानमित्राँश्च न मोघं विजिगीषते ॥६५॥

भावार्थ—जो राजा अपने को जीते बिना अपने मन्त्रियों को जीतना चाहता है और मन्त्रियों को जीते बिना शत्रु पर विजय पाना चाहता है, वह अजितेन्द्रिय राजा निश्चय ही पराजित होता है।

जो राजा अपने आत्मा को शत्रुरूप समझकर सर्वप्रथम उसे जीत लेता है, तत्पश्चात् मन्त्रियों और शत्रुओं को जीतना चाहता है, उसे अवश्य विजय प्राप्त होती है।

The king who wishes to control his counsellors, without controlling his ownself and wishes to conquer his foes without controlling his counsellors, such a king, who has not controlled his senses, at last succumbs.

The king, who first of all subdues his own soul treating it as a foe, and after that subdues his counsellors and enemies, comes out victorious at last.

क्षुद्राक्षेणेव जालेन झषावपिहितावरू।
कामश्च राजन् क्रोधश्च तौ प्रज्ञानं विलुम्पतः ॥६६॥

भावार्थ—हे राजन् ! जैसे सूक्ष्म छेदवाले जाल में फँसी हुई दो बड़ी-बड़ी मछलियाँ मिलकर उस जाल को काट डालती हैं, वैसे ही काम और क्रोध—ये दोनों मिलकर बुद्धि=विवेक को लुप्त कर देते हैं।

O king ! just as two big fishes which have been caught in a net of thin holes, break through it, in the same way passion (sexual desire) and anger these two put out the lamp of intellect.

समवेक्ष्येह धर्मार्थौ सम्भारान् योऽधिगच्छति।
स वै सम्भृतसम्भारः सततं सुखमेधते ॥६७॥

भावार्थ—जो मनुष्य इस संसार में धर्म और अर्थ का भली-भाँति विचार करके विजय-साधनों का संग्रह करता है, वह साधन-सम्पन्न व्यक्ति निरन्तर सुख प्राप्त करता है।

In this world, he who properly taking into consideration both religion and polity, seeks to acquire the means of success, that prosperous fellow alone wins happiness forever.

यः पञ्चाभ्यन्तराञ्शत्रूनविजित्य मनोमयान्।
जिगीषति रिपूनन्यान् रिपवोऽभिभवन्ति तम् ॥६८॥

भावार्थ—जो मनुष्य मन के विकारभूत पाँच इन्द्रियों के विषयरूप भीतर के शत्रुओं को जीते बिना दूसरे शत्रुओं को जीतने की इच्छा करता है, उसे बाह्य शत्रु पराजित कर देते हैं।

The man, who without subduing his five inner foes of mental origin, wishes to vanquish outer enemies, is overpowered by the latter.

दृश्यन्ते हि महात्मानो बध्यमानाः स्वकर्मभिः।
इन्द्रियाणामनीशत्वाद्राजानो राज्यविभ्रमैः ॥६९॥

भावार्थ—रावण आदि अनेक बड़े-बड़े राजा इन्द्रियों के दास होने के कारण और भोग-विलास में लीन होने के कारण मारे जाते दिखाई पड़ते हैं।

Many great kings like *Rāvaṇa,* and *Kaṁsa,* etc., being the slaves of their senses and mad after wealth are seen to be ruined by their acts of indulgence in luxury.

असंत्यागात्पापकृतामपापाँस्
तुल्यो दण्डः स्पृशते मिश्रभावात् ।
शुष्केणार्द्रं दह्यते मिश्रभावात्
तस्मात्पापैः सह सन्धिं न कुर्यात् ॥७०॥

भावार्थ—पापाचारी दुष्टों का त्याग न करके उनके साथ मेल-जोल रखने से निष्पाप धर्मात्माओं को भी उन पापियों के समान दण्ड प्राप्त होता है, जैसे सूखी लकड़ियों में मिल जाने से गीली लकड़ी भी जल जाती है, अतः दुष्टों के साथ कभी मेल-मिलाप नहीं करना चाहिए।

Just as the fuel which is wet burns with that which is dry, similarly a sinless religious man who does not forsake, sinful and wicked persons but keeps company with them, is punished equally with the sinful. Therefore, friendship and association with the sinful should be avoided.

निजानुत्पततः शत्रून् पञ्च पञ्चप्रयोजनान् ।
यो मोहान्न निगृह्णाति तमापद् ग्रसते नरम् ॥७१॥

भावार्थ—जो मनुष्य स्पर्श, रस, शब्द, गन्ध और रूप—इन पाँच विषयों की ओर दौड़नेवाली, कुमार्गगामिनी इन्द्रियरूप अपने पाँच शत्रुओं को प्रमाद के कारण अपने वश में नहीं करता, उसे विपत्ति ग्रस लेती है।

The man, who due to negligence does not control his five greedy foes, i.e. five sense organs which run towards evil course, having five distinct objects, viz., sound, tangibility, shape, flavour and smell, is overwhelmed by calamities.

अनसूयार्जवं शौचं सन्तोषः प्रियवादिता ।
दमः सत्यमनायासो न भवन्ति दुरात्मनाम् ॥७२॥

भावार्थ—दुष्टों में ये गुण नहीं होते—गुणों में दोष न देखना, सरलता, अन्तः तथा बाह्य पवित्रता, सन्तोष, मधुर भाषण, इन्द्रियों और मन का दमन, सत्य भाषण तथा सहिष्णुता।

Absence of ill-will (guilelessness), simplicity, internal and external purity, contentment, sweetness of speech, self-restraint,

speaking the truth and steadiness—these are never the attributes of the wicked.

आत्मज्ञानमनायासस्तितिक्षा धर्मनित्यता ।
वाक् चैव गुप्ता दानं च नैतान्यन्त्येषु भारत ॥७३॥

भावार्थ—हे भरतश्रेष्ठ ! आत्मज्ञान=संसार के सभी प्राणियों में अपने-जैसी आत्मा समझना, चञ्चलता का अभाव, सहनशीलता=सुख-दुःख, लाभ-हानि, जय-पराजय, स्तुति-निन्दा, मान-अपमान, भूख-प्यास, गर्मी-सर्दी आदि द्वन्द्वों को सहन करना, धर्म में तत्परता, व्यर्थ की बक-झक से रहित सुसंयत वाणी और दानशीलता—ये गुण नीच मनुष्यों में नहीं पाये जाते ।

O the best among the *Bharata* race ! self-knowledge (to see one's own soul in all the creatures of the world), steadiness (absence of fickleness), tolerance (to bear patiently pain or pleasure, profit or loss, success or failure, censure or praise, respect or disgrace, hunger or thirst, hot or cold), devotion to virtue, speech free from irrelevant prattle and charity—these never exist in inferior men.

आक्रोशपरिवादाभ्यां विहिंसन्त्यबुधा बुधान् ।
वक्ता पापमुपादत्ते क्षममाणो विमुच्यते ॥७४॥

भावार्थ—मूर्ख मनुष्य ज्ञानियों को कठोरभाषण और निन्दा के द्वारा पीड़ा देते हैं । कठोर वचनादि कहनेवाला वक्ता पाप का भागी होता है और उन वचनों को सहनेवाला पाप से मुक्त रहता है ।

The fools injure the wise by false reproaches and severe speeches. As a result the man who utters a severe speech etc., becomes sinful, while the person who bears such speech is freed from the sin.

हिंसा बलमसाधूनां राज्ञां दण्डविधिर्बलम् ।
शुश्रूषा तु बलं स्त्रीणां क्षमा गुणवतां बलम् ॥७५॥

भावार्थ—हिंसा दुष्टों का बल है, अपराधियों को दण्ड देना राजाओं का बल है, पारिवारिक जनों की सेवा करना स्त्रियों का बल है और क्षमाशीलता गुणिजनों का बल है ।

Violence is the strength of the wicked, to punish the criminals is

the strength of the kings, to serve the members of the family or the weak is the strength of women and forgiveness is the strength of the proficients.

वाक्संयमो हि नृपते सुदुष्करतमो मतः ।
अर्थवच्च विचित्रं च न शक्यं बहु भाषितुम् ॥७६॥

भावार्थ—हे राजन् ! वाणी का संयम बहुत ही कठिन माना गया है, सार्थक और चमत्कारपूर्ण वचन बहुत नहीं बोला जा सकता, अतः दुष्कर होने पर भी वाणी का संयम करना ही चाहिए।

O king ! the controlling of the speech is said to be the most difficult task. It is not easy to hold a long conversation uttering words which are miraculous, full of meaning and delightful to the listeners, therefore, even though difficult, one should control his speech.

अभ्यावहति कल्याणं विविधं वाक्सुभाषिता ।
सैव दुर्भाषिता राजन्ननर्थायोपपद्यते ॥७७॥

भावार्थ—हे राजन् ! मधुरता से कही हुई बात अनेक प्रकार से कल्याण करती है, परन्तु वही बात कटु और कठोर शब्दों में कही जाए तो महान् अनर्थ का कारण बन जाती है।

O king ! finely expressed speech is productive of many beneficial results, but the same speech when uttered in a severe and bitter manner becomes the cause of great disaster.

रोहते सायकैर्विद्धं वनं परशुना हतम् ।
वाचा दुरुक्तं बीभत्सं न संरोहति वाक्क्षतम् ॥७८॥

भावार्थ—बाणों से बींधा हुआ घाव भर जाता है, कुल्हाड़े से काटा गया वन फिर फूट जाता—उग आता है, परन्तु वाणी से कटुवचन कहकर किया गया भयानक घाव कभी नहीं भरता।

A wound pierced by arrows heals up, a forest cut down by an axe may grow again, but one's heart wounded and censured by ill-spoken words never recovers.

कर्णिनालीकनाराचान्निर्हरन्ति शरीरतः ।
वाक्शल्यस्तु न निर्हर्तुं शक्यो हृदिशयो हि सः ॥७९॥

भावार्थ—कर्णी, नालीक और नाराच नामक बाणों को शरीर से निकाला जा सकता है, परन्तु कटु वाणीरूपी काँटा नहीं निकाला जा सकता, क्योंकि वह हृदय के भीतर धँस जाता है ।

Weapons like arrows, bullets and bearded darts, can be easily extracted from the body, but a wordy-dagger cannot be taken out, because it is plunged deep into the heart.

वाक्सायका वदनान्निष्पतन्ति
यैराहतः शोचति रात्र्यहानि ।
परस्य नाममर्मसु ते पतन्ति
तान् पण्डितो नावसृजेत् परेभ्यः ॥८०॥

भावार्थ—कटु वचनरूपी बाण मुख से निकलकर दूसरों के मर्मस्थानों को छेद डालते हैं, जिनसे घायल हुआ मनुष्य रात-दिन दुःखी रहता है, अतः विद्वान् दूसरों पर उन कटु वाग्बाणों को न छोड़े ।

The arrows, in the form of harsh words, coming out from the mouth, pierce and puncture the vital spot of others. Smitten by them, the man grieves day and night. Therefore, a learned man should not discharge such arrows upon others.

विशेष—*यहाँ विदुरजी यह संकेत कर रहे हैं कि तुम्हारे पुत्रों ने सभा में द्रौपदी को जो दुर्वचन कहे थे, वे द्रौपदी और पाण्डवों के हृदय में बैठे हुए हैं, अतः वे तुम्हारे पुत्रों के अपराध को क्षमा नहीं करेंगे ।*

Note—*Here* Viḍura *points out to* Dhṛṭrāṣtra *that the harsh words which were spoken for* Ḍraupḍi *by your sons, they are plunged deep in the hearts of* Ḍraupḍi *and the* Pāndavās, *therefore, they will not forgive the guilt of your sons.*

यस्मै देवाः प्रयच्छन्ति पुरुषाय पराभवम् ।
बुद्धिं तस्यापकर्षन्ति सोऽवाचीनानि पश्यति ॥८१॥

भावार्थ—दैवी शक्तियाँ जिस मनुष्य को पराजित करना चाहती हैं, वे उसकी बुद्धि का हरण कर लेती हैं, परिणामस्वरूप उसकी दृष्टि नीच कर्मों की ओर झुक जाती है ।

To whom the gods—the divine powers ordain defeat, take away his senses and intellect, as a result his vision is inclined towards inferior deeds.

बुद्धौ कलुषभूतायां विनाशे प्रत्युपस्थिते ।
अनयो नयसंकाशो हृदयान्नावसर्पति ॥८२॥

भावार्थ—बुद्धि के मलिन हो जाने और विनाशकाल के उपस्थित होने पर नीति के समान प्रतीत होनेवाली अनीति हृदय से दूर नहीं होती ।

When the intellect becomes dim and the time of destruction is at hand, immorality, looking like morality sticks firmly to the heart.

सेयं बुद्धिः परीता ते पुत्राणां भरतर्षभ ।
पाण्डवानां विरोधेन न चैनानवबुध्यसे ॥८३॥

भावार्थ—हे भरतश्रेष्ठ ! तुम्हारे पुत्रों की बुद्धि पाण्डवों के विरोध से व्याप्त होने के कारण भ्रष्ट हो गई है, परन्तु आप इन भ्रष्ट-बुद्धिवाले अपने पुत्रों को पहचानते नहीं हैं ।

O the best among the *Bharat* race ! the intellect of your sons, due to the hostility towards the *Pāndavās,* has been corrupt, but you do not recognise your sons who are of corrupt intellect.

राजा लक्षणसम्पन्नस्त्रैलोक्यस्यापि यो भवेत् ।
शिष्यस्ते शासिता सोऽस्तु धृतराष्ट्र युधिष्ठिरः ॥८४॥

भावार्थ—हे धृतराष्ट्र ! राजा के सभी लक्षणों से सम्पन्न, जो तीनों लोकों का भी राजा होने योग्य है, वह तुम्हारा आज्ञाकारी युधिष्ठिर ही इस भूमण्डल का राजा होने योग्य है, अर्थात् दुर्योधन को हटाकर उसे ही राजा बनाओ ।

O *Dhṛtrāṣtrā* ! Endued with every auspicious mark and deserving to rule the three worlds, *Yudhiṣthira,* obedient to your command, is able to rule the earth. Exclude your son *Duryodhana* and let *Yudhiṣthira* be the king.

अतीत्य सर्वान् पुत्राँस्ते भागधेयपुरस्कृतः ।
तेजसा प्रज्ञया चैव युक्तो धर्मार्थतत्त्ववित् ॥८५॥

भावार्थ—युधिष्ठिर राज्यांश का अधिकारी, धर्म और अर्थ के तत्त्व को

जाननेवाला, बुद्धि और तेज से युक्त है तथा आपके सभी पुत्रों से बढ़-चढ़कर है, अतः वही राजा होने योग्य है।

Yudhiṣthira is the foremost of all your heirs. He is a rightful claimant of the share in the kingdom. He is acquainted with the truths of religion and polity, endued with wisdom and energy. Therefore, he is only a fit person to be a king.

अनुक्रोशादानृशंस्याद्योऽसौ धर्मभृतां वरः ।
गौरवात्तव राजेन्द्र बहून् क्लेशाँस्तितिक्षते ॥८६॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि प्रजागरपर्वणि विदुरनीतिवाक्ये चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ।

॥ इति विदुरनीतौ (विदुरप्रजागरे) द्वितीयोऽध्यायः ॥

भावार्थ—हे राजेन्द्र ! धर्मात्माओं में श्रेष्ठ युधिष्ठिर, आपके प्रति आदर और श्रद्धा के कारण तथा अपनी दयालुता और सौम्यता के कारण, आपके सुयश की रक्षा के लिए बहुत कष्ट सह रहा है।

O king of kings ! *Yudhiṣthira*, who is foremost among righteous men, due to having regard and devotion for you and out of his kindness and sympathy is suffering much misery and trouble, in order to preserve your reputation.

॥ यह विदुरनीति (विदुरप्रजागर) का द्वितीय अध्याय सम्पूर्ण हुआ ॥

Here ends the second chapter of Viḍura-Niti.

अथ तृतीयोऽध्यायः—Third Chapter

धृतराष्ट्र उवाच

ब्रूहि भूयो महाबुद्धे धर्मार्थसहितं वचः ।
शृण्वतो नास्ति मे तृप्तिर्विचित्राणीह भाषसे ॥१॥

भावार्थ—धृतराष्ट्र बोले—हे महाबुद्धे विदुर ! तुम पुनः धर्म और अर्थ से युक्त बातें सुनाओ । तुम्हारी बातें सुनते हुए मुझे तृप्ति नहीं हो रही है, क्योंकि तुम विलक्षण बातें कह रहे हो ।

Dhṛtrāṣtra said—O *Viḍura* you of great intelligence ! tell me again words such as these, consistent with religion and polity. My thirst to listen to them is not quenched. Whatever you are saying is remarkable and charming.

विदुर उवाच

सर्वतीर्थेषु वा स्नानं सर्वभूतेषु चार्जवम् ।
उभे त्वेते समे स्यातामार्जवं वा विशिष्यते ॥२॥

भावार्थ—विदुरजी बोले—सब तीर्थों में स्नान करना और सब प्राणियों पर दया करना—ये दोनों बातें एक-जैसी हैं, परन्तु इन दोनों में भी सब प्राणियों पर दया करना श्रेष्ठ है ।

Viḍura said—Bathing in all the holy places and kindness towards all the creatures—both of them are equal. But out of the two, kindness surpasses the former.

***विशेष**—तीर्थ शब्द का एक अर्थ 'शास्त्र' भी होता है । एक ओर सब शास्त्रों का अवगाहन और दूसरी ओर सब प्राणियों पर दया करना—इन दोनों में व्यावहारिक दृष्टि से दया श्रेष्ठ है ।*

***Note**—The word Ṭirtha (तीर्थ) also stands for 'शास्त्र'—scripture. On one hand there is drowning in the literature—a vast study of the*

scriptures and on the other hand, there is kindness to all the creatures—out of the two practically kindness to the creatures is better.

आर्जवं प्रतिपद्यस्व पुत्रेषु सततं विभो ।
इह कीर्तिं परां प्राप्य प्रेत्य स्वर्गमवाप्स्यसि ॥३॥

भावार्थ—हे राजन् ! युधिष्ठिर आदि अपने इन पुत्रों पर निरन्तर दया करो। ऐसा करने पर संसार में आपका यश होगा और मरने पर स्वर्ग=सुख पहुँचाने के साधन प्राप्त होंगे ।

O king ! show kindness unto *Yudhisthira* etc., all thy sons. By doing so, you will gain great fame in this world and after death you will attain heaven—the enjoyments of extreme happiness and the attainment of the means thereof.

विशेष—*'आर्जव' का एक अर्थ 'वैषम्यरहित होना' भी है । विदुरजी कह रहे हैं कि तुम कौरव-पाण्डव—दोनों को समानरूप से देखो ।*

Note—*The word* Ārjava *(आर्जव) also means 'to be impartial'. Here* Viḍura *says that you should be impartial towards both the* Kaurvās *and the* Pāndavās—*treat them equally.*

यावत्कीर्तिर्मनुष्यस्य पुण्या लोके प्रगीयते ।
तावत्स पुरुषव्याघ्र स्वर्गलोके महीयते ॥४॥

भावार्थ—हे पुरुषश्रेष्ठ ! जब तक संसार में मनुष्य की पुण्यकीर्ति गाई जाती है, तब तक वह स्वर्ग में आदर और मान पाता है ।

O the best among men! As long as a man's good deeds are spoken of in this world, he is glorified in the heaven, so long.

विशेष—*यह श्लोक प्ररोचना मात्र है, रुचि उत्पन्न करनेवाला कथन है ।*

Note—*This verse is only to excite interest.*

अत्राप्युदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम् ।
विरोचनस्य संवादं केशिन्यर्थे सुधन्वना ॥५॥

भावार्थ—इस विषय में संवादरूप एक पुराना इतिहास सुनाया जाता है, जो केशिनी नामक कन्या के लिए सुधन्वा और विरोचन के मध्य हुआ था ।

In this connection is cited an old story in the form of a conversation which was held between *Sudhanwa* and *Viroçana*, who were suitors for *Keśini's* hand.

स्वयंवरे स्थिता कन्या केशिनी नाम नामतः ।

रूपेणाप्रतिमा राजन् विशिष्टपतिकाम्यया ॥६॥

भावार्थ—हे राजन् ! केशिनी नामक अनुपम रूपवती कन्या उत्तम पति-प्राप्ति की इच्छा से स्वयंवर के लिए तत्पर हुई ।

O king ! once upon a time, there was a maiden, named *Keśini*, unrivalled for her beauty. Moved by the desire of obtaining a good husband, she resolved to choose her lord in a *Svayamvara*.

विरोचनोऽथ दैतेयस्तदा तत्राजगाम ह ।

प्राप्तुमिच्छंस्ततस्तत्र दैत्येन्द्रं प्राह केशिनी ॥७॥

भावार्थ—स्वयंवर आरम्भ होने पर दैत्यवंशी विरोचन भी केशिनी को चाहता हुआ वहाँ आ पहुँचा । उस समय केशिनी ने दैत्यराज से पूछा—

When the *Svayaṁvara* took place, then one of the sons of *Diti*, *Viroçana* by name, came at the spot, desirous of obtaining the madien's hand. Beholding that chief of the *Daityās*, *Keśini* addressed him thus—

केशिन्युवाच

किं ब्राह्मणाः स्विच्छ्रेयांसो दितिजाः स्विद्विरोचन ।

अथ केन स्म पर्यङ्कं सुधन्वा नाधिरोहति ॥८॥

भावार्थ—केशिनी ने कहा—हे विरोचन ! ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं अथवा दैत्य ? यदि ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं तो मेरे पलङ्ग पर सुधन्वा क्यों न चढ़े, अर्थात् मेरा विवाह उसी के साथ क्यों न हो ?

Keśini asked—O *Viroçana* ! Are the *Brāhmaṇās* superior or the *Daityās*—the sons of *Diti*? If the *Brāhmaṇās* are superior, why should not *Sudhanwa*, sleep on my bed i.e. why should not I be married to him.

विरोचन उवाच

प्राजापत्यास्तु वै श्रेष्ठा वयं केशिनि सत्तमाः ।

अस्माकं खल्विमे लोकाः के देवाः के द्विजातयः ॥६॥

भावार्थ—विरोचन बोला—हे केशिनि ! प्रजापति की सन्तान हम दानव ही श्रेष्ठ और उत्तम हैं। पृथिवी आदि सारे लोक हमारे ही हैं। हमारे सम्मुख देवों और ब्राह्मणों की क्या गणना है ?

Viroçana said—O *Keśini* ! we, who sprung from *Prajāpaṭi* himself, are the best and at the top of all the creatures. This world is ours without doubt. Who are the gods and who are the *Brāhmaṇās* in comparison to us.

केशिन्युवाच

इहैवावां प्रतीक्षाव उपस्थाने विरोचन ।
सुधन्वा प्रातरागन्ता पश्येयं वां समागतौ ॥१०॥

भावार्थ—केशिनी ने कहा—हे विरोचन ! हम दोनों यहाँ स्वयंवर-स्थल पर ही सुधन्वा की प्रतीक्षा करें। सुधन्वा कल प्रातः यहाँ आएगा। मैं एक स्थान पर उपस्थित हुए तुम दोनों को देखना चाहती हूँ।

Keśini said—O *Viroçana* ! Let us stay here in this very pavilion and wait for *Sudhanwā*. He will reach here to-morrow. I want to see both of you sitting together, at one place.

विरोचन उवाच

तथा भद्रे करिष्यामि यथा त्वं भीरु भाषसे ।
सुधन्वानं च मां चैव प्रातर्द्रष्टासि सङ्गतौ ॥११॥

भावार्थ—विरोचन बोला—हे कल्याणि ! जैसा तुम कहती हो, मैं वैसा ही करूँगा। हे भीरु ! कल प्रातः हम दोनों एक-साथ उपस्थित होंगे, तब तू हम दोनों को एक-साथ देख सकेगी।

Viroçana said—O harbinger of good luck ! I will do whatever you say. O timid girl ! we shall be present to-morrow morning. You will behold both of us together.

विदुर उवाच

अतीतायां च शर्वर्यामुदिते सूर्यमण्डले ।
अथाजगाम तं देशं सुधन्वा राजसत्तम ।
विरोचनो यत्र विभो केशिन्या सहितः स्थितः ॥१२॥

भावार्थ—विदुर बोले—हे राजसत्तम ! प्रभो ! रात्रि के व्यतीत होने और सूर्यमण्डल के उदित होने पर सुधन्वा उस स्थान पर आया, जहाँ विरोचन केशिनी के साथ ठहरा हुआ था।

Vidura continued—O the best among the kings ! Lord ! when the night had passed away and the solar disc had risen, *Sudhanwā* came to the place where *Viroçana* was staying and waiting along with *Keśini.*

समागतं द्विजं दृष्ट्वा केशिनी भरतर्षभ।
प्रत्युत्थायासनं तस्मै पाद्यमर्घ्यं ददौ पुनः ॥१३॥

भावार्थ—हे भरतकुलश्रेष्ठ ! सुधन्वा ब्राह्मण को अपने घर पर आया हुआ देखकर केशिनी ने उठकर आदरपूर्वक उसे पाद्य, अर्घ्य और आसन दिया।

O the best among the *Bharata* race ! Beholding the *Brāhmana Sudhanwa* arrived at her place, *Keśini* got up and respectfully offered him water to wash his feet and mouth and a seat to sitdown.

सुधन्वोवाच

अन्वालभे हिरण्मयं प्राह्लादे ते वरासनम्।
एकत्वमुपसम्पन्नो न त्वासेऽहं त्वया सह ॥१४॥

भावार्थ—सुधन्वा बोला—हे प्रह्लादपुत्र विरोचन ! मैं तुम्हारे सुवर्ण-निर्मित श्रेष्ठ आसन का केवल स्पर्श कर सकता हूँ। मैं तुम्हारे साथ एक आसन पर बैठ नहीं सकता, क्योंकि तुम मेरे बराबर नहीं हो, मैं तुमसे श्रेष्ठ हूँ।

On being asked by *Viroçana* to share his seat, *Sudhanwā* said—O *Virocana* ! Son of *Prahlāda* ! I can only touch your excellent golden seat. I cannot, however, sit by your side, because you are not my equal, I am superior to you.

***विशेष**—यहाँ एक विसंगति है। सुधन्वा को आसन केशिनी ने दिया था, विरोचन ने नहीं। मूल महाभारत से इस विसंगति का कोई समाधान प्राप्त नहीं होता।*

***Note**—Here is a contradiction. The seat was offered to* Sudhanwā *by* Keśini *and not by* Viroçana. *In* Mahābhārata *there is no explanation to this contradiction.*

विरोचन उवाच

तवार्हते तु फलकं कूर्चं वाप्यथवा बृसी ।
सुधन्वन्न त्वमर्होऽसि मया सह समासनम् ॥१५॥

भावार्थ—विरोचन बोला—हे सुधन्वन् ! तुम्हारे लिए तो लकड़ी का पटड़ा, कुशा का आसन अथवा अन्य किसी घास का आसन ही है। तुम मेरे साथ एक आसन पर बैठने के योग्य नहीं हो।

Viroçana said—O *Sudhanwan* ! A piece of wooden plank, a mat of *Kuśa* grass or ordinary straw are fit for you. You do not deserve to share the same seat with me.

***विशेष**—जैसे को तैसा सटीक उत्तर है। अपमान का फल अपमान ही होता है।*

***Note**—Tit for tat, an apt reply. The result of insulting others is to bear an insult.*

सुधन्वोवाच

पितापुत्रौ सहासीतां द्वौ विप्रौ क्षत्रियावपि ।
वृद्धौ वैश्यौ च शूद्रौ च न त्वन्यावितरेतरम् ॥१६॥

भावार्थ—सुधन्वा बोला—पिता और पुत्र दोनों एक आसन पर बैठ सकते हैं, दो ब्राह्मण, दो क्षत्रिय, दो वृद्ध वैश्य अथवा दो शूद्र भी एक-साथ बैठ सकते हैं, किन्तु अन्य दो एक-दूसरे के साथ नहीं बैठ सकते।

Sudhanwa said—Father and son, two *Brāhmaṇās* of the same age and equal learning, two *Kshatriyās,* two *Vaisyās* and two *Sudrās* can sit together on the same seat. Except these, no others can sit together.

पिता हि ते समासीनमुपासीतैव मामधः ।
बालः सुखैधितो गेहे न त्वं किञ्चन बुध्यसे ॥१७॥

भावार्थ—हे विरोचन ! तुम्हारा पिता, ऊपर बैठे हुए मेरी, नीचे बैठकर सेवा करता है। तुम अज्ञानी हो ! घर में लाड-प्यार से पलकर बड़े हुए हो, अतः तुम्हें शिष्टाचार का कुछ भी ज्ञान नहीं है।

O *Viroçana* ! Your father pays his regards and serves me, taking a seat lower than that occupied by me. You are a child, brought up in excessive fondness, therefore, you have no knowledge of etiquettes.

विरोचन उवाच

हिरण्यं च गवाश्वं च यद्वित्तमसुरेषु नः ।
सुधन्वन्विपणे तेन प्रश्नं पृच्छाव ये विदुः ॥१८॥

भावार्थ—विरोचन बोला—हे सुधन्वन् ! हम असुरों के पास जो सुवर्ण, गौ, अश्वादि पशु और धन है, उसकी शर्त लगाकर, जो इस विषय के जानकार हैं, उनसे पूछें कि हम दोनों में कौन श्रेष्ठ है ?

Viroçana said—Staking all the gold, kine, horses and every other kind of wealth that we the *Asuras* have let us O *Sudhanwan* ! ask them this question who are able to answer it, who is superior between both of us?

सुधन्वोवाच

हिरण्यं च गवाश्वं च तवैवास्तु विरोचन ।
प्राणयोस्तु पणं कृत्वा प्रश्नं पृच्छाव ये विदुः ॥१९॥

भावार्थ—सुधन्वा ने कहा—हे विरोचन ! अपना सोना, गौएँ और घोड़े तू अपने ही पास रख । हम दोनों प्राणों की बाज़ी लगाकर इस प्रश्न को उन लोगों से पूछें, जो इस विषय के जानकार हैं कि हम दोनों में कौन श्रेष्ठ है ?

Sudhanwa said—O *Viroçana* ! keep your gold, kine and horses with you. Making our lives the forfeit, let us ask them this question who are competent to tell that who is better among both of us?

***विशेष**—पण=बाज़ी, शर्त लगानी ही हो तो कठोर लगानी चाहिए ।*

***Note**—If a stake is to be made, it should be very hard.*

विरोचन उवाच

आवां कुत्र गमिष्यावः प्राणयोर्विपणे कृते ।
न तु देवेष्वहं स्थाता न मनुष्येषु कर्हिचित् ॥२०॥

भावार्थ—विरोचन बोला—हम प्राणों की बाजी लगाकर किससे पूछने

जाएँगे, क्योंकि मैं देवों और मनुष्यों को कभी भी मध्यस्थ स्वीकार नहीं करूँगा।

Viroçana said—'Wagering our lives where shall we go? Because I will not except gods and any among men as mediator.'

सुधन्वोवाच

पितरं ते गमिष्यावः प्राणयोर्विपणे कृते ।
पुत्रस्यापि स हेतोर्हि प्रह्लादो नानृतं वदेत् ॥२१॥

भावार्थ—सुधन्वा बोला—हे विरोचन ! हम प्राणों की शर्त लगाकर तुम्हारे पिता प्रह्लाद के पास चलेंगे। वे पुत्र के लिए भी मिथ्या भाषण नहीं करेंगे।

Sudhanwā said—'Having wagered our lives, we shall approach your father, because he (*Prahlāda*) will never utter an untruth even for the sake of his son.'

***विशेष**—आर्यसंस्कृति का कैसा उज्ज्वल पक्ष है ! प्राचीन आर्य सर्वत्र गुणों का सम्मान करते थे।*

***Note**—What a bright aspect of Aryan culture and civilization! The Aryans of yore regarded qualities every where.*

विदुर उवाच

एवं कृतपणौ क्रुद्धौ तत्राभिजग्मतुस्तदा ।
विरोचनसुधन्वानौ प्रह्लादो यत्र तिष्ठति ॥२२॥

भावार्थ—विदुर बोले—इस प्रकार शर्त लगाकर क्रुद्ध हुए वे दोनों विरोचन और सुधन्वा वहाँ पहुँचे, जहाँ विरोचन का पिता प्रह्लाद बैठा था।

Viḍura says—'Having thus laid a wager, *Viroçana* and *Sudhanwā* getting enraged, proceeded to that place where *Prahlāda* was sitting'.

प्रह्लाद उवाच

इमौ तौ सम्प्रदृश्येते याभ्यां न चरितं सह ।
आशीविषाविव क्रुद्धावेकमार्गविहागतौ ॥२३॥
किं वै सहैवं चरथो न पुरा चरथः सह ।
विरोचनैतत् पृच्छामि किं ते सख्यं सुधन्वना ॥२४॥

भावार्थ—विरोचन और सुधन्वा को एक साथ विचरते देखकर प्रह्लाद ने

मन में सोचा—'जो वैर के कारण कभी एक-साथ नहीं रहे, आज वे दोनों साथ-साथ देखाई दे रहे हैं। दो भयानक सर्पों के समान क्रुद्ध हुए वे एक ही मार्ग से यहाँ आये हैं।' फिर अपने पुत्र विरोचन से पूछा—तुम पहले तो एक-साथ नहीं घूमते थे, अब साथ-साथ कैसे विचर रहे हो ? हे विरोचन ! मैं तुमसे पूछता हूँ—क्या सुधन्वा के साथ तुम्हारी मित्रता हो गई है ?

Beholding *Viroçana* and *Sudhanwā* walking together, *Prahlāda* thought to himself—'These two, who had never been companions due to enemity, are now seen walking side by side. Like two angry snakes they are coming here by the same road.' Then he asked his son *Viroçana*, 'In former times you did not move together, but now how are you walking hand in hand ?' O *Viroçana* ! I ask you, has there been friendship between you and *Sudhanwā*?

विरोचन उवाच

न मे सुधन्वना सख्यं प्राणयोर्विपणावहे ।
प्रह्लाद तत्त्वं पृच्छामि मा प्रश्नमनृतं वदेः ॥२५॥

भावार्थ—विरोचन बोला—मेरी सुधन्वा के साथ कोई मित्रता नहीं है। हम दोनों ने प्राणों की बाज़ी लगाई हुई है। हे प्रह्लाद ! वह प्रश्न मैं आपसे पूछता हूँ, आप सत्य-सत्य कहना, झूठ मत बोलना।

Viroçana said—There is no friendship between me and *Sudhanwā*. On the other hand, we have both staked our lives. O *Prahlāda* ! I shall ask you that question, kindly tell the truth, do not tell a lie.

प्रह्लाद उवाच

उदकं मधुपर्कं वाप्यानयन्तु सुधन्वने ।
ब्रह्मन्नभ्यर्चनीयोऽसि श्वेता गौः पीवरीकृता ॥२६॥

भावार्थ—प्रह्लाद बोला—सुधन्वा के लिए जल और मधुपर्क लाओ। (अपने सेवकों से इतना कहकर वे सुधन्वा से बोले—) हे ब्रह्मन् ! आप पूजनीय हैं। हृष्ट-पुष्ट की हुई सफेद गौ भी आपकी सेवा में उपस्थित है।

Then *Prahlāda* ordered his servants, 'Let water, honey and curd be brought for *Sudhanwā*'. (Saying so to his servants, he said to

Sudhanwā) 'O *Brāhmaṇa* ! you deserve our worship. A white, stout and robust cow is also ready for you.'

सुधन्वोवाच

उदकं मधुपर्कं च पथिष्वेवार्पितं मम ।
प्रह्लाद त्वं तु मे तथ्यं प्रश्नं प्रब्रूहि पृच्छतः ।
किं ब्राह्मणाः स्विच्छ्रेयांस उताहो स्विद्विरोचनः ॥२७॥

भावार्थ—सुधन्वा बोला—हे प्रह्लाद ! जल और मधुपर्क तो मुझे मार्ग में ही (निर्णयार्थ चलने पर) प्राप्त हो चुका है। आप तो बस, मुझ जिज्ञासु के प्रश्न का यथार्थ उत्तर दो। कृपया बताइए, ब्राह्मण (सुधन्वा) श्रेष्ठ हैं अथवा विरोचन?

Sudhanwā said—'O *Prahlāda* ! Water, honey and curd have been presented to me on my way (setting out for judgment) hither. You only answer truly my question, which I am eager to know. Please tell me whether the *Brāhmaṇās* (*Sudhanwā*) are superior or *Viroçana*—the *Asuras* ?'

प्रह्लाद उवाच

पुत्र एको मम ब्रह्मंस्त्वं च साक्षादिहास्थितः ।
तयोर्विवदतोः प्रश्नं कथमस्मद्विधो वदेत् ॥२८॥

भावार्थ—प्रह्लाद बोला—हे ब्रह्मन् ! मेरा एक ही पुत्र है और तुम भी साक्षात् यहाँ उपस्थित हो। तुम दोनों विवादकारियों के प्रश्न का उत्तर मेरे-जैसा व्यक्ति कैसे दे सकता है ?

Prahlada said—'O *Brāhaman*! This one is my only son. You are also present here in person. How can a person like me answer a question over which both of you have quarrelled ?'

सुधन्वोवाच

गां प्रदद्यास्त्वौरसाय यद्वाऽन्यत्स्यात्प्रियं धनम् ।
द्वयोर्विवदतोस्तथ्यं वाच्यं च मतिमंस्त्वया ॥२९॥

भावार्थ—सुधन्वा बोला—आप अपने औरस पुत्र को पृथिवी का राज्य अथवा अन्य प्रिय धन देकर तृप्त कर लेना, परन्तु हे मतिमन् ! हम दोनों विवाद-कारियों के प्रश्न का यथार्थ उत्तर ही देना, असत्य मत बोलना, सत्य ही कहना।

Sudhanwā said—'Satisfy your son by giving him the kingdom of the earth and other precious wealth that you may possess, but O wiseman! you should not tell a lie, you should declare the truth, for which we two are disputing.

प्रह्लाद उवाच

अथ यो नैव प्रब्रूयात्सत्यं वा यदि वाऽनृतम् ।
एतत् सुधन्वन्पृच्छामि दुर्विवक्ता स्म किं वसेत् ॥३०॥

भावार्थ—प्रह्लाद बोला—हे सुधन्वन् ! मैं यह जानना चाहता हूँ कि जो व्यक्ति प्रश्न के उत्तर में सत्य-झूठ कुछ भी न बोले अथवा अन्याययुक्त उत्तर दे, उसे क्या फल मिलता है ?

Prahlāda said—'O *Sudhanwan* ! I want to know, if a person neither speaks truth nor tells a lie but remains silent or answers unjustly, a question which is put to him, how does the misuse of his tongue suffer ?'

सुधन्वोवाच

यां रात्रिमधिविन्ना स्त्री यां चैवाक्षपराजितः ।
यां च भाराभितप्ताङ्गो दुर्विवक्ता स्म तां वसेत् ॥३१॥

भावार्थ—सुधन्वा बोला—परित्यक्ता स्त्री रात्रि में अपने पति को सौत के पास सोता देखकर जो दुःख सहती है, जुए में हारा हुआ व्यक्ति रात्रि में जैसे बेचैन होता है और भार ढोने से पीड़ित अङ्गोंवाला जैसे रात्रि बिताता है, उसी प्रकार अन्याययुक्त उत्तर देनेवाला रात्रि बिताता है।

Sudhanwā said—'The person who misuses his tongue suffers like the deserted wife, who pines, at night, beholding her husband sleeping in the arms of a co-wife, he is restless like a person who has lost his wealth at dice, and he spends his night like a person whose body is suffering on account of lifting unbearable load.'

नगरे प्रतिरुद्धः सन् बहिर्द्वारे बुभुक्षितः ।
अमित्रान् भूयसः पश्येद् यः साक्ष्यमनृतं वदेत् ॥३२॥

भावार्थ—नगर में प्रवेश करने से रोका हुआ अथवा नगर के द्वार के बाहर भूखा पड़ा हुआ और बहुत-से शत्रुओं से घिरा हुआ मनुष्य जिस दुःख को अनुभव करता है, वही दुःख मिथ्या साक्षी देनेवाले को होता है।

He who gives false evidence is destined to bear the same misery and trouble, which a man feels who has been prevented to enter in the city or who is starving outside the gate of the city or who is surrounded with many foes.

पञ्च पश्वनृते हन्ति दश हन्ति गवानृते ।
शतमश्वानृते हन्ति सहस्रं पुरुषानृते ॥३३॥

भावार्थ—भेड़-बकरी आदि साधारण पशु की प्राप्ति के लिए झूठ बोलनेवाले को पाँच मनुष्यों की हत्या का पाप लगता है, गौ के लिए झूठ बोलने में दस मनुष्यों के वध का, अश्व=घोड़े के लिए झूठ बोलने में सौ मनुष्यों के वध का और पुरुष के लिए झूठी साक्षी देने में एक सहस्र मनुष्यों के वध का पाप लगता है, अतः मिथ्या कभी नहीं बोलना चाहिए ।

He who tells a lie in order to get an ordinary animal like a goat and sheep, is guilty of killing five men. He who speaks a lie on account of a cow is guilty of killing ten men. He who speaks a lie on account of a horse, is guilty of killing hundred men. He who speaks a lie on account of a man, is guilty of killing one thousand men. Therefore, a man should never tell a lie or give a false evidence.

हन्ति जातानजातांश्च हिरण्यार्थेऽनृतं वदन् ।
सर्वं भूम्यनृते हन्ति मा स्म भूम्यनृतं वदेः ॥३४॥

भावार्थ—सुवर्ण के लिए झूठ बोलनेवाला अपने उत्पन्न और अनुत्पन्न हुए सभी पुत्रों को मार डालता है (सभी को मिथ्या बोलने के कलंक से दूषित कर डालता है) । भूमि के लिए झूठ बोलनेवाला सब कुलवालों की हत्या कर देता है, अतः तुम भूमि=केशिनी के लिए झूठ मत बोलना ।

A man who speaks untruth on account of gold ruins or kills the members of one's race both born and unborn (he blemishes all the members of his family by telling a lie). A man who speaks untruth for earth, ruins everything and kills all the members of his family. Therefore, do not speak an untruth for *Bhumi* (भूमि) i.e. Keśini.

***विशेष**—भूमि से यहाँ केशिनी की ओर संकेत है । कहने का भाव यह है कि हे प्रह्लाद ! तुम भूमि-तुल्य केशिनी को अपनी पुत्र-वधू बनाने के लिए असत्य मत बोलना, अन्यथा तुम महापातकी बन जाओगे ।*

Note—*Here the word 'भूमि' points out towards Keśini. The purport of the verse is that O Prahlāda! in order to make Keśini, the wife of your son, who is like earth, do not tell a lie, otherwise you will become a great sinner.*

प्रह्लाद उवाच

मत्तः श्रेयानङ्गिरा वै सुधन्वा त्वद् विरोचन ।
माताऽस्य श्रेयसी मातुस्तस्मात्त्वं तेन वै जितः ॥३५॥

भावार्थ—प्रह्लाद बोला—हे विरोचन ! सुधन्वा का पिता अङ्गिरा सचमुच मुझसे श्रेष्ठ है और सुधन्वा तुझसे श्रेष्ठ है। इसकी माता तेरी माता से उत्तम है, अतः तू इस सुधन्वा से हार गया है।

O *Viroçana* ! *Angira* (father of *Sudhanwā*) is indeed superior to me and *Sudhanwā* is superior to you. Mother of *Sudhanwā* is also superior to your mother, therefore, you have been defeated by *Sudhanwā*.

विरोचन सुधन्वायं प्राणानामीश्वरस्तव ।
सुधन्वन्पुनरिच्छामि त्वया दत्तं विरोचनम् ॥३६॥

भावार्थ—हे विरोचन ! अब यह सुधन्वा तेरे प्राणों का स्वामी है, क्योंकि तू शर्त हार गया है। (विरोचन से ऐसा कहकर प्रह्लाद ने सुधन्वा से कहा—) हे सुधन्वन् ! मैं तुझसे अपने पुत्र विरोचन के जीवन की भीख माँगता हूँ।

O *Viroçana* ! This *Sudhanwā* is now the master of your life because you have lost the stake. (Saying so to *Viroçana*, he said to *Sudhanwā*—) "O *Sudhanwan* ! I wish that you should grant *Viroçana* his life."

सुधन्वोवाच

यद्धर्ममवृणीथास्त्वं न कामादनृतं वदीः ।
पुनर्ददामि ते पुत्रं तस्मात्प्रह्लाद दुर्लभम् ॥३७॥

भावार्थ—सुधन्वा ने कहा—हे प्रह्लाद ! क्योंकि तुमने धर्म को स्वीकार किया, प्रश्न का यथार्थ उत्तर दिया, कामना के वशीभूत होकर झूठ नहीं बोला, इसलिए मैं तुम्हारे इकलौते पुत्र को तुम्हें वापस सौंपता हूँ, शर्त हार जाने पर भी इसे जीवन प्रदान करता हूँ।

Sudhanwā said—'O *Prahlāda* ! you have embraced religion, you have given the true answer to the question. You have not told a lie even by temptation, therefore, even after losing the stake I grant your only son his life who is dear to you.

विशेष—*प्रह्लाद ने सत्य बोलकर उसका फल भी तुरन्त पा लिया।*

Note—*Prahlāda by speaking truth got its fruit in no time.*

एषः प्रह्लाद पुत्रस्ते मया दत्तो विरोचनः ।
पादप्रक्षालनं कुर्यात् कुमार्याः सन्निधौ मम ॥३८॥

भावार्थ—हे प्रह्लाद ! मैंने तुम्हारे पुत्र को जीवनदान दे दिया। अब यह केशिनी के सम्मुख मेरे पैर धोये। केशिनी के समक्ष मेरे पैर धोकर अपनी अपेक्षा मेरी श्रेष्ठता प्रकट करे।

O *Prahlāda* ! Here is your son. I have restored his life. Now, he will have to wash my feet in presence of maiden *Keśini* in order to prove my superiorty.

विशेष—*हमारे विचार में श्लोक संख्या ५ से लेकर ३८ तक सारा प्रकरण व्यर्थ में मिलाया गया है। विदुरजी कहना चाहते हैं कि भूमि=राज्य के लिए भी असत्य भाषण नहीं करना चाहिए, परन्तु इस इतिहास में भूमि के सम्बन्ध में विवाद न होकर केशिनी नामक एक स्त्री के सम्बन्ध में विवाद है। इन श्लोकों के न होने पर भी प्रकरण तथा उपदेश की तारतम्यता में कोई अन्तर नहीं आता।*

Note—*In my humble opinion this whole story beginning from verse 5 upto 38 is an interpolation.* Viḍura *wants to say that man should not tell a lie even for the sake of भूमि=kingdom. But in this legend, there is no quarrel about land, instead the quarrel is for a maiden* Keśini. *In the absence of these verses too, the continuity of the sermon is not affected even the least.*

विदुर उवाच

तस्माद्राजेन्द्र भूम्यर्थे नानृतं वक्तुमर्हसि ।
मा गमः ससुतामात्यो नाशं पुत्रार्थमब्रुवन् ॥३९॥

भावार्थ—**विदुर बोले**—हे राजेन्द्र ! भूमि (राज्य) के लिए तुम्हें झूठ बोलना उचित नहीं है। पुत्रों के लिए झूठ बोलकर तुम पुत्र और मन्त्रियोंसहित नाश को प्राप्त मत होओ, यह मेरी कामना है।

Viḍura said—'O king of kings ! for these reasons, it does not befit you to speak untruth for the sake of earth (kingdom). Telling untruth out of affection for your sons, haste not the destruction of all your children and counsellors. It is my heartiest desire.

न देवा दण्डमादाय रक्षन्ति पशुपालवत् ।
यं तु रक्षितुमिच्छन्ति बुद्ध्या संविभजन्ति तम् ॥४०॥

भावार्थ—देवगण=दैवी शक्तियाँ चरवाहे की भाँति हाथ में दण्डा लेकर किसी की रक्षा नहीं करते। वे जिसकी रक्षा करना चाहते हैं, उसे बुद्धि से संयुक्त कर देते हैं।

The gods, i.e. divine powers, or agencies or learned men, do not protect men with rods in their hands just like herdsmen, however, whom they wish to protect, they grant him intelligence.

यथा यथा हि पुरुषः कल्याणे कुरुते मनः ।
तथा तथास्य सर्वार्थाः सिध्यन्ते नात्र संशयः ॥४१॥

भावार्थ—जैसे-जैसे मनुष्य शुभ कार्यों में मन लगाता है, वैसे-वैसे उसकी सभी इच्छाएँ पूर्ण हो जाती हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

As soon as a man directs his attention towards righteous and moral acts, than all his wishes are fulfilled. There is no doubt in this matter.

नैनं छन्दाँसि वृजिनात्तारयन्ति
मायाविनं मायया वर्तमानम् ।
नीडं शकुन्ता इव जातपक्षाश्
छन्दाँस्येनं प्रजहत्यन्तकाले ॥४२॥

भावार्थ—छल-कपट से व्यवहार करनेवाले मायावी मनुष्य को वेद भी पापकर्म के फलभोग से नहीं बचा सकते, अपितु जैसे पंख निकल आने पर पक्षी घोंसलों को छोड़ देते हैं, उसी प्रकार अन्त समय में वेद भी इस मायावी का त्याग कर देते हैं।

The Veḍās never rescue a deceitful person living by fraudulent deception from the reward of sinful acts. On the other hand, they forsake him, while he is on his death-bed, just like newly fledged

birds forsake their nests.

***विशेष**—वेदाध्ययन पापाचरण और पापकर्म के फलभोग से बचाता है; परन्तु जो जान-बूझकर पाप करता है, ऐसे मायावी को वेदाध्ययन से भी कोई लाभ नहीं होता।*

Note—*The study of the* Vedas *protects a man from the sinful acts and their rewards, but for a deceitful person—a man who commits sins knowingly, the study of the* Vedas *is of no use.*

मद्यपानं कलहं पूगवैरं
भार्यापत्योरन्तरं ज्ञातिभेदम्।
राजद्विष्टं स्त्रीपुंसयोर्विवादं
वर्ज्यान्याहुर्यश्च पन्थाः प्रदुष्टः॥४३॥

भावार्थ—मद्यपान, लड़ाई-झगड़ा करना, समुदाय से विरोध, पत्नी और पति में फूट डालना, सम्बन्धियों में भेद=फूट उत्पन्न करना, राजा से द्वेष करना, स्त्री और पुरुषों में विवाद कराना और अत्यन्त दुष्ट मार्ग—इन सबको त्याज्य कहते हैं। हे धृतराष्ट्र! ज्ञातिभेद और कलहरूपी कर्म त्याज्य हैं, इनमें प्रवृत्त होना ठीक नहीं है।

Drinking, quarrelling, hostility with a community, creation of disunity between husband and wife, creation of discord between the relatives, disloyalty to the king, setting men and women at quarrelling—these and all paths that are sinful, should, it is said, be renounced. O *Dhṛtrāṣtra* ! Discord among relatives and acts like quarrelling are to be avoided. Inclination towards them is not good.

सामुद्रिकं वणिजं चोरपूर्वं
शलाकधूर्तं च चिकित्सकं च।
अरिं च मित्रं च कुशीलवं च
नैतान् साक्ष्ये त्वधिकुर्वीत सप्त॥४४॥§

भावार्थ—ज्योतिषी, जो पहले चोर रहा हो पीछे बनिया बन गया हो, ऐसे

§ इस श्लोक के पश्चात् 'मानाग्निहोत्र' इत्यादि श्लोक है। यह श्लोक 'चत्वारि कर्माणि' से आरम्भ होकर प्रथमाध्याय का ७१वाँ श्लोक है। पुनरुक्त होने के कारण प्रक्षिप्त है।

व्यापारी, जुआरी, चिकित्सक, शत्रु, मित्र और नाचने-गानेवाले—इन सात को साक्ष्य में कभी प्रमाण न माने, (क्योंकि विभिन्न कारणों से ये मिथ्या साक्षी देंगे)।

An astrologer or palmist, a thief turned into a merchant, a gambler, a physician, a foe, a friend and a ministrel—these seven are incompetent as witnesses (because due to different reasons they will give false evidence).

आगारदाही गरदः कुण्डाशी सोमविक्रयी ।
पर्वकारश्च सूची च मित्रध्रुक् पारदारिकः ॥४५॥
भ्रूणहा गुरुतल्पी च यश्च स्यात्पानपो द्विजः ।
अतितीक्ष्णश्च काकश्च नास्तिको वेदनिन्दकः ॥४६॥
स्रुवप्रग्रहणो व्रात्यः कीनाशश्चात्मवानपि ।
रक्षेत्युक्तश्च यो हिंस्यात्सर्वे ब्रह्महभिः समाः ॥४७॥

भावार्थ—दूसरों का घर जलानेवाला, विष देनेवाला, व्यभिचार से जीविका चलानेवाला, सोमरस बेचनेवाला, आयुध=हथियार बनानेवाला, चुग़ली करनेवाला अथवा ज्योतिषी, मित्रद्रोही, पर-स्त्रीगामी, भ्रूण-हत्या करनेवाला, गुरुपत्नीगामी, शराब पीनेवाला ब्राह्मण, अत्यन्त कठोर, अपवित्र और काक के समान मर्म कुरेदनेवाला, नास्तिक, वेदनिन्दक, अयाज्ययाजी, पतित, पतितों के साथ भोजन करनेवाला अथवा पशुओं का घातक और शरणागतघाती—ये सब ब्रह्महत्यारे के समान माने जाते हैं।

One who sets fire to a dwelling house, an administerer of poison, a pander, a vendor of the *Soma* juice, a maker of arrows, a back-biter or an astrologer, one who is hostile towards his friends, an adulterer, one who kills an embryo, a violater of his preceptor's bed, a *Brāhmaṇa* addicted to drink, one who is hard hearted (or one who is sharp-speeched), one who is impious and like a crow is a raker of old sores, an atheist—a reviler of the *Vedās*, one appropriating a ladle at every time or one who is ready to perform *Yajña* of all and sundry without considering their eligibility, one who is degraded or one whose ceremony of sacred-thread has been delayed beyond the prescribed age, one who dines with the sinful or who secretly slays cattle, and one that slays him who prays for protection—these all are reckoned as equal in moral turpitude as the slayers of the *Brāhmaṇas*.

तृणोल्कया ज्ञायते जातरूपं
वृत्तेन भद्रो व्यवहारेण साधुः ।
शूरो भयेष्वर्थकृच्छ्रेषु धीरः
कृच्छ्रेष्वापत्सु सुहृदश्चारयश्च ॥४८॥

भावार्थ—छेदने और तपाने से सुवर्ण की पहचान होती है । सदाचार से भले मनुष्य की, बर्ताव से साधु=सज्जन की, भय में शूरवीर की, अर्थ-संकट में धीर की तथा घोर आपत्ति में मित्र और शत्रु की पहचान होती है ।

Gold is tested by beating, piercing and putting it into fire, a well-born person by his righteousness, an honest man by his conduct. A brave man is tested at the time of danger, he who is self-controlled in times of poverty, and friends and foes in times of calamity.

जरा रूपं हरति हि धैर्यमाशा
मृत्युः प्राणान् धर्मचर्यामसूया ।
क्रोधः श्रियं शीलमनार्यसेवा
ह्रियं कामः सर्वमेवाभिमानः ॥४९॥

भावार्थ—बुढ़ापा रूप-सौन्दर्य को नष्ट कर देता है, आशा धैर्य को समाप्त कर देती है, मृत्यु प्राणों को हर लेती है, असूया=डाह, निन्दा धर्माचरण पर पानी फेर देती है, क्रोध शोभा को नष्ट कर देता है, दुष्टों की संगति उत्तम स्वभाव को नष्ट कर देती है, विषय-वासना की आँधी लज्जा के दीपक को बुझा देती है और अभिमान सारे गुणों पर चौका लगा देता है ।

Old age destroys beauty; ambitious hopes destroy courage, death takes away life, envy puts an end to righteousness, anger destroys splendour, companionship with the mean destroys good behaviour, lust puts out modesty and pride ruins everything.

श्रीर्मङ्गलात्प्रभवति प्रागल्भ्यात्सम्प्रवर्धते ।
दाक्ष्यात्तु कुरुते मूलं संयमाच्च प्रतिष्ठते ॥५०॥

भावार्थ—उत्तम कार्यों से धन-सम्पत्ति की प्राप्ति होती है, चतुरतापूर्वक कार्य करने से यह बढ़ती है, शीघ्र कार्य करने से उसकी जड़ जमती है और इन्द्रियों

को वश में रखने से यह स्थिर रहती है।

Prosperity takes its birth from good deeds, grows in consequence of intelligent and skilful activity, drives its roots deep in consequence of quick performance of deeds and acquires stability owing to self-control.

अष्टौ गुणाः पुरुषं दीपयन्ति
प्रज्ञा च कौल्यं च दमः श्रुतं च।
पराक्रमश्चाबहुभाषिता च
दानं यथाशक्ति कृतज्ञता च ॥५१॥

भावार्थ—हे राजन्! दूरदर्शिनी बुद्धि, कुलीनता, मन और इन्द्रियों का निग्रह, शास्त्र-अध्ययन, पराक्रम, मितभाषण, अपनी शक्ति के अनुसार दान देना और किये हुए उपकार को मानना—ये आठ गुण मनुष्य को चमका देते हैं, उसकी कीर्ति को फैला देते हैं।

O king! wisdom, good lineage, self-control, acquaintance with the scriptures, prowess, speaking little, charity to the extent of one's power and gratefulness—these eight qualities shed a lustre upon his possessor—bring fame for him.

एतान् गुणाँस्तात महानुभावा-
नेको गुणः संश्रयते प्रसह्य।
राजा यदा सत्कुरुते मनुष्यं
सर्वान् गुणानेष गुणो विभाति ॥५२॥

भावार्थ—हे तात! बुद्धि आदि आठ महातेजस्वी गुणों को दबाकर जब राज-सत्काररूप एक गुण प्राप्त होता है, तब यह राज-सत्काररूपी गुण अन्य सभी गुणों को चमका देता है, अर्थात् राज-सत्कार से जिनमें ये स्वाभाविक गुण न हों, उनमें भी प्रकट हो जाते हैं।

O sire! there is one endowment which alone can cause all the eight attributes to come together i.e. when the king honours a particular person, the royal favour can cause all these attributes to shed their lustre on that favourite.

अष्टौ नृपेमानि मनुष्यलोके
स्वर्गस्य लोकस्य निदर्शनानि ।
चत्वार्येषामन्ववेतानि सद्भिश्
चत्वारि चैषामनुयान्ति सन्तः ॥५३॥

भावार्थ—हे राजन् ! संसार में आठ गुण ऐसे हैं जो स्वर्गलोक का ज्ञान करानेवाले हैं। इनमें से चार गुण तो ऐसे हैं जो सज्जनों के पीछे चलते हैं और शेष चार गुण ऐसे हैं जिनका सज्जन अनुगमन करते हैं, अर्थात् दुष्ट लोग इनसे दूर ही रहते हैं।

O king ! there are eight qualities in this world, which are indications of heaven. Of the eight (enumerated below) four are inseparably connected with the good and remaining four are always followed by the good—i.e. the wicked keeps aloof from them.

यज्ञो दानमध्ययनं तपश्च
चत्वार्येतान्यन्ववेतानि सद्भिः ।
दमः सत्यमार्जवमानृशंस्यं
चत्वार्येतान्यनुयान्ति सन्तः ॥५४॥

भावार्थ—यज्ञ, दान, अध्ययन और तप—ये चार गुण तो सज्जनों के पीछे चलते हैं, अर्थात् उनमें अवश्य होते हैं तथा दम, सत्य, सरलता और दया—इन चार का सज्जन प्रयत्नपूर्वक सेवन करते हैं।

The first four which are inseparably connected with the good are—to perform *Yajña*, charity, study of the scriptures and asceticism, while the other four which are followed by the good are—self-restraint, truthfulness, simplicity and compassion or abstention from injury.

इज्याध्ययनदानानि तपः सत्यं क्षमा घृणा ।
अलोभ इति मार्गोऽयं धर्मस्याष्टविधः स्मृतः ॥५५॥
तत्र पूर्वचतुर्वर्गो दम्भार्थमपि सेव्यते ।
उत्तरश्च चतुर्वर्गो नामहात्मसु तिष्ठति ॥५६॥

अष्टौ नृपेमानि मनुष्यलोके
स्वर्गस्य लोकस्य निदर्शनानि ।
चत्वार्येषामन्ववेतानि सद्भिश्
चत्वारि चैषामनुयान्ति सन्तः ॥५३॥

भावार्थ—हे राजन् ! संसार में आठ गुण ऐसे हैं जो स्वर्गलोक का ज्ञान करानेवाले हैं। इनमें से चार गुण तो ऐसे हैं जो सज्जनों के पीछे चलते हैं और शेष चार गुण ऐसे हैं जिनका सज्जन अनुगमन करते हैं, अर्थात् दुष्ट लोग इनसे दूर ही रहते हैं।

O king ! there are eight qualities in this world, which are indications of heaven. Of the eight (enumerated below) four are inseparably connected with the good and remaining four are always followed by the good—i.e. the wicked keeps aloof from them.

यज्ञो दानमध्ययनं तपश्च
चत्वार्येतान्यन्ववेतानि सद्भिः ।
दमः सत्यमार्जवमानृशंस्यं
चत्वार्येतान्यनुयान्ति सन्तः ॥५४॥

भावार्थ—यज्ञ, दान, अध्ययन और तप—ये चार गुण तो सज्जनों के पीछे चलते हैं, अर्थात् उनमें अवश्य होते हैं तथा दम, सत्य, सरलता और दया—इन चार का सज्जन प्रयत्नपूर्वक सेवन करते हैं।

The first four which are inseparably connected with the good are—to perform *Yajña*, charity, study of the scriptures and asceticism, while the other four which are followed by the good are—self-restraint, truthfulness, simplicity and compassion or abstention from injury.

इज्याध्ययनदानानि तपः सत्यं क्षमा घृणा ।
अलोभ इति मार्गोऽयं धर्मस्याष्टविधः स्मृतः ॥५५॥
तत्र पूर्वचतुर्वर्गो दम्भार्थमपि सेव्यते ।
उत्तरश्च चतुर्वर्गो नामहात्मसु तिष्ठति ॥५६॥

भावार्थ—यज्ञ, अध्ययन, दान, तप, सत्यभाषण, क्षमा, दया और लोभ-त्याग—यह धर्म का आठ प्रकार का मार्ग कहा गया है। इनमें से प्रथम चार (यज्ञ, अध्ययन दान और तप) को दुर्जन लोग दम्भ=दिखावे के लिए भी सेवन कर सकते हैं, परन्तु अगले चार गुण (सत्य, क्षमा, दया और लोभ-त्याग) ये दुर्जनों में कभी नहीं रह सकते।

Performance of *Yajña,* study of the sacred scriptures, charity, asceticism, truthfulness, forgiveness, compassion and absence of greed—this is the eightfold path of religion (righteouness). Out of these eight, first four may be practised from the motives of conceit, but the last four can exist only in those who are truly noble.

न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धा
वृद्धा न ते ये न वदन्ति धर्मम्।
नासौ धर्मो यत्र न सत्यमस्ति
न तत्सत्यं यच्छलेनाभ्युपेतम् ॥५७॥

भावार्थ—वह सभा ही नहीं है जिसमें वृद्ध न हों, वे वृद्ध नहीं हैं जो धर्म का कथन नहीं करते, वह धर्म नहीं है जिसमें सत्य न हो और वह सत्य नहीं है जो छल से युक्त हो।

That is no assembly where there are no old-men, and they are not old who do not declare what the religion (virtue or morality) is. That is no religion which is devoid of truth and that is not truth which is fraught with deceit.

सत्यं रूपं श्रुतं विद्या कौल्यं शीलं बलं धनम्।
शौर्यं च चित्रभाष्यं च दशेमे स्वर्गयोनयः ॥५८॥

भावार्थ—सत्यभाषण, सौन्दर्य अथवा विनीतमुद्रा, अध्ययन, विद्या, कुलीनता, शील, बल, धन, शौर्य और युक्तियुक्त वचन—ये दस स्वर्ग=सुख-प्राप्ति की सीढ़ियाँ हैं।

Truthfulness, beauty or modest mien, acquaintance with the scriptures, knowledge, high birth, good behaviour, strength, wealth, heroism and capacity of speaking to the point or varied talk—these ten are the steps which lead towards the heaven—which bestow bliss

and happiness.

पापं कुर्वन् पापकीर्तिः पापमेवाश्नुते फलम् ।
पुण्यं कुर्वन् पुण्यकीर्तिः पुण्यमत्यन्तमश्नुते ॥५६॥
तस्मात्पापं न कुर्वीत पुरुषः शंसितव्रतः ।
पापं प्रज्ञां नाशयति क्रियमाणं पुनः पुनः ॥६०॥
नष्टप्रज्ञः पापमेव नित्यमारभते नरः ।
पुण्यं प्रज्ञां वर्धयति क्रियमाणं पुनः पुनः ॥६१॥
वृद्धप्रज्ञः पुण्यमेव नित्यमारभते नरः ।
पुण्यं कुर्वन्पुण्यकीर्तिः पुण्यं स्थानं स्म गच्छति ।
तस्मात्पुण्यं निषेवेत पुरुषः सुसमाहितः ॥६२॥

भावार्थ—पापकर्म करता हुआ मनुष्य कलङ्कित होकर पापफल को ही भोगता है और शुभकर्म करनेवाला मनुष्य यशस्वी होकर पुण्यफल प्राप्त करता है, अतः पवित्रव्रती मनुष्य को पापकर्म नहीं करने चाहिएँ। बार-बार किया जाता हुआ पापकर्म बुद्धि को नष्ट कर देता है, फिर नष्टबुद्धि मनुष्य सदा पापकर्म ही करता रहता है। बार-बार किया जाता हुआ पुण्यकर्म बुद्धि को बढ़ाता है और बढ़ी हुई बुद्धिवाला मनुष्य सदा शुभकर्म ही करता है। पुण्यकर्म करनेवाला संसार में यशस्वी होता हुआ उत्तम स्थान=पद, गौरव, मान-सम्मान प्राप्त करता है, इसलिए मनुष्य को अत्यन्त सावधान होकर सदा पुण्यकर्मों का ही अनुष्ठान करना चाहिए।

A sinful person, by committing sins, becomes blemished and is overtaken by evil consequences. A virtuous man, by doing good deeds, gains fame and reaps good reward, therefore, a man of pious vow should abstain from sin. Repeatedly perpetrated sin blows out the lamp of the intelligence and the man who has lost his intelligence repeatedly commits sin. Virtue (good deeds) repeatedly done enhances the intelligence and the man whose intelligence has increased, repeatedly practises virtue. The virtuous man by practising virtue (performing good and righteous deeds) becomes famous in the world. He acquires a good position in the society. He is honoured and praised by everyone. Therefore, a man firmly resolved, should practise virtue only.

असूयको दन्दशूको निष्ठुरो वैरकृच्छठः ।
स कृच्छ्रं महदाप्नोति नचिरात्पापमाचरन् ॥६३॥

भावार्थ—जो परनिन्दक, मर्मस्थलों पर चोट करनेवाला, कठोर वचन बोलनेवाला अथवा क्रूर, वैर करनेवाला और धूर्त्त मनुष्य होता है, वह पापाचरण करता हुआ शीघ्र ही भारी विपत्ति में फँस जाता है ।

A man who is a backbiter, he who injures others' vital spots, he who speaks bitterly or who is cruel, he who is constantly hostile, he who is deceitful—soon meets great misery by practising these sins.

अनसूयुः कृतप्रज्ञः शोभनान्याचरन् सदा ।
नकृच्छ्रं महदाप्नोति सर्वत्र च विरोचते ॥६४॥

भावार्थ—परनिन्दा न करनेवाला, बुद्धिमान्, सदा शुभकर्म करनेवाला मनुष्य महान् सुख को प्राप्त होता है और सर्वत्र यश पाता है ।

He, who is not a slanderer, who is possessed of wisdom, who always practises good deeds, never suffers from misery, on the other hand, he acquires bliss and happiness, gets fame and shines everywhere.

प्रज्ञामेवागमयति यः प्राज्ञेभ्यः स पण्डितः ।
प्राज्ञो ह्यवाप्य धर्मार्थौ शक्नोति सुखमेधितुम् ॥६५॥

भावार्थ—जो मनुष्य बुद्धिमानों से ज्ञान प्राप्त करता है, वह विद्वान् होता है। विद्वान् मनुष्य धर्म और अर्थ दोनों को प्राप्त करके (अभ्युदय और निःश्रेयस, लौकिक और पारलौकिक दोनों प्रकार के) सुखों को बढ़ाने में समर्थ होता है ।

He, who draws wisdom and knowledge from them who are wise and learned, himself becomes a wise and learned. The wise attending to both virtue and wealth succeeds in attaining happiness—which is mundane and pertaining to the other world.

दिवसेनैव तत्कुर्याद्येन रात्रौ सुखं वसेत् ।
अष्टमासेन तत्कुर्याद्येन वर्षाः सुखं वसेत् ॥६६॥

भावार्थ—मनुष्य को चाहिए कि दिन में ऐसा कार्य कर ले जिससे रात्रि में

सुखपूर्वक सो सके, किसी प्रकार की चिन्ता न रहे। इसी प्रकार वर्षभर के आठ मासों में ऐसा पुरुषार्थ करे जिससे वर्षा-ऋतु में सुखपूर्वक रह सके।

A man should do such acts during the day which may enable him to pass the night in happiness—he should be without cares and anxieties. In the same way, a man should put himself in such an endeavour during the eight months of the year which may enable him to pass the rainy season happily.

पूर्वे वयसि तत्कुर्याद्येन वृद्धः सुखं वसेत्।
यावज्जीवेन तत्कुर्याद्येन प्रेत्य सुखं वसेत् ॥६७॥

भावार्थ—मनुष्य को चाहिए कि पूर्व-अवस्था (यौवन) में ही ऐसा कर्म करे जिससे वृद्धावस्था में सुख से रहे और जीवनभर ऐसे उत्तम कर्म करे जिससे मरने के पश्चात् परलोक में सुखपूर्वक रह सके।

A man should perform such acts during his youth which may ensure him a happy oldage, and during the whole of his life he should practise such acts which may enable him to live happily hereafter.

जीर्णमन्नं प्रशंसन्ति भार्यां च गतयौवनाम्।
शूरं विजितसंग्रामं गतपारं तपस्विनम् ॥६८॥

भावार्थ—खाने के पश्चात् पचे हुए अन्न की, भोगने पर यौवन ढली हुई भार्या की, युद्ध जीतनेवाले शूरवीर की और जीवन्मुक्त तपस्वी की सभी प्रशंसा करते हैं।

The wise praise the food which is digested after eating, the wife whose youth has passed away after enjoying her, the hero who is victorious and the ascetic who is free from all bonds of life.

धनेनाधर्मलब्धेन यच्छिद्रमपिधीयते।
असंवृतं तद् भवति ततोऽन्यदवदीर्यते ॥६९॥

भावार्थ—अधर्म और अन्याय द्वारा प्राप्त धन से जो छिद्र=दोष ढका जाता है, दान आदि देकर जो पापकर्म छिपाया जाता है, वह छिद्र समय पाकर नंगा हो जाता है और उससे दूसरा छिद्र फूट पड़ता है—प्रकट हो जाता है।

The fault which is covered by charity etc., from the wealth

acquired by foul means remains uncovered and in due course after sometime a new fault appears.

गुरुरात्मवतां शास्ता शास्ता राजा दुरात्मनाम् ।
अथ प्रच्छन्नपापानां शास्ता वैवस्वतो यमः ॥७०॥

भावार्थ—जितेन्द्रिय पुरुषों का मार्गदर्शक गुरु है। दुष्टों का नियन्ता राजा है और गुप्तरूप से पाप करनेवालों का नियन्ता सर्वान्तर्यामी परमात्मा है।

The preceptor is the guide and controller of those whose souls are under their own control. The king is the controller of the wicked persons, while the all-pervading and all knowing God is the controller of those who sin secretly.

ऋषीणां च नदीनां च कुलानां च महात्मनाम् ।
प्रभवो नाधिगन्तव्यः स्त्रीणां दुश्चरितस्य च ॥७१॥

भावार्थ—ऋषियों तथा महात्माओं के कुलों, नदियों के उद्‌गम स्थानों और स्त्रियों के दुराचार का कारण जानने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए।

One should not try to know the lineage of the *Ṛsis*, the source of the rivers, the birth-place of high souled men and the cause of women's wickedness.

विशेष—*नदियों का उत्पत्ति-स्थान बहुत छोटा होता है, उसे देखकर नदियों को तुच्छ नहीं समझना चाहिए। ऋषि-मुनियों के ज्ञान से लाभ उठाना चाहिए, उनके कुलों की छान-बीन नहीं करनी चाहिए। अनेक ऋषि-मुनियों के जन्म हीन कुलों में हुए हैं, होते हैं और होंगे। स्त्रियों के दुराचार का कारण भी पुरुषों का दुराचार होता है।*

Note—*The source of the rivers is very small. After beholding their source one should not think them insignificant. One should drive benefit from the knowledge of the* Ṛsis *and* Munis, *without tracing their lineage. Many of the* Ṛsis *and* Munis *were born in low families are bearing and will be born. The cause of the adultery of woman is also the adultery of man.*

द्विजातिपूजाभिरतो दाता ज्ञातिषु चार्जवी ।
क्षत्रियः शीलभाग्राजंश्चिरं पालयते महीम् ॥७२॥

भावार्थ—हे राजन् ! ब्राह्मणों के आदर-सत्कार में संलग्न, दानशील, सम्बन्धियों

के प्रति सरलता का व्यवहार करनेवाला, शीलयुक्त क्षत्रिय=राजा चिरकाल तक पृथिवी=राज्य का पालन करता है ।

O king ! he who is devoted to the worship of *Brāhmaṇās*, who is charitable, whose behaviour is straightforward towards his relatives, such a *Kshatriya*—the king, who is of good conduct and behaves nobly, rules the earth forever.

सुवर्णपुष्पां पृथिवीं चिन्वन्ति पुरुषास्त्रयः ।
शूरश्च कृतविद्यश्च यश्च जानाति सेवितुम् ॥७३॥

भावार्थ—धन-धान्य से सम्पन्न इस सुवर्णमयी पृथिवी को तीन प्रकार के मनुष्य ही भोग सकते हैं—१. शूरवीर, २. विद्वान् और ३. जो राजा आदि की यथोचित सेवा करना जानता है ।

Only three kinds of persons can enjoy this golden earth which is full of wealth and plenty, viz., he who is possessed of bravery, he who is possessed of learning, and he who knows how to serve the king and others.

बुद्धिश्रेष्ठानि कर्माणि बाहुमध्यानि भारत ।
तानि जंघाजघन्यानि भारप्रत्यवराणि च ॥७४॥

भावार्थ—हे भारत ! बुद्धि से सिद्ध होनेवाले कार्य **उत्तम** होते हैं, भुजबल से होनेवाले **मध्यम**, जो भाग-दौड़कर अथवा लुक-छिपकर कपट से किये जाते हैं वे **अधम** और जो सिर पर भार उठाकर किये जाते हैं अथवा जो करनेवाले को संकट में डाल दें, वे **नीचतर** कार्य होते हैं ।

O *Bhārata* ! Those acts accomplished by intelligence are the best; those accomplished by arms are medium; those by thighs (by hustle and bustle) or which are done secretly by deception are worst, and those by bearing weight upon head or which lead a man to adversity are very worst.

दुर्योधनेऽथ शकुनौ मूढे दुःशासने तथा ।
कर्णे चैश्वर्यमाधाय कथं त्वं भूतिमिच्छसि ॥७५॥

भावार्थ—हे राजन् ! तुम दुर्योधन, शकुनि, मूढ दुःशासन और कर्ण पर राज्यभार डालकर कल्याण की इच्छा कैसे करते हो ?

O king ! reposing the care of your kingdom upon the shoulders of *Ḍuryodhana, Śakuni,* foolish *Duśāsana* and *Karṇa*, how can you hope for prosperity?

सर्वैर्गुणैरुपेतास्तु पाण्डवा भरतर्षभ ।
पितृवत् त्वयि वर्तन्ते तेषु वर्तस्व पुत्रवत् ॥७६॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि प्रजागरपर्वणि विदुरनीतिवाक्ये पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥

॥ इति विदुरनीतौ (विदुरप्रजागरे) तृतीयोऽध्यायः ॥

भावार्थ—हे भरतकुलश्रेष्ठ ! सभी गुणों से युक्त पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर आदि आपके प्रति पिता के समान सम्मान-भरा व्यवहार करते हैं, आप भी यदि वास्तव में अपना कल्याण चाहते हैं तो उनके साथ पुत्र के समान प्रीतियुक्त व्यवहार करो।

O the best among the *Bharata* race ! possessed of all the virtues, the sons of Pāndu i.e. *Yudhiṣthira* etc., treat you with devotion just like a father. If you really wish your welfare, treat them as your own sons.

॥ यह विदुरनीति (विदुरप्रजागर) का तृतीयाध्याय सम्पूर्ण हुआ ॥

Here ends the third chapter of Vidura-Niti.

अथ चतुर्थोऽध्यायः—Forth Chapter

विदुर उवाच

अत्रैवोदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम् ।
आत्रेयस्य च संवादं साध्यानां चेति नः श्रुतम् ॥१॥

भावार्थ—विदुरजी बोले—उक्त प्रसङ्ग के अनुरूप आत्रेय और साध्यों के संवादरूप एक प्राचीन इतिहास को दृष्टान्तरूप में उपस्थित किया जाता है। हमने इसे पूर्वजों से सुना है।

Vidura said—'In this connection an old story is cited in the form of a discourse which took place between the son of *Atri* and *Sādhyās*. We have heard it from our forefathers'.

चरन्तं हंसरूपेण महर्षिं संशितव्रतम् ।
साध्या देवा महाप्राज्ञं पर्यपृच्छन्त वै पुरा ॥२॥

भावार्थ—महाबुद्धिमान्, कठोरव्रतधारी, संन्यासीरूप में विचरनेवाले महर्षि आत्रेय से प्राचीन समय में साध्य नामवाले देवों ने पूछा—

In olden days, *Sādhyā-devās* asked the most wise and great seer *Ātraya*, observer of rigid vows, while he was wandering in the guise of a *sannyasi* (who depend on alms for livelihood).

साध्या ऊचुः

साध्या देवा वयमेते महर्षे
दृष्ट्वा भवन्तं न शक्नुमोऽनुमातुम् ।
श्रुतेन धीरो बुद्धिमाँस्त्वं मतो नः
काव्यां वाचं वक्तुमर्हस्युदाराम् ॥३॥

भावार्थ—साध्यदेवगण बोले—हे महर्षे ! हम साध्य-देवगण आपका दर्शन

करके फूले नहीं समाते और आपकी योग्यता का अनुमान लगाने में असमर्थ हैं। आप ज्ञान के कारण धैर्यशाली और बुद्धिमान् प्रतीत होते हैं, इसलिए आप हमें वेद-सम्बन्धी और विद्वज्जनोचित महान् अर्थवाली वाणी सुनाने की कृपा करें, अर्थात् सद्ज्ञानगर्भित वेदवाणी का उपदेश करें।

The *Sādhyās* said—'O great seer ! We are known as *Sādhyās*. Merely having a glimpse of you our joy knows no bounds. We are unable to guess about your ability! It seems to us, however, that you are possessed of high intelligence and self-control and as a result of it, you are fully acquainted with the scriptures. Therefore, kindly deliver a discourse to us pertaining to the *Vedās* and tell us magnanimous words fraught with learning.'

हंस उवाच

एतत्कार्यममराः संश्रुतं मे
धृतिः शमः सत्यधर्मानुवृत्तिः।
ग्रन्थिं विनीय हृदयस्य सर्वं
प्रियाप्रिये चात्मसमं नयीत ॥४॥

भावार्थ—हंस बोला—हे देवो ! मैंने अपने बड़े-बूढ़ों से ये कर्तव्य-कर्म सुने हैं—धैर्य=आपत्ति और विपत्ति में भी धर्म-मार्ग में दृढ़ता, शमः=मन की शान्ति और सत्यधर्म=ब्रह्म-प्राप्ति के साधनों का निरन्तर अभ्यास—इनके द्वारा मनुष्य अपने हृदय के अज्ञान, अविद्या और संशयरूपी गाँठ को पूर्णतया खोलकर मित्र और शत्रु के साथ अपनी आत्मा के समान व्यवहार करे।

The mendicant seer (*Sannyāsi*) replied—'O gods! immortals! I have heard from my elderly men that by untying all the knots in the heart through perseverance (to remain firm in virtue, misery and trouble), tranquility of mind and observance of true religion (the practice of means which lead to God-realisation), one should regard both the friend and the foe like his ownself.'

आक्रुश्यमानो नाक्रोशेन्मन्युरेव तितिक्षतः।
आक्रोष्टारं निर्दहति सुकृतं चास्य विन्दति ॥५॥

भावार्थ—मनुष्य को चाहिए कि दूसरे से गाली खाता हुआ भी स्वयं उसे

गाली न दे, बुरा-भला न कहे, क्योंकि सहनशील का मन्यु गाली देनेवाले को जला डालता है और गाली प्रदान करनेवाले के पुण्य को प्राप्त कर लेता है, अर्थात् गाली देनेवाले के पुण्यकर्म नष्ट हो जाते हैं।

One should not return the slanders or reproaches of others—he should not reprimand, because the temper of the tolerant person burns the slanderer and he who forbears also succeeds in appropriating the virtues of the slanderer i.e. the good acts of the slanderer are annihilated.

नाक्रोशी स्यान्नावमानी परस्य
मित्रद्रोही नोत नीचोपसेवी।
न चाभिमानी न च हीनवृत्तो
रूक्षां वाचं रुषतीं वर्जयीत ॥६॥

भावार्थ—मनुष्य न तो गाली दे और न दूसरे का अपमान करे; न मित्र से द्रोह करे और न नीचों की सेवा और सङ्गति करे; न अभिमानी हो और न भ्रष्ट चरित्रवाला हो और रूखी, कठोर तथा दूसरों को पीड़ा पहुँचानेवाली वाणी को त्याग दे।

A man neither should abuse others nor humiliate and insult others. He should not be hostile towards his friends, he should abstain from the company of those who are vile and low. Neither he should be arrogant nor ignoble in conduct. He should avoid the speech which is harsh, fraught with anger and tormenting.

मर्माण्यस्थीनि हृदयं तथासून्
रूक्षा वाचो निर्दहन्तीह पुंसाम्।
तस्माद् वाचमुषतीमुग्ररूपां
धर्मारामो नित्यशो वर्जयीत ॥७॥

भावार्थ—इस जगत् में रूखी और कठोर वाणियाँ मनुष्य के मर्मस्थलों, हड्डियों, हृदय और प्राणों को जला डालती हैं, अतः धर्मात्मा लोगों को चाहिए कि वे सदा रूखी, कठोर और जलानेवाली वाणी का त्याग करें।

The harsh words in this world burn and scorch the vital spots,

bones, heart and the very sources of the life of men. Therefore, he who is virtuous should shun away from harsh and angry words.

अरुन्तुदं परुषं रूक्षवाचम्
वाक्कण्टकैर्वितुदन्तं मनुष्यान् ।
विद्यादलक्ष्मीकतमं जनानां
मुखे निबद्धां निर्ऋतिं वहन्तम् ॥८॥

भावार्थ—मर्मस्थलों को विदीर्ण करनेवाले, कठोर और रूखीवाणी बोलनेवाले, वाणीरूपी काँटों से छेदनेवाले मनुष्य को मनुष्यों के मध्य में सबसे अधिक अभागा, महादरिद्र और अपने मुख में मृत्यु को धारण करनेवाला समझना चाहिए।

He is the most wretched among men who causes torments, who is of harsh and wrathful speech, who pierces the vital spots of others with wordy thorns. Such a fellow is most poor and bears death in his mouth.

परश्चेदेनमभिविध्येत बाणैर्
भृशं सुतीक्ष्णैरनलार्कदीप्तैः ।
स विध्यमानोऽप्यतिदह्यमानो
विद्यात्कविः सुकृतं मे दधाति ॥९॥

भावार्थ—यदि कोई विरोधी किसी मेधावी पुरुष को अग्नि और सूर्य के समान प्रज्वलित तीक्ष्ण वाणीरूपी बाणों से लगातार बींधे तो बींधा जाता हुआ और अत्यन्त जलता हुआ भी वह ऐसा समझे कि यह पीड़ित करनेवाला मुझमें पुण्य का संचय कर रहा है।

If an opponent pierces the body of a wiseman by wordy arrows which are sharp pointed and smarting like fire and sun, he should, even if deeply wounded and burning with pain, bear them patiently, remembering that the slanderer is accumulating virtues in me.

यदि सन्तं सेवते यद्यसन्तं
तपस्विनं यदि वा स्तेनमेव ।

वासो यथा रङ्गवशं प्रयाति
तथा स तेषां वशमभ्युपैति ॥१०॥

भावार्थ—जो मनुष्य सज्जन या दुष्ट, तपस्वी अथवा चोर व्यक्ति की सेवा या उनका संग करता है, तो वह उनके वश में वैसे ही हो जाता है, जैसे वस्त्र को जिस रंग में रंगा जाए, वैसा ही रंग उसपर चढ़ जाता है, अर्थात् मनुष्य पर संगति का प्रभाव अवश्य होता है।

A man who serves or keeps company with a person who is good, or who is wicked, who is possessed of ascetic virtues or who is a thief, he being under their control becomes like them, just as a cloth takes the same colour in which it is soaked i.e. the influence of the company is indispensable.

अतिवादं न प्रवदेन्न वादयेद्
यो नाहतः प्रतिहन्यान्न घातयेत् ।
हन्तुं च यो नेच्छति पापकं वै
तस्मै देवाः स्पृहयन्त्यागताय ॥११॥

भावार्थ—मनुष्य को चाहिए कि किसी के सम्बन्ध में न तो स्वयं निन्दा अथवा अत्युक्ति करे और न किसी से करवाये। स्वयं चोट खाकर भी न तो उनपर चोट करे और न दूसरों से करवाये तथा जो पापी को भी मारना नहीं चाहता ऐसे मनुष्य के आने पर देवलोग भी उसके स्वागत की अभिलाषा रखते हैं।

Even the very gods—the learned persons desire to welcome and keep company with him, who stung with reproach, neither himself returns it nor causes others to return it, who being struck does not himself return the blows nor causes others to do it, and who does not wish even the slightest injury to him who injures him.

अव्याहृतं व्याहृताच्छ्रेय आहुः
सत्यं वदेद् व्याहृतं तद् द्वितीयम् ।
प्रियं वदेद् व्याहृतं तत् तृतीयं
धर्मं वदेद् व्याहृतं तच्चतुर्थम् ॥१२॥

भावार्थ—बोलने की अपेक्षा मौन रहना अच्छा बताया गया है। सत्य बोलना मौन रहने से श्रेष्ठ है, सत्य को प्रिय करके बोलना श्रेष्ठतर है और सत्य एवं प्रियवचन को धर्मयुक्त करके बोलना श्रेष्ठतम है।

Silence, it is said, is better than speech. Speaking truth is much better than silence. Truth which is pleasant is good. And if pleasant truth is in consistent with morality, this is most excellent.

यादृशैः संनिविशते यादृशाँश्चोपसेवते ।
यादृगिच्छेच्च भवितुं तादृग्भवति पूरुषः ॥१३॥

भावार्थ—मनुष्य जैसे लोगों के साथ उठता-बैठता है, जैसों की सेवा करता है और जैसा होना चाहता है, वैसा ही हो जाता है।

A man becomes exactly like him with whom he keeps his company or like him whom he serves or regards, or like that as he wishes to be.

यतो यतो निवर्तते ततस्ततो विमुच्यते ।
निवतनाद्धि सर्वतो न वेत्ति दुःखमण्वपि ॥१४॥

भावार्थ—संसार के सभी भोग अन्त में छूटनेवाले हैं, ऐसा समझकर जो बुद्धिमान् व्यक्ति सब विषयों से निवृत्त हो जाता है, उसे दुःख का अणुमात्र भी अनुभव नहीं होता। विषयों को छोड़ देना ही सुख-प्राप्ति का मार्ग है।

The enjoyments of the world are temporary, thinking so, the wise man who abstains from all the worldly enjoyments, he does not have to suffer even the least misery. Abstaining from worldly enjoyments is the only way to everlasting happiness.

न जीयेत नानुजिगीषतेऽन्यान्
न वैरकृच्चाप्रतिघातकश्च ।
निन्दाप्रशंसासु समस्वभावो
न शोचति हृष्यति नैव चायम् ॥१५॥

भावार्थ—जो मनुष्य न तो दूसरों से पराजित होता है और न दूसरों को पराजित करना चाहता है, न वह वैर करता है और न किसी की हिंसा करता है, जो निन्दा और प्रशंसा में सम रहता है, ऐसा द्वन्द्वातीत मनुष्य सुख-दुःखों से

ऊपर उठ जाता है ।

He, who is neither defeated by others, nor he wants to defeat others, who is neither hostile towards anyone, nor he injures anyone, who is unmoved by praise or blame, such a man freed from opposites is freed from happiness or misery.

भावमिच्छति सर्वस्य नाभावे कुरुते मनः ।
सत्यवादी मृदुर्दान्तो यः स उत्तमपूरुषः ॥१६॥

भावार्थ—जो मनुष्य सबका कल्याण चाहता है, किसी के अकल्याण का विचार नहीं करता, जो सत्यवादी, कोमलस्वभाव और जितेन्द्रिय है, वह उत्तम कोटि का मनुष्य होता है ।

That man is of highest rank, who wishes for the prosperity of all and never sets his heart on the misery of others, who is truthful in speech, humble in behaviour and has all his passions under his control.

नानर्थकं सान्त्वयति प्रतिज्ञाय ददाति च ।
रन्ध्रं परस्य जानाति यः स मध्यमपूरुषः ॥१७॥

भावार्थ—जो मनुष्य 'मैं तुम्हारे लिए ऐसा करूँगा, वैसा करूँगा' ऐसा कहकर झूठ-मूठ की सान्त्वना नहीं देता, प्रतिज्ञा करके दान देता है अथवा प्रतिज्ञा करके उसे पूर्ण करता है और दूसरों की कमियों को जानकर भी उन्हें हानि नहीं पहुँचाता, वह मध्यम कोटि का मनुष्य होता है ।

That man is of medium rank, who 'I will do this or that for you', saying so does not console falsely, who keeps his words and gives having promised, who even knowing the weakness of others does not do any harm to them.

दुःशासनस्तूपहतोऽभिशस्तो
नावर्तते मन्युवशात् कृतघ्नः ।
न कस्यचिन्मित्रमथो दुरात्मा
कलाश्चैता अधमस्येह पुंसः ॥१८॥

भावार्थ—जिसे वश में रखना कठिन हो, जो भाग्यहीन हो, जो सभी के द्वारा

निन्दित हो, जो क्रोध के वशीभूत होने के कारण कुटिलता को नहीं छोड़ता, जो कृतघ्न है, जो किसी का मित्र नहीं है और दुरात्मा है—इस जगत् में ये सब अधम मनुष्य के लक्षण हैं।

These, however, are the indications of a lowest man, viz., who is difficult to be controlled, who is wretched, who is condemned by all, who being under the control of anger does not give up crookedness, who is ungrateful, who is a friend to none and who is wicked at heart.

न श्रद्दधाति कल्याणं परेभ्योऽप्यात्मशङ्कितः ।
निराकरोति मित्राणि यो वै सोऽधमपूरुषः ॥१६॥

भावार्थ—जो शुभ कर्मों में विश्वास नहीं करता, श्रेष्ठ पुरुषों से अपने विषय में शंकित रहता है और मित्रों का परित्याग करता है, वह नीच मनुष्य है।

He, too, is the worst of men, who has no faith in performing good acts, who is suspicious of even the noble men pertaining to himself and who forsakes his friends.

उत्तमानेव सेवेत प्राप्तकाले तु मध्यमान् ।
अधमाँस्तु न सेवेत य इच्छेद् भूतिमात्मनः ॥२०॥

भावार्थ—अपना कल्याण चाहनेवाले को चाहिए कि वह सदा उत्तम पुरुषों का ही सङ्ग करे, आपत्ति आ पड़ने पर मध्यम पुरुषों का सङ्ग कर ले, परन्तु अधम पुरुषों का सङ्ग कभी न करे।

He who wishes prosperity to himself, should keep company with noble persons, in adversity he should wait upon indifferent (neither good nor bad) persons, but he should never wait upon those who are bad—evil minded.

प्राप्नोति वै वित्तमसद्बलेन
नित्योत्थानात् प्रज्ञया पौरुषेण ।
न त्वेव सम्यग् लभते प्रशंसां
न वृत्तमाप्नोति महाकुलानाम् ॥२१॥

भावार्थ—मनुष्य धन तो चोरी-डाका, छल-कपट आदि बुरे उपायों से, निरन्तर पुरुषार्थ, तीव्रबुद्धि और सेना में नौकरी आदि से भी प्राप्त कर लेता है, परन्तु

इस प्रकार से न तो प्रशंसा, यश और कीर्ति प्राप्त कर सकता है और न बड़े घरों के सदाचार को प्राप्त कर सकता है।

A man can earn wealth even by evil means like theft and dacoity, deception and fraud, by constant efforts, by deep intelligence, by showing his valour in military etc., but he can neither win praise and fame, nor he can acquire the virtues and manners of high families.

धृतराष्ट्र उवाच

महाकुलेभ्यः स्पृहयन्ति देवा
धर्मार्थनित्याश्च बहुश्रुताश्च ।
पृच्छामि त्वां विदुर प्रश्नमेतं
भवन्ति वै कानि महाकुलानि ॥२२॥

भावार्थ—धृतराष्ट्र ने पूछा—सदा धर्मकार्यों और अर्थोपार्जन में लगे रहनेवाले, महाविद्वान्, निष्काम ज्ञानी भी श्रेष्ठकुलों में जन्म लेने की इच्छा रखते हैं, अतः हे विदुर ! मैं तुमसे पूछता हूँ कि महाकुल कौन-से होते हैं ?

Dhṛtrāṣtra asked—'O *Vidura* ! those who are always engaged in religion and polity (or in virtuous deeds and earning wealth) without swerving from either, the wisemen, who are possessed of great learning and are unattached, all express a liking for being born in high families. Therefore, I ask you—which are those families that are called high.'

विदुर उवाच

तपो दमो ब्रह्मवित्तं वितानाः
पुण्या विवाहाः सततान्नदानम् ।
येष्वेवैते सप्त गुणा वसन्ति
सम्यग्वृत्तास्तानि महाकुलानि ॥२३॥

भावार्थ–विदुरजी बोले—तप=हानि-लाभ आदि द्वन्द्वों को सहना, दम=आत्म संयम, वेदाध्ययन, यज्ञानुष्ठान, गुण-कर्म-स्वभावानुसार पवित्र विवाह, निरन्तर अन्नदान और उत्तम आचार—ये सात गुण जिनमें निवास करते हैं, वे ही महाकुल, श्रेष्ठकुल, बड़े घर कहलाते हैं।

Vidura said—'Asceticism—bearing of opposites like loss and gain, self-restraint, knowledge of the *Vedās*, performance of *Yajña*, pure marriages (according to qualities, accomplishment and conduct), continuously giving food in alms and good conduct—the families in which these seven virtues exist or are duly practised, are regarded as high.

येषां हि वृत्तं व्यथते न योनिश्
चित्तप्रसादेन चरन्ति धर्मम् ।
ये कीर्तिमिच्छन्ति कुले विशिष्टां
त्यक्तानृतास्तानि महाकुलानि ॥२४॥

भावार्थ—जिन कुलों का सदाचार भङ्ग नहीं होता, जहाँ माता-पिता पीड़ित नहीं होते, जो प्रसन्न मन से धर्म का आचरण करते हैं, जो कुल की विशेष कीर्ति की इच्छा करते हैं और जिन्होंने मिथ्या भाषण और मिथ्या व्यवहारों का परित्याग कर दिया है, ऐसे कुल महाकुल कहलाते हैं।

Those are noble families which do not deviate from the right conduct, where the parents never feel distressed, where the members of the family cheerfully practise virtues, desire to enhance the fame of the line in which they are born and avoid every kind of falsehood.

अनिज्यया कुविवाहैर्वेदस्योत्सादनेन च ।
कुलान्यकुलतां यान्ति धर्मस्यातिक्रमेण च ॥२५॥

भावार्थ—ब्रह्मयज्ञ आदि पञ्चमहायज्ञों का अनुष्ठान न करने से, निन्दित विवाहों के करने से, वेद का अध्ययन न करने से और धर्म का उल्लंघन करने से उत्तमकुल भी नीच कुल बन जाते हैं।

The families which are noble, fall down and become low owing to the absence of five *Yajñas* (*Brahmayajña* etc.), impure marriages, abandonment of the study of the *Vedās* and by violation of religion (virtuous deeds).

देवद्रव्यविनाशेन ब्रह्मस्वहरणेन च ।
कुलान्यकुलतां यान्ति ब्राह्मणातिक्रमेण च ॥२६॥

भावार्थ—यज्ञ, विद्वत्सेवा अथवा सार्वजनिक कार्यों के लिए एकत्र किये गये धन का दुरुपयोग करने से, ब्राह्मणों के धन का अपहरण करने और उनका अनादर

करने से उत्तम कुल अकुल=नीच कुल में परिवर्तित हो जाते हैं।

High families fall off and become low by misappropriation of wealth which was deposited with them for performing *Yajña* and to serve the learned, by abduction the wealth of the *Brāhmaṇās*—the learned and by disregarding or speaking ill of them.

ब्राह्मणानां परिभवात्परिवादाच्च भारत।
कुलान्यकुलतां यान्ति न्यासापहरणेन च ॥२७॥

भावार्थ—हे भरतकुलोत्पन्न धृतराष्ट्र! ब्राह्मणों को दबाने, उनकी हिंसा करने; निन्दा करने और उनकी अमानत को हड़पने से कुल अकुल बन जाते हैं।

O the best among the *Bharata* race! O *Dhṛtrāṣtra*! The high families fall off and become low by supressing the *Brāhmaṇās*, by injuring them, by speaking ill of them and by grabing the money deposited with them.

कुलानि समुपेतानि गोभिः पुरुषतोऽर्थतः।
कुलसंख्यां न गच्छन्ति यानि हीनानि वृत्ततः ॥२८॥

भावार्थ—जो कुल चरित्र-भ्रष्ट हैं वे गौओं, पुरुषों और प्रभूत धनधान्य से युक्त होने पर भी श्रेष्ठ कुल की संज्ञा को प्राप्त नहीं होते।

The families which are wanting in good manners and conduct are not regarded as high families, even if they are possessed of a large number of members, huge amount of wealth and kine.

वृत्ततस्त्वविहीनानि कुलान्यल्पधनान्यपि।
कुलसंख्यां च गच्छन्ति कर्षन्ति च महद्यशः ॥२९॥

भावार्थ—थोड़े धनवाले अथवा निर्धन होने पर भी जो सदाचार से सम्पन्न हैं, वे श्रेष्ठ कुलों में गिने जाते हैं और महान् यश प्राप्त करते हैं।

The families, which are wanting in wealth, but distinguished by manners and good conduct are regarded as high families and win great reputation.

वृत्तं यत्नेन संरक्षेद्वित्तमेति च याति च।
अक्षीणो वित्ततः क्षीणो वृत्ततस्तु हतो हतः ॥३०॥

भावार्थ—कुलों की गणना में आने के लिए आचार प्रमुख है, अतः आचार की विशेष यत्न के साथ रक्षा करनी चाहिए। धन-सम्पत्ति तो आती-जाती रहती

है, अतः वित्तहीन=धनहीन मनुष्य क्षीण=गरीब नहीं होता, परन्तु वृत्तहीन= आचार-भ्रष्ट व्यक्ति मुर्दे के समान है। वित्त से वृत्त श्रेष्ठ है, अतः उसकी सब प्रकार से रक्षा करनी चाहिए।

In order to be counted among the high families, good manners and good conduct is the main factor. Therefore, good manners and good conduct be maintained with care. As regards the wealth it may come and go. He who is wanting in wealth is not really wanting (he is not poor), but he who is wanting in manners and conduct is really in want (he is like a dead body). Character is superior to wealth, therefore, it should be protected by all means.

गोभिः पशुभिरश्वैश्च कृष्या च सुसमृद्धया।
कुलानि न प्ररोहन्ति यानि हीनानि वृत्ततः ॥३१॥

भावार्थ—जो कुल आचार से हीन हैं, वे गौ, घोड़े, भेड़-बकरी आदि पशु, खेती और प्रभूत ऐश्वर्य से सम्पन्न होने पर भी उत्तम कुलों की गिनती में नहीं आते।

The families which are wanting in manners and conduct cannot be counted in high families, even though they may abound in kine and other cattle like horse, sheep and goat, in the produce of the field and may possess abundant prosperity.

मा नः कुले वैरकृत् कश्चिदस्तु
राजाऽमात्यो मा परस्वापहारी।
मित्रद्रोही नैष्कृतिकोऽनृती वा
पूर्वाशी वा पितृदेवातिथिभ्यः ॥३२॥

भावार्थ—सज्जन ऐसी कामना और प्रार्थना किया करते हैं कि हमारे कुल में कोई भी वैर करनेवाला न हो, राजा और मन्त्री दूसरे के धन को हड़पनेवाले न हों, हमारे परिवार में कोई भी मित्रद्रोही, बेईमान, मिथ्याभाषी, पितृयज्ञ, देवयज्ञ और अतिथियज्ञ करने से पूर्व खानेवाला न हो।

The noble men wish and pray—Let none in our family be a fomenter of quarrels. The king and the ministers should not grab the property of others. None should seek to injure a friend, none should be dishonest or deceitful or false in behaviour and none should eat before serving the parents and guests and without performing the

Agni-hotra.

***विशेष**—वेद में कहा है—**अशितावत्यतिथावश्नीयात्**—अथर्व० ६/६(३)/८ मनुष्य को चाहिए कि अतिथि के भोजन कर लेने के पश्चात् स्वयं भोजन करे।*

***Note**—In the Vedas it is said—**अशितावत्यतिथावश्नीयात्**—अथर्व० 9/6(3)/8—A man should eat after serving the guests.*

यश्च नो ब्राह्मणान् हन्याद् यश्च नो ब्राह्मणान् द्विषेत् ।
न नः स समितिं गच्छेद् यश्च नो निर्वपेत् कृषिम् ॥३३॥

भावार्थ—जो मनुष्य ब्राह्मणों की हिंसा करे अथवा ब्राह्मणों से द्वेष करे और हमारी खेती को काट ले, नष्ट कर दे उसे हमारी समिति=सभा में जाने का अधिकार नहीं है।

The man who slays the *Brāhmaṇas* or entertains the feelings of aversion towards them, harvests or destroys our crops, does not deserve to go to the parliament.

***विशेष**—**यश्च नो निर्वपेत् कृषिम्**—इस चरण का यह अर्थ भी हो सकता है—जो अपने हाथ से खेती न करे, बीज नहीं बोये उसे समिति=Parliament में जाने का अधिकार नहीं है।*

***Note**—**यश्च नो निर्वपेत् कृषिम्**—This part of the verse can also mean—who does not till and sow seed in the land by his own hands has no right to go to the parliament.*

तृणानि भूमिरुदकं वाक् चतुर्थी च सूनृता ।
सतामेतानि गेहेषु नोच्छिद्यन्ते कदाचन ॥३४॥

भावार्थ—अतिथि-सेवार्थ सज्जनों के घरों में बैठने के लिए तिनकों की चटाई, सोने के लिए भूमि, पिलाने के लिए शीतल जल और मधुर एवं सत्य वाणी, ये चार वस्तुएँ सदा विद्यमान रहती हैं।

Straw (a mat of grass to sit), ground (for sleeping), water (for washing the feet and face and for drinking), sweet and truthful words—these four things are never wanting, in the houses of the noble persons, in order to serve the guests.

श्रद्धया परया राजन्नुपनीतानि सत्कृतिम् ।
प्रवृत्तानि महाप्राज्ञ धर्मिणां पुण्यकर्मिणाम् ॥३५॥

भावार्थ—हे महाबुद्धिमान् राजन् ! सज्जनों के घरों में पुण्य कर्म करनेवाले धर्मात्माओं के सत्कार के लिए तृणों की चटाई आदि उपर्युक्त चार वस्तुएँ अति श्रद्धा से उपस्थित की जाती हैं ।

Endued with great wisdom O king ! In the houses of the noble persons the straw mats etc., four things enumerated above are offered with reverence for virtuous men who are devoted to the practice of righteous acts.

सूक्ष्मोऽपि भारं नृपते स्यन्दनो वै
शक्तो वोढुं न तथान्ये महीजाः ।
एवं युक्ता भारसहा भवन्ति
महाकुलीना न तथाऽन्ये मनुष्याः ॥३६॥

भावार्थ—हे राजन् ! रथ छोटा होने पर भी भार ढो सकता है, इसके विपरीत लक्कड़ बहुत बड़ा होने पर भी भार नहीं ढो सकता। इसी प्रकार जो कर्मपरायण कुलीन पुरुष होते हैं वे ही उत्तरदायित्व निभा सकते हैं, साधारण मनुष्य उत्तरदायित्व निभाने में समर्थ नहीं होते ।

O king ! the chariot even though small can bear weights, on the other hand, a log of wood being big enough cannot. Similarly those who are dutiful and belong to high families can fulfil their responsibilities, while the ordinary men are not competent to fulfil their responsibilities.

न तन्मित्रं यस्य कोपाद् बिभेति
यद्वा मित्रं शङ्कितेनोपचर्यम् ।
यस्मिन् मित्रे पितरीवाश्वसीत
तद्वै मित्रं सङ्गतानीतराणि ॥३७॥

भावार्थ—वह मित्र नहीं है जिसके कोप से भयभीत होना पड़े अथवा जिसके साथ शंकित होकर व्यवहार किया जाए, वह भी मित्र नहीं है। मित्र वही होता है जिसपर पिता के समान विश्वास किया जा सके, अन्य तो साथी-मात्र होते हैं।

He is no friend whose anger inspires fear. He also is no friend who is waited upon with doubt. He, however, on whom one can repose confidence as upon a father, is a true friend. Other

friendships are nominal connections. In fact, others are companions not friends.

यः कश्चिदप्यसम्बद्धो मित्रभावेन वर्तते ।
स एव बन्धुस्तन्मित्रं स गतिस्तत्परायणम् ॥३८॥

भावार्थ—जो व्यक्ति किसी प्रकार का सम्बन्ध न रखता हुआ भी मित्रभाव से व्यवहार करता है, वही वास्तव में बन्धु होता है, वही मित्र होता है, वही आश्रय और वही सहारा होता है।

He, who bears himself as a friend, without keeping contacts, even though having no relation of any kind, is a true friend, a real refuge and a good protector.

चलचित्तस्य वै पुंसो वृद्धाननुपसेवतः ।
पारिप्लवमतेर्नित्यमध्रुवो मित्रसंग्रहः ॥३९॥

भावार्थ—चञ्चल चित्तवाले, वृद्धों का सत्सङ्ग न करनेवाले और अस्थिर मतिवाले मनुष्य के मित्रों का संग्रह सदा ही अस्थिर होता है, अर्थात् जिन्हें आज वह मित्र समझता है, कल उन्हें ही शत्रु समझने लगता है।

He, who is fickle minded, who does not wait upon the experienced old persons, whose intellect is unsteady, cannot make friends i.e. whom he thinks a friend today, he becomes a foe the next day.

चलचित्तमनात्मानमिन्द्रियाणां वशानुगम् ।
अर्थाः समतिवर्तन्ते हंसाः शुष्कं सरो यथा ॥४०॥

भावार्थ—धन-ऐश्वर्य=सम्पत्ति चञ्चल चित्तवाले, अज्ञानी, इन्द्रियों के वशवर्ती मनुष्य को ऐसे त्याग देते हैं, जैसे हंस सूखे सरोवर को छोड़ देते हैं।

Riches and prosperity forsake the person whose mind is unsteady, who is foolish and devoid of self-knowledge, who is the slave of the senses, just like swans forsake the lake whose waters have dried up.

अकस्मादेव कुप्यन्ति प्रसीदन्त्यनिमित्ततः ।
शीलमेतदसाधूनामभ्रं पारिप्लवं यथा ॥४१॥

भावार्थ—बिना कारण ही क्रुद्ध हो जाना और अकारण ही प्रसन्न हो जाना,

चञ्चल मेघ के समान यह दुष्टों का स्वभाव ही होता है।

Just like clouds which are so inconstant, it is the nature of the wicked persons that they suddenly give way to anger and are gratified without sufficient cause.

सत्कृताश्च कृतार्थाश्च मित्राणां न भवन्ति ये।
तान् मृतानपि क्रव्यादाः कृतघ्नान्नोपभुञ्जते ॥४२॥

भावार्थ—जो व्यक्ति मित्रों से सत्कृत होकर और अपना प्रयोजन सिद्ध करके भी मित्रों के हितकारी नहीं होते, ऐसे कृतघ्नों के मरने पर गीध भी उनका मांस नहीं खाते।

Even the vultures abstain from eating up the flesh of those who having been served and benefited by friends, thus crowned by success, show ingratitude to the latter.

अर्चयेदेव मित्राणि सति वाऽसति वा धने।
नानर्थयन् प्रजानीयात् मित्राणां सारफल्गुताम् ॥४३॥

भावार्थ—धन हो या न हो, मित्रों से कुछ भी न माँगते हुए उनका आदर-सत्कार ही करे। मित्रों के सार और फोकेपन की परीक्षा न करे।

A man may be wealthy or poor, without demanding anything from the friends, should serve and honour them. He should not test the sincerity or otherwise of the friends.

सन्तापाद् भ्रश्यते रूपं सन्तापाद् भ्रश्यते बलम्।
सन्तापाद् भ्रश्यते ज्ञानं सन्तापाद् व्याधिमृच्छति ॥४४॥

भावार्थ—शोक से रूप=सौन्दर्य नष्ट होता है, शोक से बल और ज्ञान नष्ट हो जाता है। शोकग्रस्त मनुष्य रोगी हो जाता है।

Sorrow spoils the beauty, destroys the strength and ruins the knowledge. The man stricken with grief becomes sick.

अनवाप्यं च शोकेन शरीरं चोपतप्यते।
अमित्राश्च प्रहृष्यन्ति मा स्म शोके मनः कृथाः ॥४५॥

भावार्थ—शोक करने से अभीष्ट वस्तु प्राप्त नहीं हो सकती, उलटा शरीर पीड़ित होता है और शत्रु हँसते हैं, अतः शोक नहीं करना चाहिए।

The cherished object cannot be obtained by grieving for it, on the other hand the body is tortured and the foes laugh at him, therefore, one should not yield to grief.

पुनर्नरो म्रियते जायते च
पुनर्नरो हीयते वर्धते च ।
पुनर्नरो याचति याच्यते च
पुनर्नरः शोचति शोच्यते च ॥४६॥

भावार्थ—मनुष्य बार-बार उत्पन्न होता और मरता है, घटता और बढ़ता है, स्वयं माँगता है अथवा लोग उससे माँगते हैं, स्वयं शोक करता है अथवा दूसरे लोग उसके लिए शोक करते हैं। भाव यह है कि मनुष्य एक रूप में कभी नहीं रहता। सुख और दुःख सदा लगे ही रहते हैं, अतः शोक नहीं करना चाहिए।

Men die and are reborn repeatedly, repeatedly they wither away and grow, repeatedly they ask others for help or they themselves are asked for help, repeatedly they lament for others or they are lamented by others. The purport of the verse is that men cannot remain in one condition always. Pain and happiness go side by side. Hence men should not yield to grief.

सुखं च दुःखं च भवाभवौ च
लाभालाभौ मरणं जीवितं च ।
पर्यायशः सर्वमेते स्पृशन्ति
तस्माद्धीरो न च हृष्येन्न शोचेत् ॥४७॥

भावार्थ—संसार में सुख-दुःख, उत्पत्ति-विनाश (भाव-अभाव), लाभ-हानि जीना-मरना—ये सभी प्राणियों को बारी-बारी से प्राप्त होते रहते हैं, इसलिए बुद्धिमान् को चाहिए कि वह इष्ट के प्राप्त होने पर हर्षित न हो और अनिष्ट के प्राप्त होने पर शोक न करे।

Happiness and misery, existence and destruction (plenty and want) gain and loss, life and death—are shared by all in due order. Therefore, a wise or self-controlled man should neither exalt in joy nor repine in sorrow.

चलानि हीमानि षडिन्द्रियाणि
तेषां यद्यद् वर्धते यत्र यत्र ।

ततस्ततः स्रवते बुद्धिरस्य
छिद्रोदकुम्भादिव नित्यमम्भः ॥४८॥

भावार्थ—मन सहित पाँचों ज्ञानेन्द्रियाँ अत्यन्त चञ्चल हैं। इनमें से जो-जो इन्द्रिय जिस-जिस विषय के सेवन में बढ़ती है, उस-उस इन्द्रिय से विषय-सेवी मनुष्य की बुद्धि नित्य उसी प्रकार चूने लगती है, जिस प्रकार छिद्रवाले घड़े से जल चूने लगता है।

Five sense-organs with mind the sixth, are always unsteady. Out of them the sense which is most predominant in enjoying its objects, from that very sense the intelligence of the sensual person leaks out, just like water from a pot through its holes.

धृतराष्ट्र उवाच

तनुरुद्धः शिखी राजा मिथ्योपचरितो मया।
मन्दानां मम पुत्राणां युद्धेनान्तं करिष्यति ॥४९॥

भावार्थ—धृतराष्ट्र बोला—जैसे काष्ठ में छिपा हुआ अग्नि रगड़े जाने पर प्रकट होकर उस काष्ठ को ही जला डालता है, वैसे ही धर्म में बँधा हुआ तेजस्वी राजा युधिष्ठिर, जिसके साथ मैंने छल-कपटपूर्ण व्यवहार किया है, मेरे मूर्ख पुत्रों को युद्ध में मार डालेगा।

Dhṛtrāstra said—Just as fire which is hidden in the wood burns the log of the wood when it is manifested on being rubbed, similarly king *Yudhisthira,* follower of religious tenents, is like a flame of fire, has been deceived by me. He will surely kill all my wicked and foolish sons in the battle.

नित्योद्विग्नमिदं सर्वं नित्योद्विग्नमिदं मनः।
यत्तत् पदमनुद्विग्नं तन्मे वद महामते ॥५०॥

भावार्थ—हे महामते! यह सारा संसार भय और पीड़ा से व्याकुल है। मेरा मन भी सदा भयभीत और सशंक रहता है; अतः आप मुझे उस अवस्था=स्थिति का उपदेश कीजिए, जो भयरहित है।

O you of great intelligence ! this whole world is fraught with fear and danger. My mind is also fickle, frightened and doubtful, tell me such words which may dispell my fear, doubt and anxiety.

विदुर उवाच

नान्यत्र विद्यातपसोर्नान्यत्रेन्द्रियनिग्रहात् ।
नान्यत्र लोभसन्त्यागाच्छान्तिं पश्यामि तेऽनघ ॥५१॥

भावार्थ—विदुरजी बोले—हे निष्पाप नरेश ! विद्या के सेवन, तप के अनुष्ठान, इन्द्रियों पर विजय-प्राप्ति और लोभ के त्यागने के बिना आपको शान्ति प्राप्त नहीं हो सकती ।

Vidura said—O sinless king ! Without acquiring true knowledge, without the practice of austerity, without restraining the senses from their objects and without complete abandonment of avarice, you cannot attain the peace of mind.

बुद्ध्या भयं प्रणुदति तपसा विन्दते महत् ।
गुरुशुश्रूषया ज्ञानं शान्तिं योगेन विन्दति ॥५२॥

भावार्थ—मनुष्य ज्ञान द्वारा भय को दूर करता है, तप द्वारा गौरव, बड़प्पन अथवा ब्रह्म को प्राप्त करता है, गुरु की सेवा से ज्ञान प्राप्त करता है और योग के द्वारा शान्तिलाभ करता है ।

Man dispells fear by true and self-knowledge, by asceticism he obtains glory, magnanimity or God itself. He acquires knowledge by serving the preceptors and he gains peace by practising Yoga.

अनाश्रिता दानपुण्यं वेदपुण्यमनाश्रिताः ।
रागद्वेषविनिर्मुक्ता विचरन्तीह मोक्षिणः ॥५३॥

भावार्थ—जीवन्मुक्त महात्मा दानरूपी पुण्य और वेदपठन-पाठनरूपी पुण्य-फल का आश्रय न लेते हुए राग-द्वेष से रहित होकर संसार में विचरते हैं ।

The saints, who are above the bonds of worldly connections, without depending upon the merits attainable by charity and by the study of the *Vedas*, freed from attachment and malice, roam in the world.

***विशेष**—जीवन्मुक्त महात्मा दान भी करते हैं, वेदों का अध्ययन भी करते हैं, परन्तु किसी फल की कामना से नहीं । वे शत्रु-मित्र सबमें समभाव रखते हैं, इससे उनके राग-द्वेष का क्षय हो जाता है ।*

Note—*The saints, who are above the bonds of worldly connections, give charity, study the* Vedas, *but without the desire of any reward. They are impartial towards the friend and the foe. By this impartiality their love and hatred come to an end.*

स्वधीतस्य सुयुद्धस्य सुकृतस्य च कर्मणः ।
तपसश्च सुतप्तस्य तस्यान्ते सुखमेधते ॥५४॥

भावार्थ—अच्छी प्रकार अध्ययन करने पर, धर्मयुद्ध के पश्चात्, उत्तम कर्म कर लेने के बाद, कठोर तप तपने के पश्चात् मनुष्य को फलरूप में सुख प्राप्त होता है ।

By judicious study of the scriptures, after a battle which is fought in accordance with religion, after performing righteous acts and after ascetic austerities performed rigidly, a man gains happiness as a reward thereof.

स्वास्तीर्णानि शयनानि प्रपन्ना
न वै भिन्ना जातु निद्रां लभन्ते ।
न स्त्रीषु राजन् रतिमाप्नुवन्ति
न मागधैः स्तूयमाना न सूतैः ॥५५॥

भावार्थ—हे राजन् ! जो अभागे विद्वेष के कारण अपनों को ही खो बैठते हैं, परस्पर वैर रखते हैं, उन्हें बड़ी कोमल तथा सुन्दर शय्याओं पर भी सुखद निद्रा (सुषुप्ति) प्राप्त नहीं होती । अपनी प्रियतमाओं में भी सुरति (सुरत, सम्भोग-सुखोपलब्धि) नहीं मिलती । सूतों व मागधों—(चारणों व भाटों) की प्रशस्तिपरक स्तुतियाँ भी उन्हें आनन्दित नहीं कर पातीं ।

O king ! the wretched ones, who lose their own kith and kin due to malice, obtain no sound sleep even if they have recourse to well-made soft and fine beds, nor do they drive any pleasure from women. The laudatory hymns of bards and eulogists also cannot make them delighted.

विशेष—*गर्भित अर्थ यह है कि अपने आत्मीय पाण्डवों से कटकर तुम लोग (कौरव) भी सुख-चैन की आशा छोड़ दो ।*

Note—*The purport of the verse is that by being bifurcated from your own intimate Pāndavās you (Kauravās) should also give up the*

hope of peace and prosperity.

न वै भिन्ना जातु चरन्ति धर्मं
न वै सुखं प्राप्नुवन्तीह भिन्नाः ।
न वै भिन्ना गौरवं प्राप्नुवन्ति
न वै भिन्ना प्रशमं रोचयन्ति ॥५६॥

भावार्थ—आत्मीय होकर भी विद्वेषवश पृथक्-पृथक् रहनेवाले अभागे भली प्रकार (पूर्णतः) अपने किसी भी धर्म (कर्त्तव्य) का पालन नहीं कर पाते, अतः वे सच्चे आत्मसुख से सदा वञ्चित ही रहते हैं । भेद=फूट को प्राप्त हुए मनुष्य किसी भी प्रकार का गौरव व शान्तिलाभ नहीं कर पाते ।

Those who are detached can never practise virtue. Those who are isolated cannot attain happiness in this world. Those who are separated cannot achieve greatness. Glory, honour and peace have no charm for them.

***विशेष**—अन्तर्निहित भाव यह है कि यदि तुम धर्मपालन द्वारा सच्चा आत्मसुख व शान्तिलाभ चाहते हो तो पाण्डवों (अपने आत्मीयों) को गले लगा लो ।*

***Note**—The underlying meaning of the verse is that if you want real happiness and peace, then you should embrace the* Pāndavās *who are your own intimates.*

न वै तेषां स्वदते पथ्यमुक्तं
योगक्षेमं कल्पते नैव तेषाम् ।
भिन्नानां वै मनुजेन्द्र परायणं
न विद्यते किञ्चिदन्यद्विनाशात् ॥५७॥

भावार्थ—आत्मीयजनों को विद्वेषवश दूर फेंक देनेवाले अभागों को हितकारी वचन अच्छा नहीं लगता । जीवन में उनका कोई भी योगक्षेम (अप्राप्त वस्तु की प्राप्ति और प्राप्त वस्तु का संरक्षण) नहीं रह जाता । हे राजन् ! पूर्ण विनाश में ही उनके जीवन की परिणति होती है । (अतः विनाश से बचना है तो पाण्डवों को हृदय से लगा लो ।)

O king ! verily the counsels that are for their benefit do not please them who are detached. They never acquire what they have not, nor

they succeed in retaining what they have. There is no other end for such men than destruction.

विशेष—*५५ से ५७ तक तीन श्लोकों में आपसी फूट के परिणाम का वर्णन अति संक्षेप में, परन्तु हृदयग्राही शब्दों में हुआ है।*

Note—*In three verses beginning from 55 to 57 the description of the consequences of disunity is enumerated in brief but in a fascinating manner.*

सम्भाव्यं गोषु सम्पन्नं सम्भाव्यं ब्राह्मणे तपः।
सम्भाव्यं चापलं स्त्रीषु संभाव्यं ज्ञातितो भयम् ॥५८॥

भावार्थ—गौओं के होने पर सम्पत्ति होना सम्भव है, ब्राह्मण में तप होना सम्भव है, स्त्रियों में चपलता सम्भव है और सम्बन्धियों से भय प्राप्त होना सम्भव है।

When there are cows in the family, it is possible to have wealth and prosperity. Asceticism is possible in the *Brahmanas*, inconstancy is possible in women and fear is possible from the relatives.

विशेष—*क्या पुरुषों में चपलता असम्भव है? स्वभावतः असम्भव है, अपवाद अवश्य मिल जाते हैं।*

Note—*Is inconstancy impossible among men ! Men are also fickle minded. Exceptions are always there.*

तन्तवोऽप्यायिता नित्यं तन्तवो बहुलाः समाः।
बहून् बहुत्वादायासान् सहन्तीत्युपमा सताम् ॥५९॥

भावार्थ—हे राजन्! कुल-तन्तुरूप ये पाण्डव बालक जो आपके द्वारा पालित और पोषित हुए हैं, वे अनेक वर्षों से बहुत-से दुःखों को सहन करते आ रहे हैं, अतः वे सत्पुरुषों के तुल्य हैं।

O king ! The representatives of your family these sons of *Pandu* have been brought up by you. For years they have been suffering many troubles, therefore, they are like noble men.

विशेष—*यह कूट श्लोक है। इसका अर्थ इस प्रकार भी हो सकता है—*

जैसे सूक्ष्म तारों का एक पुष्ट रस्सा बहुत भार उठाने में सक्षम होता है, वैसे ही पाण्डव हैं। एक तो उनमें आपस में एकता और प्रीति है, दूसरे वे अकेले

नहीं हैं, श्रीकृष्ण, व्यासजी, द्रुपद आदि नीतिनिपुण, ऋषि और राजा उनके साथ हैं, अतः उन्हें यह कष्ट दूभर नहीं है। हाँ, इतने कष्टों को सहन करते हुए भी वे शान्त हैं, अतः वे सज्जन हैं, इसमें सन्देह नहीं है।

***Note**—This verse is a 'Kuta'—a literary piece couched in mysterious language. This can also mean—*

Just as numerous thin threads of equal length, collected together form a rope which becomes competent to bear a heavy load, such are the Pandavas. Firstly, there is unity and love in them. Secondly, they are not alone, Sri Krsna, Vyasa, Drupada etc., diplomats, saints and kings are with them. So for them these sufferings are trifiling. Suffering so many troubles they are calm and serene, therefore, they are noble, there is no doubt about it.

धूमायन्ते व्यपेतानि ज्वलन्ति सहितानि च।
धृतराष्ट्रोल्मुकानीव ज्ञातयो भरतर्षभ ॥६०॥

भावार्थ—हे भरतभूषण धृतराष्ट्र ! जैसे जलती हुई लकड़ियाँ जब पृथक्-पृथक् होती हैं तो धुआँ देती हैं और इकट्ठी होती हैं तो ज्वालामय हो जाती हैं, वैसे ही सम्बन्धीजन भी जब अलग-अलग रहते हैं तो द्वेष-धूम में सुलगते रहते हैं, परन्तु जब इकट्ठे होते हैं तो शत्रुओं के लिए प्रचण्डाग्नि बन जाते हैं, अर्थात् पाण्डवों के साथ मेल-जोल में ही आप सबका कल्याण है।

O the best among the *Bharata* race ! Just as burning sticks when separated from one another produce only smoke, but when brought together they blaze forth into a powerful flame. O *Dhṛtrāṣṭra* ! the same is the case with the relatives. When they are separated from one another they smoulder within giving out smoke of malice, but when they are brought together they become like a flame for the foes. i.e. you have your welfare only in the unity with the *Pāndavās*.

ब्राह्मणेषु च ये शूराः स्त्रीषु ज्ञातिषु गोषु च।
वृन्तादिव फलं पक्वं धृतराष्ट्र पतन्ति ते ॥६१॥

भावार्थ—हे धृतराष्ट्र ! जैसे पका हुआ फल डण्ठल से पृथक् होकर गिर पड़ता है, उसी प्रकार जो पुरुष ब्राह्मणों, स्त्रियों, सम्बन्धियों और गौओं पर अपनी वीरता प्रकट करते हैं, वे नष्ट हो जाते हैं।

O *Dhṛtraṣtra* ! those who exhibit their valour over *Brahmanas*,

women, relatives and kine soon fall off from their stalks, just as the fruits that are ripe fall off from the tree.

महानप्येकजो वृक्षो बलवान् सुप्रतिष्ठितः ।
प्रसह्य एव वातेन सस्कन्धो मर्दितुं क्षणात् ॥६२॥
अथ ये सहिता वृक्षाः संघशः सुप्रतिष्ठिताः ।
ते हि शीघ्रतमान् वातान् सहन्तेऽन्योन्यसंश्रयात् ॥६३॥

भावार्थ—अकेले स्थान में उगा हुआ बलवान्, दृढ़मूलवाला=जड़ जमा हुआ महान् वृक्ष भी वायु द्वारा तने से उखाड़कर फेंक दिया जाता है, परन्तु जो वृक्ष इकट्ठे और समुदायरूप में दृढ़मूल होते हैं, वे अत्यन्त तीव्र आँधियों को भी एक-दूसरे की सहायता से सह लेते हैं।

The tree that stands aloof though gigantic, strong and deep-rooted, has its trunk soon smashed and twisted by a mighty wind, whereas the trees which grow in close compact are competent, owing to mutual dependence, to resist even more violent winds.

एवं मनुष्यमप्येकं गुणैरपि समन्वितम् ।
शक्यं द्विषन्तो मन्यन्ते वायुर्द्रुममिवैकजम् ॥६४॥
अन्योऽन्यसमुपष्टम्भादन्योन्यापाश्रयेण च ।
ज्ञातयः सम्प्रवर्धन्ते सरसीवोत्पलान्युत ॥६५॥

भावार्थ—अनेक गुणों से युक्त होनेपर भी अकेले मनुष्य को शत्रु लोग उसी प्रकार नष्ट करने योग्य समझते हैं, जैसे अकेले खड़े हुए दृढ़मूल वृक्ष को भी आँधी नष्ट कर देती है, परन्तु एक-दूसरे के सहारे और सहयोग से सम्बन्धी ऐसे बढ़ते हैं, जैसे तालाब में कमल वृद्धि को प्राप्त होते हैं।

He who is single, however endowed with the virtues, is regarded by foes as capable of being vanquished like an isolated tree by the winds, but relatives in consequence of mutual dependence and aid grow together, just like lotus stalks grow in a lake.

अवध्या ब्राह्मणा गावो ज्ञातयः शिशवः स्त्रियः ।
येषां चान्नानि भुञ्जीत ये च स्युः शरणागताः ॥६६॥

भावार्थ—ब्राह्मण, गौएँ, सम्बन्धी, शिशु, स्त्रियाँ, जिनका अन्न खाया हो और

जो शरणगत हों—ये सब अवध्य हैं, इनकी हत्या नहीं करनी चाहिए।

Brāhmaṇās, kine, relatives, children, women, those whose food is eaten and those that yield by asking for refuge—these all should not be slain, instead they should always be protected.

न मनुष्ये गुणः कश्चिद् राजन् सधनतामृते ।
अनातुरत्वाद् भद्रं ते मृतकल्पा हि रोगिणः ॥६७॥

भावार्थ—मनुष्य में स-धनता और नीरोगता के अतिरिक्त और कोई गुण नहीं है, अर्थात् ये दोनों ही सबसे बड़े गुण हैं। रोगी पुरुष मरे हुए के समान होते हैं, इसलिए नीरोगता सर्वश्रेष्ठ धन है। हे राजन् ! तुम पाण्डवों का भाग उन्हें दे दो, तभी तुम्हारा कल्याण होगा।

O king ! without wealth and health there is no good quality in a man i.e. both these are the highest qualities in a man. Unhealthy and ill persons are just like dead, therefore, a sound health free from disease is the best wealth. You give the share of the *Pāndavās* to them, then only you can hope for your welfare.

अव्याधिजं कटुकं शीर्षरोगं
पापानुबन्धं परुषं तीक्ष्णमुष्णम् ।
सतां पेयं यन्न पिबन्त्यसन्तो
मन्युं महाराज पिब प्रशाम्य ॥६८॥

भावार्थ—हे महाराज ! क्रोध बिना व्याधि के उत्पन्न होनेवाला, कड़वा, बुद्धि को विकृत करनेवाला, कुकर्मों में फँसानेवाला, कठोर, तीखा और गरम=शरीर में ताप देनेवाला होता है। सज्जन लोग इसे पी जाते हैं, दुष्ट इसे नहीं पी सकते। आप इसका पान कर लो और शान्त हो जाओ।

O king ! anger is a kind of bitter, pungent, severe, biting and hot (which produces heat in the body) drink. It is painful in consequence, because it entraps in evil deeds. It is a kind of headache not born of any physical illness. Those who are noble swallow it, while the wicked persons can not digest it. You swallow it and obtain peace.

रोगार्दिता न फलान्याद्रियन्ते
न वै लभन्ते विषयेषु तत्त्वम् ।

दुःखोपेता रोगिणो नित्यमेव
न बुध्यन्ते धनभोगान्न सौख्यम् ॥६९॥

भावार्थ—रोग से पीड़ित मनुष्य को अपने शुभ कर्मों के फल में प्राप्त पुत्र-पशु आदि अच्छे नहीं लगते, न रूप-रस आदि विषयों में ही उन्हें कोई सार प्रतीत होता है। रोगी सदा ही दुःख से युक्त हुए न तो धन और भोगों का आनन्द ले पाते हैं और न जीवन में कभी सुख का दर्शन=अनुभव कर पाते हैं।

Those who are tortured by disease do not like their off-spring and cattle etc., which is the reward of their good deeds. Also they do not see any substance in the worldly enjoyments. The sick, however, filled with sorrow knows not what happiness is or what the enjoyments of wealth are ?

पुरा ह्युक्तं नाकरोस्त्वं वचो मे
द्यूते जितां द्रौपदीं प्रेक्ष्य राजन्।
दुर्योधनं वारयेत्यक्षवत्यां
कितवत्वं पण्डिता वर्जयन्ति ॥७०॥

भावार्थ—हे राजन्! द्यूतसभा में जुए में जीती हुई द्रौपदी को देखकर मैंने तुमसे कहा था कि 'दुर्योधन को इस दुष्कर्म से रोको, क्योंकि बुद्धिमान् लोग जुए का निषेध करते हैं', परन्तु आपने मेरी बात नहीं मानी, यह उसी का फल है।

O king ! In the assembly of gamblers, beholding *Ḍraupaḍi* won at dice, I had spoken to you, before, these words—'Stop *Ḍuryodhana* from this evil act, because wise men speak ill of gambling (prohibit it)'. But you did not act upon my advice. This is the result of that.

न तद्बलं यन्मृदुना विरुध्यते
सूक्ष्मो धर्मस्तरसा सेवितव्यः।
प्रध्वंसिनी क्रूरसमाहिता श्रीर्
मृदुप्रौढा गच्छति पुत्रपौत्रान् ॥७१॥

भावार्थ—जिसके द्वारा दुर्बल का विरोध किया जाए वह बल नहीं है, धर्म का तत्त्व अति गहन है, अतः उसका शीघ्रता से सेवन करना चाहिए। क्रूर=दुष्ट मनुष्य के पल्ले पड़ी हुई लक्ष्मी (धन-सम्पत्ति) विनाश करनेवाली होती है। सहिष्णु

मनुष्य द्वारा बढ़ाई हुई लक्ष्मी पुत्र-पौत्रों को प्राप्त होती है, अर्थात् चिरस्थायी होती है।

That is no strength by which weak is opposed. Religion is very subtle, therefore, it should be acted upon quickly. The wealth which is in the hands of a crooked person is destined to bring ruin. The prosperity which is enhanced by meek and forbearing persons descends to sons and grandsons, i.e. it is everlasting.

धार्तराष्ट्राः पाण्डवान्पालयन्तु
पाण्डोः सुतास्तव पुत्राँश्च पान्तु ।
एकारिमित्राः कुरवो ह्येककार्या
जीवन्तु राजन् सुखिनः समृद्धाः ॥७२॥

भावार्थ—हे राजन् ! आपके पुत्र पाण्डवों की रक्षा करें और पाण्डु के पुत्र आपके पुत्रों की रक्षा करें। ये कुरु=कौरव और पाण्डव दोनों समान मित्र और समान शत्रुवाले तथा एक प्रयोजनवाले होकर सुखी और समृद्ध=फूलते-फलते हुए दीर्घकाल तक जीएँ।

O king ! let, therefore, your sons should cherish and protect the *Pāndavās* and the *Pāndavās* should cherish and protect your sons. Let the *Kurus* and the *Pāndavās* both having the same friends and the same foes and having the same object live together in happiness and prosperity for long.

मेढीभूतः कौरवाणां त्वमद्य
त्वय्याधीनं कुरुकुलमाजमीढ ।
पार्थान् बालान् वनवासप्रतप्तान्
गोपायस्व स्वं यशस्तात रक्षन् ॥७३॥

भावार्थ—हे अजमीढ के वंशज धृतराष्ट्र ! इस समय आप ही कौरवों को वश में रख सकते हो। कुरुकुल तुम्हारे अधीन है, अतः हे तात ! तुम अपने यश की रक्षा करते हुए वनवास के कष्टों से सन्तप्त पृथा के बाल-पुत्रों की रक्षा करो।

You alone can, at present, control your sons. O *Dhṛtrāstra* ! the descendant of *Ajmidha* ! The race of *Kuru* is dependent on you. Therefore, O sire! preserving your fame you should cherish and

protect the children of *Prathā* (*Kunti*) who are afflicted with sufferings in exile.

संधत्स्व त्वं कौरव पाण्डुपुत्रैर्
मा तेऽन्तरं रिपवः प्रार्थयन्तु ।
सत्ये स्थितास्ते नरदेव सर्वे
दुर्योधनं स्थापय त्वं नरेन्द्र ॥७४॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि प्रजागरपर्वणी विदुरनीतिवाक्ये षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥

॥ इति विदुरनीतौ (विदुरप्रजागरे) चतुर्थोऽध्यायः ॥

भावार्थ—हे धृतराष्ट्र ! तुम पाण्डुपुत्रों के साथ सन्धि कर लो जिससे शत्रु लोग तुम्हारे दोनों के मध्य में फूट उत्पन्न न कर सकें । हे राजन् ! पाण्डु के पुत्र सत्य पर स्थित हैं । तुम दुर्योधन को वश में रक्खो ।

O descendant of *Kuru* ! *Dhṛtrāstra* ! make peace with the sons of *Pāndu.* Let not your foes discover your holes (shortcomings) and create a rift between you. O king ! the sons of *Pandu* are devoted to truth. O good among men ! withdraw *Ḍuryodhana* from his evil ways.

यह विदुरनीति (विदुरप्रजागर) का चतुर्थ अध्याय सम्पूर्ण हुआ ॥

Here ends the fourth chapter of Viḍura-Niti.

अथ पञ्चमोऽध्यायः—Fifth Chapter

विदुर उवाच

सप्तदशेमान् राजेन्द्र मनुः स्वायम्भुवोऽब्रवीत् ।
वैचित्रवीर्य पुरुषानाकाशं मुष्टिभिर्घ्नतः ॥१॥
दानवेन्द्रस्य च धनुरनाम्यं नमतोऽब्रवीत् ।
अथो मरीचिनः पादानग्राह्यान् गृह्णतस्तथा ॥२॥

भावार्थ—विदुरजी बोले—हे विचित्रवीर्य के पुत्र ! हे राजश्रेष्ठ ! स्वायम्भु के पुत्र महर्षि मनु ने इन सत्रह मनुष्यों को 'आकाश को मुट्ठियों से पीटनेवाला' अर्थात् मूर्ख कहा है तथा इन्हें मेघों से उत्पन्न, न झुकाये जा सकनेवाले इन्द्रधनुष को झुकानेवाला और न पकड़ी जा सकनेवाली सूर्य-चन्द्र की किरणों को पकड़नेवाला कहा है ।

Viḍura said—O son of *Viçitravirya* ! O good among kings ! *Manu*—the son of *Svayaṁbhu* has spoken of the following seventeen men as those who strike empty space with their fists i.e. he has held them foolish. He has spoken of them as those who seek to bend the rainbow formed in the sky because of the clouds or who desire to catch the intangible rays of the sun and the moon.

***विशेष**—पिछले अध्याय में ५१वें श्लोक से विदुरजी का प्रवचन गतिमान् था । धृतराष्ट्र के प्रश्न के बिना ही एक नया प्रसङ्ग आरम्भ करने से यह अध्याय प्रक्षिप्त प्रतीत होता है ।*

Note—*In the last chapter from the 51st verse the sermon of Vidura was going on. Without being asked by Dhṛtrāṣtra, he has begun a new topic. Therefore, this chapter seems to be interpolated.*

यश्चाशिष्यं शास्ति वै यश्च तुष्येद्§
यश्चातिवेलं भजते द्विषन्तम् ।

---

§ पाठभेद—कुप्येद्=जो व्यर्थ में क्रोध करे ।

स्त्रियश्च यो रक्षति भद्रमश्नुते
यश्चायाच्यं याचते कत्थते वा ॥३॥
यश्चाभिजातः प्रकरोत्यकार्यं
यश्चाबलो बलिना नित्यवैरी ।
अश्रद्दधानाय च यो ब्रवीति
यश्चाकाम्यं कामयते नरेन्द्र ॥४॥
वध्वाऽवहासं श्वसुरो मन्यते यो
वध्वावसन्नभयो मानकामः ।
परक्षेत्रे निर्वपति यश्च बीजं
स्त्रियं च यः परिवदतेऽतिवेलम् ॥५॥
यश्चापि लब्ध्वा न स्मरामीति वादी
दत्त्वा च यः कत्थति याच्यमानः ।
यश्चासतः सत्त्वमुपानयीत
एतान्नयन्ति निरयं पाशहस्ताः ॥६॥

भावार्थ—(१) जो शासन न किये जा सकनेवाले पर शासन करना चाहता है, (२) जो अल्पलाभ से ही सन्तुष्ट हो जाता है, (३) जो मर्यादा का उल्लंघन करके भी शत्रु की सेवा करता है, (४) जो रक्षण के अयोग्य स्त्रियों की रक्षा करता है और शत्रु-सेवा तथा स्त्री-रक्षा से कल्याण प्राप्त करना चाहता है, (५) जो याचना करने के अयोग्य (कंजूसादि) से माँगता है, (६) जो आत्मप्रशंसा करता है, (७) जो कुलीन होकर निन्दनीय कर्म करता है, (८) जो निर्बल या सेनारहित होकर भी बलवान् के साथ सदा वैर रखता है, (९) जो अश्रद्धालु के लिए सदुपदेश अथवा विद्यादान देता है, (१०) जो कामना करने के अयोग्य वस्तु की कामना करता है, (११) जो ससुर पुत्रवधू के साथ गन्दे उपहास को उचित मानता है, (१२) जो वधू के साथ एकान्तवास करके भी भयरहित होकर समाज में अपनी प्रतिष्ठा चाहता है, (१३) जो पराये खेत में बीज-बोता है—व्यभिचारी

है, (१४) जो मर्यादा का उल्लंघन करके नारी की निन्दा करता है, (१५) जो कोई वस्तु लेकर भी यह कहे कि मुझे स्मरण नहीं है, (१६) जो माँगने पर दान देकर उसके लिए आत्मश्लाघा करे और (१७) जो झूठ को सत्य सिद्ध करने का प्रयास करे, हे नरेन्द्र ! इन सत्रह प्रकार के लोगों को पाशहस्त=हाथों में पाश लिये हुए यमराज के दूत नरक में ले-जाते हैं।

Those seventeen kinds of foolish persons are as follows—

1. He who seeks to control a person who is incapable of being controlled, 2. he who is content with small gains, 3. he who transgressing the limits of morality and propriety humbly pays courts to the enemies, 4. he who protects the women which should not be protected and desires his welfare by serving the enemy and protecting such women, 5. he who asks him for charity who should never be asked (miser etc.), 6. he who praises himself, 7. he who is born in a high family commits an improper deed, 8. he who being weak or without having an army always wages hostilities with one who is powerful, 9. he who imparts a sermon or knowledge to one who is devoid of reverence, 10. he who desires to have that thing which should not be desired, 11. he who being a father-in-law justifies trash jokes with his daughter-in-law, 12. he who having sexual relations with his daughter-in-law desires his prestige in the society having his alarms dispelled, 13. he who scatters his seed in the field of another i.e. who commits adultry, 14. he who transgressing the limits of morality and propriety speaks ill of women, 15. he who having received any thing from another says that he does not remember it, 16. he who when asked, gives charity and later on boasts for it, and 17. he who strives to prove true what is false. O king ! the messengers of *Yama* with nooses in their hand, drag these seventeen persons to hell.

***विशेष**—यहाँ पौराणिक यमराज और उसके दूतों का वर्णन नहीं है। यमराज का अर्थ है—न्यायकारी परमेश्वर और पाशहस्त दूत हैं उसकी सर्वत्र फैली हुई व्यवस्थाएँ। यहाँ काव्यमयी भाषा में पाशहस्त दूतों का वर्णन है।*

***Note**—Here there is no description of the mythological Yama and his messengers. The word Yamarāja, here means God who is judicious and messengers with nooses in their hands are his all pervading systematical rules. The description of messengers with nooses in their hands is only poetical.*

यस्मिन् यथा वर्तते यो मनुष्यस्
तस्मिंस्तथा वर्तितव्यं स धर्मः ।
मायाचारो मायया वर्तितव्यः
साध्वाचारः साधुना प्रत्युपेयः ॥७॥

भावार्थ—जो जैसा व्यवहार करता है, उसके साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहिए, यह धर्म है । छली-कपटी से छल-कपटपूर्ण व्यवहार करना चाहिए और सज्जनों के साथ सज्जनता का व्यवहार करना चाहिए ।

On should behave towards others just as others behave towards him. This is consistant with religion or social polity. One should behave deceitfully towards him who behaves decietfully, but honestly towards him who is honest in his behaviour.

जरा रूपं हरति हि धैर्यमाशा
मृत्युः प्राणान्धर्मचर्यामसूया ।
कामो ह्रियं वृत्तमनार्यसेवा
क्रोधः श्रियं सर्वमेवाभिमानः ॥८॥

भावार्थ—बुढ़ापा रूप को, आशा धैर्य को, मृत्यु प्राणों को, असूया धर्माचरण को, काम लज्जा को, अनार्यों का संग सदाचार को, क्रोध सम्पत्ति को और अभिमान सब-कुछ को हर लेता है ।

·Old age ruins beauty and the charm of the body, hope kills patience, death takes away life, backbiting washes away the practice of virtue, lust kills modesty, companionship with the wicked ruins good behaviour, anger destroys prosperity and pride ruins every thing.

***विशेष**—यह श्लोक ३/४६ की पुनरुक्ति है ।*

***Note**—This verse is a repetition of 3/49.*

धृतराष्ट्र उवाच

शतायुरुक्तः पुरुषः सर्ववेदेषु वै यदा ।
नाप्नोत्यथ च तत्सर्वमायुः केनेह हेतुना ॥६॥

भावार्थ—धृतराष्ट्र ने पूछा—जब सब वेदों में मनुष्य को सौ वर्ष की आयुवाला कहा गया है, फिर मनुष्य किस कारण से उस सम्पूर्ण आयु को प्राप्त नहीं कर पाता ?

Dhṛtrāstra asked—'When man has been spoken of, in all the *Vedās* as having a sapn of hundred years of his life, for what reason then, all men do not attain the allotted life-span ?

विदुर उवाच

अतिमानोऽतिवादश्च तथाऽत्यागो नराधिप ।
क्रोधश्चात्मविधित्सा च मित्रद्रोहश्च तानि षट् ॥१०॥

भावार्थ—विदुरजी बोले—हे राजन् ! अभिमान अथवा स्वार्थ, बहुत बोलना, दान न करना, क्रोध करना, अपने ही पालन-पोषण की इच्छा और मित्रों के साथ द्रोह—इन छह कारणों से मनुष्य शीघ्र मर जाता है।

Viḍura replied—O king! excess of pride or selfishness, excess in speech, lack of charity, excess of anger, desire of one's own nurturing and hostility with friends—these are six causes of a man's untimely death.

एत एवासयस्तीक्ष्णाः कृन्तन्त्यायूंषि देहिनाम् ।
एतानि मानवान्घ्नन्ति न मृत्युर्भद्रमस्तु ते ॥११॥

भावार्थ—अभिमानादि पूर्वोक्त छह तीक्ष्ण तलवारें ही प्राणियों की आयु को काटती हैं, ये ही मनुष्यों को मारती हैं, न कि मृत्यु। हे राजन् ! तुम अभिमान को त्यागो, जिससे तुम्हारा कल्याण हो।

These six, O king ! are sharp swords which cut off the period of life allotted to the creatures. It is these that kill men and not death. You should forsake vanity, so that God may grant you all happiness.

विश्वस्तस्यैति यो दारान् यश्चापि गुरुतल्पगः ।
वृषलीपतिर्द्विजो यश्च पानपश्चैव भारत ॥१२॥
आदेशकृद् वृत्तिहन्ता द्विजानां प्रेषकश्च यः ।
शरणागतहा चैव सर्वे ब्रह्महणः समाः ।
एतैः समेत्य कर्तव्यं प्रायश्चित्तमिति श्रुतिः ॥१३॥

भावार्थ—हे भरतकुलभूषण ! जो अपने ऊपर विश्वास करनेवाले पुरुष की स्त्री के साथ व्यभिचार करता है, जो गुरुपत्नी से सम्भोग करता है, जो द्विज धर्म-घातिका स्त्री का पति है, जो शराबी है, जो पूज्य पुरुषों को भी मनमाना आदेश देनेवाला है, जो ब्राह्मणों की आजीविका का विनाशक और उन्हें दास्यकर्म में लगानेवाला तथा शरणागत का घात करनेवाला है—ये सब ब्रह्महत्यारे के समान हैं। वेद की आज्ञा है कि इनके साथ सम्बन्ध त्यागकर प्रायश्चित्त करना चाहिए।

O the best among the *Bharata* race ! who commits adultery with the wife of one who has confided in him, he who violates the bed of his preceptor, the twice born (*Brāhmaṇa*) who becomes the husband of a mean woman who is fallen in the religious or moral sense, he who is addicted to wine, he who commands at his will the venerable persons, he who snatches the livelihood of the *Brahmanas*, who puts them in slavery and he who takes the life of him who yields asking for protection—are all guilty of the sin of slaying the *Brahmanas*. The *Vedas* declare that a man should have no contact with them, because contact with them requires expiation.

विशेष—*'समेत्य' का प्रसिद्ध अर्थ 'मिलकर' है, परन्तु यहाँ प्रकरणानुसार 'सम्+एत्य' अच्छी प्रकार उलाँघकर, 'त्याग करके' ही संगत होता है।*

Note—*The prevalent meaning of the word 'समेत्य' is 'to be united', but here according to the context appropriate meaning of the word 'सम् एत्य' is forsaking.*

गृहीतवाक्यो नयविद् वदान्यः
शेषान्नभोक्ता ह्यविहिंसकश्च ।
नानर्थकृत्याकुलितः कृतज्ञः
सत्यो मृदुः स्वर्गमुपैति विद्वान् ॥१४॥

भावार्थ—जो बड़ों का आज्ञाकारी, नीतिज्ञ, दानशील, यज्ञशेष का खानेवाला, हिंसा न करनेवाला, बुरे कार्यों से दूर रहनेवाला, कृतज्ञ, सत्यवादी और कोमल स्वभाववाला विद्वान् होता है, वह सुख-साधनों को प्राप्त होता है।

He who accepts the teachings and orders of the wise, he who is acquainted with the rules of morality, he who is liberal, he who eats after performing *Agnihotra*, he who is envious to none, he who

abstains from wicked deeds, he who is grateful, truthful, humble and learned succeeds in attaining to the heaven—the means of happiness.

सुलभाः पुरुषा राजन्सततं प्रियवादिनः ।
अप्रियस्य तु पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः ॥१५॥

भावार्थ—हे राजन् ! इस संसार में प्रिय बोलनेवाले खुशामदी मनुष्य तो बड़ी सरलता से मिल जाते हैं, परन्तु सुनने में अप्रिय लगनेवाले, वस्तुतः हितकारी वचन के कहने और सुननेवाले—दोनों ही दुर्लभ होते हैं ।

O king ! flatterers are abundant in this world, who can always speak sweet and pleasant words, but the speaker, however is rare as also the listener, of words which are severe and disagreeable, but beneficial like medicine.

यो हि धर्मं समाश्रित्य हित्वा भर्तुः प्रियाप्रिये ।
अप्रियाण्याह पथ्यानि तेन राजा सहायवान् ॥१६॥

भावार्थ—जो व्यक्ति राजा के प्रिय और अप्रिय का विचार छोड़कर, धर्म का आश्रय लेकर, राजा को प्रिय न लगनेवाले हितकारी वचन कहता है, वह राजा का सच्चा मित्र होता है ।

That man who, without considering what is agreeable or disagreeable to his master, keeping religion alone in view, says what is even unpalatable, but beneficial, is a true friend of the king.

त्यजेदेकं कुलस्यार्थे ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत् ।
ग्रामं जनपदस्यार्थे आत्मार्थे पृथिवीं त्यजेत् ॥१७॥

भावार्थ—मनुष्य को चाहिए कि कुल की अभिवृद्धि और सुख-शान्ति के लिए एक व्यक्ति को त्याग दे, ग्राम की उन्नति के लिए कुल को छोड़ दे, प्रदेश के कल्याण के लिए ग्राम को त्याग दे और अपनी आत्मा की उन्नति के लिए सारी पृथिवी के राज्य को भी त्याग दे ।

A man should sacrifice (forsake) one member for the welfare and happiness of the family. For the sake of a village, a family may be sacrificed, for the sake of a state a village may be sacrificed and for the sake of one's own soul the whole earth may be sacrificed.

आपदर्थे धनं रक्षेद् दारान् रक्षेद् धनैरपि ।
आत्मानं सततं रक्षेद् दारैरपि धनैरपि ॥१८॥

भावार्थ—मनुष्य को चाहिए कि आपत्तिकाल के लिए धन बचाकर रक्खे, बचाये हुए धन को व्यय करके भी स्त्री की रक्षा करे और धन तथा स्त्री दोनों का विनाश करके भी सदा अपनी रक्षा करे अथवा स्त्रियों और धन-सम्पत्ति दोनों से अपने को बचाए, इनमें लिप्त न हो।

A man should save his wealth in view of the calamities that may overtake him. By spending the spare wealth one should protect his wife, and by both—wealth and wife one should protect his own soul or a man should keep aloof from wealth and wife, he should not be coveteous and lustful.

द्यूतमेतत् पुराकल्पे दृष्टं वैरकरं नृणाम् ।
तस्माद् द्यूतं न सेवेत हास्यार्थमपि बुद्धिमान् ॥१९॥

भावार्थ—प्राचीन समय में जब मनुष्य में वैर-बुद्धि अति न्यून थी, तब भी जुआ मनुष्यों में वैर उत्पन्न करनेवाला देखा गया है, इस समय, जब वैर-बुद्धि बहुत बढ़ी हुई है, तब तो कहना ही क्या ? इसलिए बुद्धिमान् मनुष्य को चाहिए कि हँसी-मजाक में भी जुआ न खेले।

Even in olden days when hostility was minimum, then too, it has been seen that gambling provoked quarrels. Now-a-days when enemity has increased much, then what to say ? Therefore, he who is wise should not restore to it (gambling) even in jest.

उक्तं मया द्यूतकालेऽपि राजन्
नेदं युक्तं वचनं प्रातिपेय ।
तदौषधं पथ्यमिवातुरस्य
न रोचते तव वैचित्रवीर्य ॥२०॥

भावार्थ—हे प्रतीप-कुलोत्पन्न ! विचित्रवीर्यकुमार ! राजन् ! मैंने जुआ आरम्भ होने के समय भी कहा था कि 'जुआ खेलना बुरा है', परन्तु उस समय मेरा वह हितकारी वचन तुम्हें उसी प्रकार अच्छा नहीं लगा, जैसे रोगी को कड़वी दवा और पथ्य अच्छा नहीं लगता।

O the son of *Pratipa* ! at the time of that gambling assembly, I had told you O king ! that this is not proper. But O the son of *Vicitravirya* ! just like bitter medicine and prescription of food to a sick man, those beneficial words of mine were not aggreeable to you.

काकैरिमाँश्चित्रबर्हान् मयूरान्
पराजयेथाः पाण्डवान् धार्तराष्ट्रैः ।
हित्वा सिंहान् क्रोष्टुकान् गूहमानः
प्राप्ते काले शोचिता त्वं नरेन्द्र ॥२१॥

भावार्थ—हे राजेन्द्र ! तुम स्वसन्तानरूपी कौओं के द्वारा अनेक सद्गुणों से सुभूषित चित्र-विचित्र पंखोंवाले मोरों के सदृश पाण्डवों को पराजित करना चाहते हो। तुम सिंहों को छोड़कर सियारों की रक्षा करना चाहते हो। स्मरण रखो ! समय आने पर इसके लिए तुम्हें पछताना पड़ेगा।

O king ! for the sake of your sons, who are all like crows, you want to vanquish the sons of *Pāndu* who are just like peacocks of variegated plumage. Forsaking lions you desire to protect the jackals. Remember, when time will come, you will have to repent for all this.

यस्तात न क्रुध्यति सर्वकालं
भृत्यस्य भक्तस्य हिते रतस्य ।
तस्मिन् भृत्या भर्तरि विश्वसन्ति
न चैनमापत्सु परित्यजन्ति ॥२२॥

भावार्थ—हे भाई ! जो स्वामी अपने हित में लगे हुए और भक्त सेवक पर कभी क्रोध नहीं करता, सेवक भी ऐसे स्वामी पर विश्वास करते हैं और आपत्ति आने पर उसे छोड़ते नहीं हैं।

O sire ! the master, who is never angry with his devoted servants who zealously pursue for his good, the servants also trust such a master and never leave him even in distress.

न भृत्यानां वृत्तिसंरोधनेन
राज्यं धनं संजिघृक्षेदपूर्वम् ।
त्यजन्ति ह्येनं वञ्चिता वै विरुद्धाः
स्निग्धा ह्यमात्याः परिहीनभोगाः ॥२३॥

भावार्थ—सेवकों के वेतन को रोककर दूसरे के राज्य और धन का अपहरण करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए, क्योंकि वृत्ति से वंचित होकर भोग-साधन-विहीन सेवक भी विरोधी बन जाते हैं और स्नेह करनेवाले मन्त्री आदि भी ऐसे राजा को त्याग देते हैं।

By stopping the pay of one's servants, one should not seek to seize the kingdom and wealth of others, for deprived of their means of livelihood and enjoyments they turn against him. Even affectionate counsellors leave him in distress.

कृत्यानि पूर्वं परिसंख्याय सर्वा-
ण्यायव्यये चानुरूपां च वृत्तिम्।
संगृह्णीयादनुरूपान् सहायान्
सहायसाध्यानि हि दुष्कराणि ॥२४॥

भावार्थ—सर्वप्रथम सेवकों द्वारा कराये जानेवाले सब कार्यों को गिनकर (जानकर), फिर आय-व्यय और उचित वेतन का विचार करके, राजा अपने कार्य के अनुकूल सुयोग्य सहायकों का संग्रह करे, क्योंकि राज्यादि दुष्कर कार्य सहायकों द्वारा ही सिद्ध हुआ करते हैं।

Reflecting on and counting first on all intended acts to be done by the servants and adjusting the wages and allowances of servants with his income and expenditure, a king should engage favourable and competent consellors and ministers, because there is nothing that cannot be accomplished by alliances.

अभिप्रायं यो विदित्वा तु भर्तुः
सर्वाणि कार्याणि करोत्यतन्द्री।
वक्ता हितानामनुरक्त आर्यः
शक्तिज्ञ आत्मेव हि सोऽनुकम्प्यः ॥२५॥

भावार्थ—जो आलस्यरहित सेवक स्वामी के अभिप्राय को जानकर ही उसके सब कार्य कर देता है तथा जो हितकारी वचन कहनेवाला, स्वामिभक्त, आर्य और अपनी शक्ति को जानता है, राजा के लिए वह सेवक अपनी आत्मा के समान दया का पात्र होता है—राजा को उसके साथ आत्मवत् व्यवहार करना चाहिए।

The servant (officer) who fully understanding the intentions of his royal master discharges his duties with cheerful readiness, who utters words which are beneficial for his lord, who is devoted, noble and fully acquainted with his own might, should be regarded by the king as his ownself. He should be a favoured one. He should be behaved just like his own soul.

वाक्यं तु यो नाद्रियतेऽनुशिष्टः
प्रत्याह यश्चापि नियुज्यमानः ।
प्रज्ञाभिमानी प्रतिकूलवादी
त्याज्यः स तादृक् त्वरयैव भृत्यः ॥२६॥

भावार्थ—जो सेवक आदेश दिये जाने पर भी स्वामी की आज्ञा का पालन नहीं करता, किसी कार्य में लगाये जाने पर सामने बोलनेवाला हो, जिसे अपनी बुद्धि का घमण्ड हो तथा जो प्रतिकूल बोलनेवाला हो, ऐसे नौकर को शीघ्र ही हटा देना चाहिए।

That servant, however, who commanded by his master does not obey him, who enjoined to do anything refuses to submit, who is proud of his own intelligence and is given to arguing against his master, should be got rid of without the least delay.

अस्तब्धमक्लीबमदीर्घसूत्रं
सानुक्रोशं श्लक्ष्णमहार्यमन्यैः ।
अरोगजातीयमुदारवाक्यं
दूतं वदन्त्यष्टगुणोपपन्नम् ॥२७॥

भावार्थ—अहंकारशून्य, शूरवीर, शीघ्रकारी, दयालु, सौम्य, दूसरों के बहकावे में न आनेवाला, सर्वथा नीरोग जाति में उत्पन्न और युक्तियुक्त वचन बोलनेवाला—इन आठ गुणों से युक्त मनुष्य को दूत नियुक्त करना चाहिए।

The man, endued with following eight qualities, should be appointed as a royal messenger, viz., absence of pride, valiant, absence of procrastination, kindness, serene, incorruptibility, birth in a family free from the taint of disease and utterence of befitting words.

न विश्वासाज्जातु परस्य गेहे
गच्छेन्नरश्चेतयानो विकाले ।

न चत्वरे निशि तिष्ठेन्निगूढो
न राजकाम्यां योषितं प्रार्थयीत ॥२८॥

भावार्थ—बुद्धिमान् मनुष्य को चाहिए कि विश्वास करके असमय में कभी किसी के घर न जाए, रात्रि में छिपकर चौराहे पर न बैठे और राजा जिस स्त्री को चाहता हो, ऐसी स्त्री को पाने की इच्छा न करे।

A wise man having confidence should not enter in the house of any person or an enemy after dusk or at odd hours, at night should not lurk at a crossing and should not seek to enjoy a woman who is desired and loved by a king.

न निह्नवं मन्त्रगतस्य गच्छेत्
संसृष्टमन्त्रस्य कुसङ्गतस्य ।
न च ब्रूयान्नाश्वसिमि त्वयीति
सकारणं व्यपदेशं तु कुर्यात् ॥२९॥

भावार्थ—जो व्यक्ति पहले अपना मित्र था, अपनी मन्त्रणाओं में सम्मिलित होता था, परन्तु पीछे शत्रुओं के साथ मिल गया और कुसङ्गति में फँस गया, बुद्धिमान् उसका तिरस्कार न करे। 'मैं तुमपर विश्वास नहीं करता' ऐसा भी न कहे। हाँ, कोई-न-कोई बहाना बनाकर उससे बचता रहे।

The person who was a friend before and took part in his counsels, but afterwards he joins the enemies and falls in a bad company, a wise man should not disregard even such a person. Never tell him—'I do not believe you', but assigning some pretext keep away from him.

घृणी राजा पुंश्चली राजभृत्यः
पुत्रो भ्राता विधवा बालपुत्रा ।
सेनाजीवी चोद्धृतभूतिरेव
व्यवहारेषु वर्जनीयाः स्युरेते ॥३०॥

भावार्थ—अति दयालु अथवा उदारचित्त राजा, वेश्या, राजा का सेवक, पुत्र, भाई, छोटे-छोटे बच्चोंवाली विधवा, सैनिक, अधिकार से वञ्चित अधिकारी—इनके साथ लेन-देन का व्यवहार न करे, अर्थात् इनसे दूर रहना ही भला !

A king who is extremely merciful or highly generous, a woman of lewd character (a prostitute), the servant of a king, a son, a brother, a widow having infant sons, a soldier, and an high official deprived of his post—should never be dealt in pecuniary transactions of lending and borrowing i.e. it is good to keep away from them in this matter.

गुणा दश स्नानशीलं भजन्ते
बलं रूपं स्वरवर्णप्रशुद्धिः ।
स्पर्शश्च गन्धश्च विशुद्धता च
श्रीः सौकुमार्यं प्रवराश्च नार्यः ॥३१॥

भावार्थ—नित्य स्नान करनेवाले को ये दस लाभ प्राप्त होते हैं—(१) शारीरिक बल, (२) रूप-सौन्दर्य, (३) मधुर स्वर, (४) उज्ज्वल वर्ण, (५) कोमल स्पर्श, (६) सुगन्ध, (७) स्वच्छता, (८) शोभा, (९) सुकुमारता और (१०) उत्तम नारियाँ।

He who bathes daily derives ten benefits—viz., strength of the body, beauty of appearance, sweetness in the voice and capacity to utter all the alphabetical sounds, delicay of touch, fineness of scent, cleanliness, gracefulness, tenderness and beautiful women.

गुणाश्च षण्मितभुक्तं भजन्ते
आरोग्यमायुश्च बलं सुखं च ।
अनाविलं चास्य भवत्यपत्यं
न चैनमाद्यून इति क्षिपन्ति ॥३२॥

भावार्थ—परिमित=नपा-तुला भोजन करनेवाले को छह लाभ होते हैं—(१) नीरोगता, (२) दीर्घायु, (३) शारीरिक बल, (४) इन्द्रियों का सुख, (५) नीरोग सन्तान और (६) 'यह पेटू है' ऐसा कहकर उसकी निन्दा नहीं होती ।

He who is moderate in his diet gets six benefits, viz., good health, long life, bodily strength, happiness of the senses, healthy progeny and nobody reproaches him saying—'He is a glutton'.

अकर्मशीलं च महाशनं च
लोकद्विष्टं बहुमायं नृशंसम् ।

अदेशकालज्ञमनिष्टवेष-

मेतान् गृहे न प्रतिवासयेत ॥३३॥

भावार्थ—आलसी, पेटू, लोकनिन्दित, अत्यन्त चालाक, क्रूर, देश और काल को न जाननेवाला, भद्दा—निन्दित वेश धारण करनेवाला—इन सात प्रकार के व्यक्तियों को अपने घर में न बसाये।

One should not give shelter to these seven kinds of persons in his house, viz., one who is lazy, one who eats too much (a glutton), one who is hated by all, one who is exceedingly deceitful, one who is very cruel, one who is ignorant of the priority of time and place, and who puts on an ugly and condemnable dress.

कदर्यमाक्रोशकमश्रुतं च

वनौकसं धूर्तममान्यमानिनम् ।

निष्ठूरिणं कृतवैरं कृतघ्न-

मेतान् भृशार्तोऽपि न जातु याचेत् ॥३४॥

भावार्थ—अत्यन्त पीड़ित होने पर भी इन नौ प्रकार के व्यक्तियों से कभी कुछ न माँगे—(१) कंजूस, (२) गाली देनेवाला, (३) मूर्ख, (४) जंगली, (५) धूर्त, (६) अपूज्य की पूजा करनेवाला, (७) निर्दयी, (८) वैरी और (९) कृतघ्न।

A person, however distressed he may be never ask these nine kinds of men for anything, viz., who is a miser, one who abuses others, one who is foolish or unacquainted with the scriptures, who is uncivilized or dwells in the woods, who is cunning, who regards those who are unvenerable, who is cruel, who is hostile—habitually quarrels with others and he who is ungrateful.

संक्लिष्टकर्माणमतिप्रमादं

नित्यानृतं चादृढभक्तिकं च ।

विसृष्टरागं पटुमानिनं चा-

प्येतान् न सेवेत नराधमान् षट् ॥३५॥

भावार्थ—आततायी, अतिप्रमादी, सदा झूठ बोलनेवाले, अस्थिर भक्ति=शिथिल विश्वासवाले, स्नेहशून्य और अपने-आपको अत्यन्त चालाक समझनेवाले—इन छह नीच पुरुषों का संग कभी न करे।

A person should never serve these six worst among men, viz., one who is a tyrant, who is highly procrastinatory, who always speaks untruth, who is wanting in devotion, who is without affection a' d who regards himself competent to do everything.

सहायबन्धना ह्यर्थाः सहायाश्चार्थबन्धनाः ।
अन्योन्यबन्धनावेतौ विनान्योऽन्यं न सिध्यतः ॥३६॥

भावार्थ—राज्यादि कार्य मित्रों की सहायता से सम्पन्न होते हैं और मित्रों की प्राप्ति धन से होती है। ये दोनों (मित्र और धन) एक-दूसरे को बाँधनेवाले हैं और ये एक-दूसरे के बिना सिद्ध नहीं होते।

The state-affairs depend for their success upon the help of the friends and the friends are acquired with the help of money. They (friend and money) are intimately connected with each other. One can never be attained without the help of the other.

उत्पाद्य पुत्राननृणाँश्च कृत्वा
वृत्तिं च तेभ्योऽनुविधाय कांचित् ।
स्थाने कुमारीः प्रतिपाद्य सर्वा
अरण्यसंस्थोऽथ मुनिर्बुभूषेत् ॥३७॥

भावार्थ—सन्तान उत्पन्न करके, उन्हें ऋण-रहित (सुख-साधन-सम्पन्न) बनाकर तथा उनके लिए किसी आजीविका का प्रबन्ध करके और सब कन्याओं को यथायोग्य घरों और वरों को सौंपकर तत्पश्चात् गृहस्थ वानप्रस्थ होकर मुनि बनने की इच्छा करे।

After begetting sons and rendering them prosperous—free from all obligations and making some provision for their livelihood and bestowing maiden daughters on eligible persons and in good families, one should retire to the woods—he should enter the order of *Vanaprastha* and desire to live as a *Muni*.

हितं यत्सर्वभूतानामात्मनश्च सुखावहम् ।
तत्कुर्यादीश्वरे ह्येतन्मूलं सर्वार्थसिद्धये ॥३८॥

भावार्थ—जो कार्य सारे प्राणियों के लिए हितकर है और अपने लिए भी सुखकारी है, उसे ईश्वरार्पण बुद्धि से करे, यही सम्पूर्ण सिद्धियों का मूलमन्त्र है।

The act which is beneficial for all the creatures, as also for one's own happiness, one should do that with surrenderence to the Supreme Being for this is the root of the success of one's all objects.

विशेष—*श्लोक के उत्तरार्द्ध का अर्थ इस प्रकार भी हो सकता है कि मनुष्य (तत्) स्व-पर-हितकारी (कुर्यात्) कर्मों को करे। कालान्तर में (ईश्वरे) कर्मफल-प्रदाता परमात्मा के फल देने में भी (एतत्) यह स्व-पर-हिताचरण (मूलम्) मूल है और यही (सवर्थिसिद्धये) सब अर्थों—धर्म, अर्थ, काम और मोक्षरूपी चारों पुरुषार्थों की प्राप्ति करानेवाला है।*

Note—*The second half of the verse can also be translated like this—*

One should perform such deeds which are beneficial to one's ownself as for others also. In the course of time this conduct of performing acts beneficial to self and others will become the base for God Almighty—donor of reward of actions and only this conduct bestows the four fruits of life—i.e. Dharma—discharge of duty, Artha—acquirement of wealth, Kama—the gratification of desire and Moksha—final emancipation.

वृद्धिः प्रभावस्तेजश्च सत्त्वमुत्थानमेव च ।
व्यवसायश्च यस्य स्यात् तस्यावृत्तिभयं कुतः ॥३९॥

भावार्थ—जिस मनुष्य में उत्तरोत्तर बढ़ने की क्षमता, प्रभाव, तेजस्विता, धर्म विषयक सात्त्विक वृत्ति, उद्योग और निश्चयात्मिका बुद्धि हो उसे जीविका न होने का भय कैसे हो सकता है, अर्थात् इन गुणों से अलंकृत मनुष्य अपनी बुद्धि और भुजबल से सदा और सर्वत्र अपना निर्वाह करने में समर्थ होता है।

What anxiety or fear has he for a livelihood who has the capacity of gradual advancement, power of influencing others, radiance, valour, endeavour, decisive intelligence. That man, who is endued with these qualities, with his intelligence and strength of arms, is able to make his livelihood always and everywhere.

पश्य दोषान् पाण्डवैर्विग्रहे त्वं
यत्र व्यथेयुरपि देवाः सशक्राः ।
पुत्रैर्वैरं नित्यमुद्विग्नवासो
यशः प्रणाशो द्विषतां च हर्षः ॥४०॥

भावार्थ—हे धृतराष्ट्र ! पाण्डवों के साथ युद्ध होने पर जो दोष उत्पन्न होंगे, तनिक उनका विचार करो। पाण्डवों के साथ युद्ध छिड़ जाने पर देवताओंसहित इन्द्र भी व्यथित हो सकता है। पुत्रों के साथ नित्य का वैर मानसिक व्यथा को उत्पन्न करनेवाला, यश को धूल में मिलानेवाला और शत्रुओं को हर्षित करनेवाला होता है।

O *Dhṛtrāṣtra* ! Behold the evils of war against the *Pāndavās*. A war against them would sadden the very gods—noble men with *Indra*. The hostility of all the times, with the sons produces mental agony, it destroys the fame and lastly delights the enemies.

भीष्मस्य कोपस्तव चेन्द्रकल्प
द्रोणस्य राज्ञश्च युधिष्ठिरस्य।
उत्सादेयल्लोकमिमं प्रवृद्धः
श्वेतो ग्रहस्तिर्यगिवापतन् खे ॥४१॥

भावार्थ—हे इन्द्रतुल्य धृतराष्ट्र ! पितामह भीष्म, द्रोणाचार्य, राजा युधिष्ठिर और आपका बढ़ा हुआ क्रोध इस सारे संसार को ऐसे नष्ट कर सकता है, जैसे आकाश में तिरछी गति से भ्रमण करनेवाला धूमकेतु पृथिवी से टकराकर संसार का नाश कर डालता है।

O you of the splendour of *Indra* ! the growing wrath of *Bhiṣma*, of *Droṇa*, of king *Yudhiṣthira* and yours can destroy the whole universe, like a comet of large proportions roving transversely in the sky, by colliding with the earth.

तव पुत्रशतं चैव कर्णः पञ्च च पाण्डवाः।
पृथिवीमनुशासेयुरखिलां सागराम्बराम् ॥४२॥

भावार्थ—हे धृतराष्ट्र ! आपके सौ पुत्र, कर्ण तथा पाँचों पाण्डव मिलकर समुद्रपर्यन्त सम्पूर्ण भूमण्डल का शासन करें।

O *Dhṛtrāstra* ! Your hundred sons, *Karṇa* and five sons of *Pāndu*, uniting together should rule the vast earth with the belt of the seas.

धार्तराष्ट्राः वनं राजन् व्याघ्राः पाण्डुसुता मताः।
मा वनं छिन्धि सव्याघ्रं मा व्याघ्रा नीनशन्वनात् ॥४३॥

न स्याद्वनमृते व्याघ्रान् व्याघ्रा न स्युर्ऋते वनम् ।
वनं हि रक्ष्यते व्याघ्रैर्व्याघ्रान् रक्षति काननम् ॥४४॥

भावार्थ—हे राजन् ! तेरे पुत्र वन के समान हैं और पाण्डव बाघ माने जाते हैं, अतः बाघोंसहित वन को मत काटो और न वन से बाघों को नष्ट करो । बाघों के बिना वन सुरक्षित नहीं रह सकता और वन के बिना बाघ नहीं रह सकते, क्योंकि बाघ बन की रक्षा करते हैं और वन बाघों की रक्षा करते हैं ।

O king ! your sons and *Ḍuryodhana* etc. are like a forest and the *Pāndavās* are like the tigers, therefore, do not cut down the forest with the tigers, nor the tigers be driven out from the forest. Without the tigers the forest cannot remain well-protected and the tigers cannot live without a forest. The forests give shelter to the tigers and the tigers guard the forests.

न तथेच्छन्ति कल्याणान् परेषां वेदितुं गुणान् ।
यथैषां ज्ञातुमिच्छन्ति नैर्गुण्यं पापचेतसः ॥४५॥

भावार्थ—दुष्टबुद्धि मनुष्य दूसरे के उत्तम गुणों को जानने की वैसी इच्छा नहीं करते, जैसी उनके अवगुणों को जानने की इच्छा करते हैं ।

Those who are evil minded never seek so much to ascertain the good qualities of others as to ascertain their faults.

अर्थसिद्धिं परामिच्छन् धर्ममेवादितश्चरेत् ।
न हि धर्मादपैत्यर्थः स्वर्गलोकादिवामृतम् ॥४६॥

भावार्थ—उत्कृष्ट अर्थसिद्धि को चाहनेवाला मनुष्य सर्वप्रथम धर्म का आचरण करे, क्योंकि जैसे स्वर्ग से अमृत कभी पृथक् नहीं होता, इसी प्रकार धर्म से अर्थ कभी दूर नहीं होता ।

He who desires the top-most success in all matters connected with worldly profit, should from the very beginning practise virtue, because just as nectar is never separated from the heaven, similarly true wealth is never separated from virtue.

***विशेष**—यहाँ पौराणिक स्वर्ग का वर्णन नहीं है । स्वर्ग का अर्थ है—'स्वर्-ग'—*

सुख-शान्ति-आनन्द प्राप्त कराने का साधन। अमृत का अर्थ है जीवन, अर्थात् आनन्द प्राप्त कराने का साधन जीवन से पृथक् कभी नहीं होता। जीवित मनुष्य नाना प्रकार के कल्याणों का उपभोग करता है।

Note—*Here the word 'स्वर्ग' (heaven) does not denote the mythological heaven. The word 'स्वर्ग' means—'स्वर्+ग'—the means which lead to happiness and prosperity. The word 'अमृत' means life i.e. the means of happiness and prosperity are never separated from life. A living person enjoys welfares of various kinds.*

यस्यात्मा विरतः पापात् कल्याणे च निवेशितः।
तेन सर्वमिदं बुद्धं प्रकृतिर्विकृतिश्च या ॥४७॥

भावार्थ—जिस मनुष्य का आत्मा पाप से पृथक् हो चुका है और धर्म में प्रवृत्त हो चुका है, उसने जो प्रकृति तथा विकृति है—इस सबको जान लिया है—ऐसा समझना चाहिए।

He, whose soul has been detatched from sin and firmly inclined towards virtue, has understood all things in their natural and distorted states.

यो धर्ममर्थं कामं च यथाकालं निषेवते।
धर्मार्थकामसंयोगं सोऽमुत्रेह च विन्दति ॥४८॥

भावार्थ—जो मनुष्य धर्म, अर्थ और काम का समयानुसार सेवन करता है, वह इस जन्म और परजन्म में धर्म, अर्थ और काम—इन तीनों को प्राप्त करता है।

He who follows *Dharma* (virtue), *Artha* (wealth) and *Kama* (desire) at proper times, obtains in this life and the life after, a combination of all the three.

सन्नियच्छति यो वेगमुत्थितं क्रोधहर्षयोः।
स श्रियो भाजनं राजन् यश्चापत्सु न मुह्यति ॥४९॥

भावार्थ—हे राजन्! जो मनुष्य हर्ष और शोक के उमड़े हुए वेग को रोक लेता है और आपत्तियों में घबराता नहीं है, ऐसे मनुष्य को धन-सम्पत्ति प्राप्त होती है।

O king! he, who restrains the overflowing force of both anger and joy and never loses his senses under calamities, acquires money and possessions.

बलं पञ्चविधं नित्यं पुरुषाणां निबोध मे ।
यत्तु बाहुबलं नाम कनिष्ठं बलमुच्यते ॥५०॥
अमात्यलाभो भद्रं ते द्वितीयं बलमुच्यते ।
तृतीयं धनलाभं तु बलमाहुर्मनीषिणः ॥५१॥
यत्त्वस्य सहजं राजन् पितृपैतामहं बलम् ।
अभिजातबलं नाम तच्चतुर्थं बलं स्मृतम् ॥५२॥
येन त्वेतानि सर्वाणि संगृहीतानि भारत ।
यद् बलानां बलं श्रेष्ठं तत्प्रज्ञाबलमुच्यते ॥५३॥

भावार्थ—हे राजन् ! आपका कल्याण हो । मनुष्यों में सदा पाँच प्रकार का बल होता है, उसे मुझसे सुनिए । (१) बाहुबल नामक बल सबसे निकृष्ट बल कहलाता है ! (२) उत्तम मन्त्री की प्राप्ति अथवा अमात्यबल दूसरा बल है । (३) बुद्धिमान् लोग धन-प्राप्ति को तीसरा बल कहते हैं । (४) बाप-दादों से प्राप्त जो मनुष्य का स्वाभाविक बल होता है, वह अभिजात नामक चौथा बल माना गया है और (५) हे भारत ! जिस बल में ये सारे बल समाविष्ट हो जाते हैं तथा जो सब बलों में सर्वश्रेष्ठ है, वह 'बुद्धिबल' नामक पाँचवाँ बल है ।

O king ! blessed be thou. Men have five different kinds of strength. Listen to them from me. Of these, the strength of the arms is regarded to be of the most inferior kind. The acquisition of good counsellors is regarded as the second kind of strength. The wise men say that the acquisition of wealth is the third kind of strength. The strength of birth, which one naturally acquires from one's sires and grandsires, is regarded as the fourth kind of strength. O *Bharata* ! the strength in which all these strengths are incorporated and which is foremost of all kinds of strength, is called the strength of the intellect.

महते योऽपकाराय नरस्य प्रभवेन्नरः ।
तेन वैरं समासज्य दूरस्थोऽस्मीति नाश्वसेत् ॥५४॥

भावार्थ—जो मनुष्य किसी मनुष्य को बड़ी भारी हानि पहुँचा दे, उसके साथ वैर बाँधकर इस प्रकार आश्वस्त न हो कि मैं उससे बहुत दूर बैठा हूँ, वह मेरा

क्या बिगाड़ सकता है ।

A man causing great harm or inflicting great injury on a fellow creature, having provoked hostility with that, should not be assured that he lives at a distance from him, he can do no harm to me.

स्त्रीषु राजसु सर्पेषु स्वाध्यायप्रभुशत्रुषु ।
भोगेष्वायुषि विश्वासं कः प्राज्ञः कर्तुमर्हति ॥५५॥

भावार्थ—स्त्रियों, राजाओं, साँपों, स्वाध्याय, स्वामी, शत्रु, भोग और आयु—इन सबपर कौन बुद्धिमान् विश्वास कर सकता है ?

How can he, who is wise place his trust on women, kings, serpents, study of scriptures, his own master, enemies, enjoyments and the span of life.

***विशेष**—स्त्रियाँ और राजा चञ्चलचित्त होते हैं। सर्प स्वभाव से ही डसनेवाला होता है। स्वाध्याय आवृत्ति के बिना नष्ट हो जाता है। स्वामी का चित्त सदा एक-सा नहीं रहता, शत्रु तो है ही अविश्वासनीय। भोग नष्ट होनेवाले और आयु=जीवन क्षणभंगुर है, अतः इनपर विश्वास करना अपने को धोखे में रखना है।*

***Note**—The women and kings are fickle minded. The serpent stings by nature. The study of scriptures without revision is forgotten. The mind of the master always changes. The enemy without doubt is untrustworthy. The enjoyments are perishable and life is short lived. To put trust in all these, is to keep oneself in deception.*

प्रज्ञाशरेणाभिहतस्य जन्तोश्-
चिकित्सकाः सन्ति न चौषधानि ।
न होममन्त्रा न च मङ्गलानि
नाथर्वणा नाप्यगदाः सुसिद्धाः ॥५६॥

भावार्थ—बुद्धिरूपी बाण से मारे गये मनुष्य को जिलाने के लिए न तो वैद्य हैं, न ओषधियाँ हैं, न यज्ञ के मन्त्र हैं और न ही स्वस्तिवाचन आदि मङ्गलकर्म हैं, न सम्मोहिनी आदि विद्याएँ हैं और न पारे से सिद्ध हुई जड़ी-बूटियाँ हैं।

In order to make a man alive who has been struck by the arrow of wisdom, there are neither physicians nor medicines. In the case

of such a person neither the *Mantrās* of *Homa.* nor auspicious ceremonies nor hypnotism, nor herbs or medicines prepared with the help of mercury are of any efficacy.

सर्पाश्चाग्निश्च सिंहश्च कुलपुत्रश्च भारत ।
नावज्ञेया मनुष्येण सर्वे ह्येतेऽतितेजसः ॥५७॥

भावार्थ—हे भरतभूषण ! सर्प, अग्नि, सिंह और अपने कुल में उत्पन्न हुआ व्यक्ति—ये सभी अत्यन्त तेजस्वी होते हैं, अतः मनुष्य को चाहिए कि इनका अपमान कभी न करे।

O the best among the *Bharata* race ! serpents, fire, lions and consanguineous relative—all these are possessed of great power, Therefore, none of them should be disregarded.

अग्निस्तेजो महल्लोके गूढस्तिष्ठति दारुषु ।
न चोपयुङ्क्ते तद्दारु यावन्नोद्दीप्यते परैः ॥५८॥
स एव खलु दारुभ्यो यदा निर्मथ्य दीप्यते ।
तद्दारु च वनं चान्यन्निर्दहत्याशु तेजसा ॥५९॥

भावार्थ—संसार में अग्नि एक महान् तेज है, जो काष्ठों में छिपा रहता है। जब तक दूसरों के द्वारा मन्थन करके उसे प्रदीप्त नहीं किया जाता तब तक वह उस लकड़ी को नहीं जलाता। वही काष्ठस्थ अग्नि जब लकड़ियों को मथकर प्रदीप्त कर दिया जाता है, तब वह उस लकड़ी, वन तथा अन्य सबको अपने तेज से शीघ्र भस्म कर देता है।

Fire is a thing of great energy in this world. It is hidden in the wood and never consumes it, until it is ignited by churning it. The same hidden fire when brought out by churning, consumes by its energy not only the wood in which it was dormant but also the entire forest and all others.

एवमेव कुले जाताः पावकोपमतेजसः ।
क्षमावन्तो निराकाराः काष्ठेऽग्निरिव शेरते ॥६०॥

भावार्थ—श्रेष्ठ कुल में उत्पन्न, अग्नि के समान तेजस्वी पाण्डव क्षमाशील और अपने आकार (तेजस्वी भाव) को छिपाये हुए हैं। ये काष्ठ में अग्नि की

भाँति गुप्तरूप से (अपने गुण और प्रभाव को छिपाये हुए) स्थित हैं। इनके प्रदीप्त होने पर ये आपके कुल को भस्म कर देंगे।

Born in a high family, radiant like fire the *Pā. davās* are endued with forgiveness. They betray not outward symptoms of wrath and are quiet like the fire in the wood. On being ignited they will consume your whole family.

लताधर्मा: त्वं सपुत्रः शालाः पाण्डुसुता मताः।
न लता वर्धते जातु महाद्रुममनाश्रिता ॥६१॥

भावार्थ—हे राजन् ! तुम पुत्रोंसहित लता के स्वभाववाले हो और पाण्डव महान् शालवृक्ष के समान हैं। महावृक्ष का आश्रय लिये बिना लता कभी नहीं बढ़ सकती, इसी प्रकार पाण्डवों के आश्रय के बिना तुम भी नहीं बढ़ सकते।

O king ! you with your sons are possessed of the virtue of the creepers and the sons of *Pāndu* are regarded as the *Sāla* trees. Just as a creeper can never grow unless there is a large tree to twine round, similarly you can never be prosperous without the help of the *Pandavas.*

वनं राजंस्तव पुत्रोऽम्बिकेय
सिंहान् वने पाण्डवाँस्तात विद्धि।
सिंहैर्विहीनं हि वनं विनश्येत्
सिंहा विनश्येयुर्ऋते वनेन ॥६२॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि प्रजागरपर्वणि विदुरनीतिवाक्ये सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥

इति विदुरनीतौ (विदुरप्रजागरे) पञ्चमोऽध्यायः ॥

भावार्थ—हे अम्बिकानन्दन ! राजन् ! तुम्हारे पुत्र वन के समान हैं और पाण्डवों को वन में रहनेवाले सिंहों के सदृश समझो। हे तात ! सिंहों के बिना वन नष्ट हो जाते हैं और वन के बिना सिंह नष्ट हो जाते हैं।

O king! O son of *Ambika* ! your sons are like a forest. O sire! know that the *Pāndavās* are the lions of that forest. Without its lions the forest is doomed to destruction and the lions also are doomed to destruction without the forest wherein they live.

***विशेष**—यहाँ 'पुत्रः' जाति में एकवचन है।*

यह श्लोक इसी अध्याय के ४३ और ४४वें श्लोक का पुनरुक्त है, अतः व्यर्थ है।

***Note**—In the verse the word 'पुत्रः' is singular in the sense of common noun.*

The verse is a repition of 43-44 verse of this chapter and therefore, useless.

यह विदुरनीति (विदुरप्रजागर) का पाँचवाँ अध्याय सम्पूर्ण हुआ।

Here ends the fifth chapter of Viḍura-Niti.

अथ षष्ठोऽध्यायः—Sixth Chapter

विदुर उवाच

ऊर्ध्वं प्राणा ह्युत्क्रामन्ति यूनः स्थविर आयति ।
प्रत्युत्थानाभिवादाभ्यां पुनस्तान् प्रतिपद्यते ॥१॥

भावार्थ—विदुरजी कहते हैं—जब कोई माननीय वृद्ध व्यक्ति अतिथि के रूप में घर में आता है, उस समय युवा व्यक्ति के प्राण ऊपर को उठने लगते हैं वह घबरा-सा जाता है; (He becomes nervous), फिर उस वृद्ध व्यक्ति के सम्मान में उठकर खड़ा होने और चरणस्पर्श करने से प्राण पुनः स्वाभाविक अवस्था में आ जाते हैं ।

Vidura says— The breaths of a young man, when an aged and venerable person comes to his house as guest, sore aloft—they become nervous. By standing up in his honour and by touching his feet i.e. by paying his respects and saluting him, his breaths come to the normal state.

***विशेष**—पिछले अध्याय से विदुरजी का ही उपदेश चल रहा है; अतः नये अध्याय के आरम्भ में 'विदुर उवाच' लिखना असङ्गत है ।*

Note—In the last chapter the discourse of Vidura was going on, therefore, in the beginning of the new chapter it is inconsistant to write 'विदुर उवाच' ।

पीठं दत्वा साधवेऽभ्यागताय
आनीयापः परिनिर्णिज्य पादौ ।
सुखं पृष्ट्वा प्रतिवेद्यात्मसंस्थां
ततो दद्यादन्नमवेक्ष्य धीरः ॥२॥

भावार्थ—धीर पुरुष को चाहिए कि वह घर पर पधारे हुए सज्जन पुरुषों को आसन देकर बैठाए, फिर जल लाकर उनके पैर धुलाए, उनका कुशल-क्षेम

पूछकर अपना कुशल-क्षेम निवेदन करे, तत्पश्चात् आवश्यकता समझकर भोजन कराए।

He, who is self possessed, should first of all offer a seat for the venerable guest who has come to his house, then after fetching water, get washed his feet and making the usual enquiries of his welfare should then speak of his own affairs and taking everything into consideration, offer him food.

यस्योदकं मधुपर्कं च गां च
न मन्त्रवित्प्रतिगृह्णाति गेहे।
लोभाद् भयादथ कार्पण्यतो वा
तस्यानर्थं जीवितमाहुरार्याः ॥३॥

भावार्थ—वेदज्ञ ब्राह्मण जिसके घर में दाता के लोभ, भय अथवा कंजूसी के कारण जल, मधुपर्क और गौ को ग्रहण नहीं करता, आर्य लोग उसके जीने को व्यर्थ बताते हैं।

The noble man have said that, that man lives in vain in whose dwelling, due to avarice, fear and miserliness of the donor a *Brāhmaṇa*, conversant in the *Vedic* studies, does not accept water, honey, curd and kine.

चिकित्सक. शल्यकर्ताऽवकीर्णी
स्तेनः क्रूरो मद्यपो भ्रूणहा च।
सेनाजीवी श्रुतिविक्रायकश्च
भृशं प्रियोऽप्यतिथिर्नोदकार्हः ॥४॥

भावार्थ—चिकित्सक, चीर-फाड़ करनेवाला वैद्य अथवा मर्मान्तक पीड़ा देनेवाला, ब्रह्मचर्य से भ्रष्ट, चोर, दयाहीन, शराबी, गर्भघातक, सेनाजीवी और वेदविक्रेता—ये सब यद्यपि पैर धुलाने के योग्य भी नहीं हैं तथापि यदि ये अतिथि होकर आएँ तो विशेष प्रिय अर्थात् आसन, जल आदि द्वारा आदर-सत्कार के योग्य होते हैं।

A physician, a surgeon or a maker of arrows or causing poignant pain, one who has polluted his celibacy or who is wicked, a thief, one who is out of compassion or tyrant, one who drinks, one who

causes miscarriage, one who lives by serving in the army and one who sells the *Vedas* (teaches by taking fees), though all of them are undeserving of getting even their feet be washed, i.e. are all unfit for respect, but if they arrive as a guest they should be regarded as exceedingly dear, and should be honoured by offering of seat, water etc.

अविक्रेयं लवणं पक्कमन्नं
दधि क्षीरं मधु तैलं घृतं च ।
तिला मांसं फलमूलानि शाकं
रक्तं वासः सर्वगन्धा गुडाश्च ॥५॥

भावार्थ—नमक, रोटी आदि पका हुआ अन्न, दही, दूध, शहद, तेल, घी, तिल, मांस, फल, कन्दमूल, शाक, लाल कपड़ा, सब प्रकार की सुगन्ध और गुड़—ये सब वस्तुएँ नहीं बेचनी चाहिएँ।

Salt, cooked food, curd, milk, honey, oil, clarified butter, sesame, meat, fruits, roots, pot-herbs, dyed or red clothes, all kinds of perfumery and treacle—all these commodities should not be sold.

विशेष—*इन वस्तुओं की प्रचुरता के कारण इनका बेचना पाप माना जाता था। मांस बेचना महापाप है, क्योंकि इसके मूल में हिंसा है अथवा ब्राह्मण को इन सब वस्तुओं को कभी नहीं बेचना चाहिए।*

Note—*Due to abundancy of these commodities selling of these was thought to be a sinful act. The selling of meat is most sinful, because it cannot be obtained without injury or a Brāhmaṇa should never sell all these commodities.*

अरोषणो यः समलोष्टकाञ्चनः
प्रहीणशोको गतसन्धिविग्रहः ।
निन्दाप्रशंसोपरतः प्रियाप्रिये
त्यजन्नुदासीनवदेष भिक्षुकः ॥६॥

भावार्थ—जो क्रोध नहीं करता; जो मिट्टी के ढेले, पत्थर और सुवर्ण को एक-समान समझता है; जो शोक से रहित है; जो मेल और झगड़े—स्नेह और वैर से रहित है; जो निन्दा और प्रशंसा से ऊपर उठा हुआ है; जो प्रिय और अप्रिय को

त्यागनेवाला है—उदासीन के समान अत्यन्त पुण्यात्मा ऐसा व्यक्ति भिक्षु—संन्यासी है।

He who never gives way to anger, who thinks lump and gold alike, who is above grief, who is free from friendship and quarrels, who disregards both praise and blame, who stands aloof from both what is agreeable and disagreeable—who is perfectly withdrawn from the world is like a virtuous *Bhikshu*, a real *Yogi*, a true *Sannyāsi*.

नीवारमूलेङ्गुदशाकवृत्तिः
सुसंयतात्माग्निकार्येषु चोद्यः ।
वने वसन्नतिथिष्वप्रमत्तो
धुरन्धरः पुण्यकृदेष तापसः ॥७॥

भावार्थ—नीवार=जंगली चावल, मूल=गाजर-मूली सदृश जड़वाले पदार्थ, इंगुदीफल और शाक पर निर्वाह करनेवाला, जितेन्द्रिय, यज्ञकार्यों में तत्पर, अतिथि सेवा में सावधान, वन में रहनेवाला—ऐसा धुरन्धर तपस्वी महान् पुण्यात्मा है।

The virtuous ascetic *Yogi* who lives on wild rice, roots, *Inguda* (a kind of plant, the oil of which was used to burn lamp by mendicants) and pot-herbs, who has his soul under control, who is always eager in performing his *Agni-hoṭra*, who is regardful of guests, such a man dwelling in the woods, indeed, is the foremost among his brotherhood.

***विशेष**—पाँचवाँ अध्याय बुद्धि के माहात्म्य से समाप्त हुआ था। इस अध्याय का आठवाँ श्लोक उसी बुद्धि के महत्त्व को दर्शाता है। इस अध्याय के आरम्भ के सात श्लोक प्रसङ्ग को (पुनरुक्ति के कारण) छिन्न कर देते हैं, अतः ये प्रक्षिप्त हैं। हाँ, उपदेश उत्युत्तम हैं।*

***Note**—The fifth chapter ended with the importance of intelligence. The eighth verse of this chapter depicts the significance of the same intelligence. These seven verses of this chapter with which it begins, are out of context, therefore, these are interpolations. No doubt, all these verses are full of advice.*

अपकृत्य बुद्धिमतो दूरस्थोऽस्मीति नाश्वसेत् ।
दीर्घौ बुद्धिमतो बाहू याभ्यां हिंसति हिंसितः ॥८॥

भावार्थ—बुद्धिमान् मनुष्य का अपकार करके=उसे हानि पहुँचाकर 'मैं दूर देश में बैठा हूँ, वह मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकता' ऐसा विश्वास न करे, क्योंकि बुद्धिमान् की भुजाएँ बहुत लम्बी होती हैं, उसके बदला लेने के साधन अपरिमित होते हैं। सताया हुआ मनुष्य उन्हीं के द्वारा सतानेवाले को नष्ट कर देता है।

Having wronged or injured an intelligent person, a man should not gather assurance that, 'I am sitting at a far distant place, he can do no harm to me', because the arms of the intelligent person are very long—the means of his taking revenge are limitless. The oppressed person destroys the oppressor by them.

न विश्वसेदविश्वस्ते विश्वस्ते नातिविश्वसेत्।
विश्वासाद् भयमुत्पन्नं मूलान्यपि निकृन्तति ॥९॥

भावार्थ—अविश्वासी पर तो कभी विश्वास करे ही नहीं, परन्तु जो विश्वासी है, उसपर भी अत्यधिक विश्वास न करे, क्योंकि विश्वास से उत्पन्न हुआ भय मनुष्य को समूल नष्ट कर देता है।

One should never trust an untrust-worthy, nor put too much trust on a trust-worthy man, because the danger which arises from such a trust destroys a man totally. One having reposed trust on another cuts of one's very roots.

अनीर्षुर्गुप्तदारश्च संविभागी प्रियंवदः।
श्लक्ष्णो मधुरवाक् स्त्रीणां न चासां वशगो भवेत् ॥१०॥

भावार्थ—मनुष्य को चाहिए कि वह ईर्ष्यालु न हो, वह स्त्रियों की रक्षा करनेवाला, ऐश्वर्य का बाँटकर भोग करनेवाला, प्रियभाषी, सरल स्वभाववाला, स्त्रियों के प्रति मधुरभाषी हो, परन्तु उनके वशीभूत न हो जाए।

A man should not be envious. He should be protector of women, he should enjoy the wealth duly after sharing it with others, he should be pleasant in speech, he should be sweet-tongued and pleasant in his address as regards the women, but should never be their slave.

पूजनीया महाभागाः पुण्याश्च गृहदीप्तयः।
स्त्रियः श्रियो गृहस्योक्तास्तस्माद् रक्ष्या विशेषतः ॥११॥

भावार्थ—स्त्रियाँ आदर के योग्य, अत्यन्त सौभाग्यशालिनी, पवित्र, घर की

शोभा=रौनक़ और लक्ष्मीरूप गृह की समृद्धि कही गयी हैं, अतः इनकी विशेष रूप से रक्षा करनी चाहिए।

The women are worthy of worship, blessed and virtuous, they are the ornaments of their homes and are really said the embodiments of domestic prosperity. They should, therefore, be specially protected.

पितुरन्तःपुरं दद्यान्मातुर्दद्यान्महानसम् ।
गोषु चात्मसमं दद्यात्स्वयमेव कृषिं व्रजेत् ।
भृत्यैर्वाणिज्यचारं च पुत्रैः सेवेत च द्विजान् ॥१२॥

भावार्थ—मनुष्य को चाहिए कि अन्तःपुर की रक्षा का भार पिता को सौंप दे, रसोईघर का प्रबन्ध माता के अधीन रक्खे, गौओं की देखभाल आत्मा के समान प्रिय व्यक्ति से कराए, कृषिकार्य को स्वयं देखे, वाणिज्य-व्यवहार सेवकों द्वारा कराए और पुत्रों से ब्राह्मणों की सेवा कराए।

One should entrust the looking over of his inner apartments on his father, of the kitchen on his mother, of the kine on somebody, whom he looks upon his ownself, but as regards agriculture one should look over it himself. One should entrust the looking over of trade on the servants and *Brāhmaṇās* should be entertained by his sons.

अद्भ्योऽग्निर्ब्रह्मतः क्षत्रमश्मनो लोहमुत्थितम् ।
तेषां सर्वत्रगं तेजः स्वासु योनिषु शाम्यति ॥१३॥

भावार्थ—जलों से अग्नि, ब्राह्मण से क्षत्रिय और पाषाण से लोहे आदि धातुओ की उत्पत्ति होती है। इनका सर्वत्र फैला हुआ तेज अपने मूलकारणों में शान्त हो जाता है, जैसे अग्नि जल से शान्त हो जाती है, क्षत्रिय ब्रह्मतेज के समक्ष निस्तेज हो जाता है और लोहा आदि धातुएँ पत्थर पर मारने से कुण्ठित हो जाती हैं।

Fire has its origin in water, *Kshatriyas* in *Brāhmaṇās* and iron in stone. The energy of these can affect all things but is neutralised as soon as these things come in contact with their progenitors. Just as fire is extinguished with water, the *Kshatriya* is out of countenance before a *Brāhmaṇa* and metals like iron etc. become blunt by striking against stone.

विशेष—*उपनिषदों में 'अग्नेरापः' (तैत्तिरीयो० ब्रह्म० २/१) अग्नि से जलों की उत्पत्ति बताई है। ब्राह्मण से क्षत्रिय उत्पन्न नहीं होता। ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि स भी मनुष्य ब्रह्म के द्वारा उत्पन्न होते हैं। पाषाण से लोहे आदि की उत्पत्ति और पाषाण द्वारा उनका शमन भी अटपटा-सा लगता है। हमारे विचार में यह श्लोक चिन्त्य एवं प्रक्षिप्त है।*

Note—*In the Upniṣadās it is said 'अग्नेरापः' (Tait. Brahma. 2/8), i.e. fire has its origin in water. But a Kshatriya is not born out of a Brahmana. Brahmana, Kshatriya etc. all take their birth by Brahma (the Creator). The origin of iron from stone and its extinction by stone is also absurd. In our opinion this verse is frivolous and an interpolation.*

नित्यं सन्तः कुले जाताः पावकोपमतेजसः।
क्षमावन्तो निराकाराः काष्ठेऽग्निरिव शेरते ॥१४॥

भावार्थ—श्रेष्ठकुल में उत्पन्न व्यक्ति अग्नि के समान तेजस्वी होते हैं। क्षमाशील और विकारशून्य सन्तजन काष्ठ में अग्नि की भाँति सदा निश्चेष्ट पड़े रहते हैं, पता नहीं कब भड़क उठें।

The persons born in a high family are like a blazing fire. Forgiving and unchangeable from their natural state, the noble men just like the fire hidden in the wood are always inert—they do not betray any outward symptoms, it is not known when they may flare up.

विशेष—*यह श्लोक किञ्चित् पाठभेद से पिछले अध्याय में आ चुका है। द्रष्टव्य श्लोक-संख्या ६०।*

Note—*This verse with a minor variation has occured in the last chapter. See verse 60.*

यस्य मन्त्रं न जानन्ति बाह्याश्चाभ्यन्तराश्च ये।
स राजा सर्वतश्चक्षुश्चिरमैश्वर्यमश्नुते ॥१५॥

भावार्थ—जिसकी मन्त्रणा=गुप्तविचार को उसके शत्रु और मित्र कोई भी नहीं जानता, ऐसा सब ओर से सावधान राजा चिरकाल तक राज्य-लक्ष्मी का उपभोग करता है।

The king, whose counsels cannot be known either by outsider foes or insider friends, but who knows the counsels of others through his spies or who is alert from all the sides and has a watchful eye everywhere, enjoys his kingdom and prosperity for a long time.

करिष्यन्न प्रभाषेत कृतान्येव तु दर्शयेत् ।
धर्मकामार्थकार्याणि तथा मन्त्रो न भिद्यते ॥१६॥

भावार्थ—राजा को चाहिए कि धर्म, काम और अर्थ-सम्बन्धी कार्यों के विषय में करने से पूर्व कुछ न बोले, किये हुए कार्यों को ही प्रकट करे। ऐसा करने से उसकी मन्त्रणा दूसरें पर प्रकट नहीं होती।

A king should never speak anything in respect of *Dharma, Artha* and *Kāma*—virtue, wealth and desire, what he intends to do. When the acts are accomplished then only people should know about it. By doing so the counsels are not disclosed on others.

गिरिपृष्ठमुपारुह्य प्रासादं वा रहोगतः ।
अरण्ये निःशलाके वा तत्र मन्त्रो विधीयते ॥१७॥

भावार्थ—पर्वत की चोटी पर चढ़कर अथवा राजमहल में एकान्त स्थान में जाकर अथवा तृण आदि से रहित निर्जन वन में बैठकर मन्त्रणा=विचार-विमर्श करना चाहिए।

Ascending the mountain top or on the terrace of a palace or proceeding to a wilderness devoid of trees and plants, the king should, in secrecy, mature his counsels.

नासुहृत् परमं मन्त्रं भारतार्हति वेदितुम् ।
अपण्डितो वापि सुहृत् पण्डितो वाप्यनात्मवान् ॥१८॥
नापरीक्ष्य महीपालः कुर्यात्सचिवमात्मनः ।
अमात्ये ह्यर्थलिप्सा च मन्त्ररक्षणमेव च ॥१९॥

भावार्थ—हे भारत ! जो मित्र न हो, मित्र होने पर भी पण्डित न हो, पण्डित होने पर भी जो जितेन्द्रिय न हो, वह गुप्त मन्त्रणा को जानने का अधिकारी नहीं है। इसलिए राजा को चाहिए कि बिना परीक्षा किये किसी को अपना मन्त्री न बनाए, क्योंकि नये राज्य आदि की प्राप्ति की इच्छा और गुप्त मन्त्रणा की रक्षा

का भार मन्त्री पर ही होता है।

O *Bharata* ! Neither one who is not a friend, nor a friend who is without learning, nor a learned friend who has no control over his senses, deserves to know the secret state-affairs. Therefore, a king should never make one his minister without examining him well, because the desire of acquiring new states and keeping the secrecy of counsels both depend upon his ministers

कृतानि सर्वकार्याणि यस्य पारिषदा विदुः ।
धर्मे चार्थे च कामे च स राजा राजसत्तमः ।
गूढमन्त्रस्य नृपतेस्तस्य सिद्धिरसंशयम् ॥२०॥

भावार्थ—जिसके धर्म, अर्थ और काम-सम्बन्धी सभी कार्यों के पूर्ण हो जाने पर ही सभासद्गण उन्हें जान पाते हैं, वह राजा समस्त राजाओं में श्रेष्ठ होता है। अपने मन्त्र को सुरक्षित रखनेवाले उस राजा को निःसन्देह सिद्धि प्राप्त होती है।

That king is the foremost of all the rulers whose cabinet ministers too come to know of his acts in respect of virtue, wealth and desire, only when they are accomplished. Such a king whose counsels are kept secret, without doubt obtains success.

अप्रशस्तानि कार्याणि यो मोहादनुतिष्ठति ।
स तेषां विपरिभ्रंशाद् भ्रंश्यते जीवितादपि ॥२१॥
कर्मणां तु प्रशस्तानामनुष्ठानं सुखावहम् ।
तेषामेवाननुष्ठानं पश्चात्तापकरं मतम् ॥२२॥

भावार्थ—जो मनुष्य मोहवश निन्दित कर्मों को करता है, वह उन कार्यों का विपरीत परिणाम होने से अपने जीवन से भी हाथ धो बैठता है। शास्त्र-अनुमोदित उत्तम कर्मों का अनुष्ठान करना सुखदायक होता है, उनका न करना पश्चात्ताप का कारण बन जाता है।

The men who from facination commits acts which are censurable, loses his very life in consequence of results which are contrary to his expectation. The doing of good acts which are prescribed in the *Śāstrās* is always pleasing. Omission to do such acts leads to repentance.

अनधीत्य यथा वेदान्न विप्रः श्राद्धमर्हति ।
एवमश्रुतषाड्गुण्यो न मन्त्रं श्रोतुमर्हति ॥२३॥

भावार्थ—जिस प्रकार वेदों को न पढ़ा हुआ ब्राह्मण श्राद्ध (दान, दक्षिणा आदि श्रद्धायुक्त कर्म) का अधिकारी नहीं होता, इसी प्रकार राजनीति के षड्गुणों से शून्य व्यक्ति को गुप्त मन्त्रणा के सुनने का अधिकार नहीं है।

Just as a *Brāhmaṇa* without having studied the *Vedas* is not authorised to receive *Śrāddha* (donation, honorarium etc., paid to a priest, the acts which are accomplished with devotion), in the same way a man who is devoid of the six means for protecting a kingdom, does not deserves to take part in political delibrations.

विशेष—*पूना-संस्करण में यह श्लोक नहीं है।*

श्राद्ध की मूलभावना है—श्रद्धा से किया गया कर्म। यहाँ पौराणिक श्राद्ध की गन्ध भी नहीं है।

राजनीति में षड्गुण ये हैं—(१) सन्धि=शत्रु के साथ मेल, (२) विग्रह=शत्रु अथवा अधार्मिक राजा से सम्बन्ध-विच्छेद कर लेना, (३) यान=शत्रु पर चढ़ाई करना, (४) आसन=चुपचाप बैठे रहना, (५) द्वैधीभाव=ऊपर से मित्रता और अन्दर से शत्रुता—इस प्रकार दो प्रकार के भाव रखना और (६) समाश्रय=अपने से श्रेष्ठ राजा की शरण लेना।

Note—*This verse does not occur in Poona edition.*

The real purport of Sraddha is the act which is accomplished with faith and devotion. Here there is not the trace even of mythological Sraddha.

The six means for protecting a kingdom are—1. ***Sandhi***—*making peace with an enemy. 2.* ***Vigraha***—*declaring war against a wicked enemy. 3.* ***Yāna***—*marching towards an enemy. 4.* ***Āsana***—*remaining passive. 5.* ***Dvaidhibhāva***—*friendship from out, but enemity from within—keeping two kinds of attitude. 6.* ***Samāsraya***—*to seek the protection of a powerful king.*

स्थानवृद्धिक्षयज्ञस्य षाड्गुण्यविदितात्मनः ।
अनवज्ञातशीलस्य स्वाधीना पृथिवी नृप ॥२४॥

भावार्थ—हे राजन्! जो अपनी स्थिति, वृद्धि और ह्रास को जानता है, जो सन्धि-विग्रह आदि छह गुणों के स्वरूप को यथावत् पहचानता है, जिसके गुप्त

विचारों को दूसरे नहीं जान पाते अथवा धर्माचरण के कारण जिसके शील की सभी प्रशंसा करते हैं, यह पृथिवी ऐसे ही राजा के अधीन रहती है।

O king ! he, who has an eye upon his situation, increase and decrease—rise and fall, he who is conversant with *Sandhi, Vigraha* etc. the six means of protecting the state, whose thoughts are not knowable by others and whose virtuous conduct is applauded by all, brings the whole earth under his control.

अमोघक्रोधहर्षस्य स्वयं कृत्यान्ववेक्षिणः।
आत्मप्रत्ययकोशस्य वसुदैव वसुन्धरा ॥२५॥

भावार्थ—जिस राजा का क्रोध और हर्ष व्यर्थ नहीं जाता अर्थात् जो निग्रह और अनुग्रह करने में समर्थ है, जो कार्यों को करके स्वयं उनकी जाँच-पड़ताल करता है, जिसे अपने कोश का भली-भाँति ज्ञान है, पृथिवी ऐसे राजा के लिए धन देनेवाली होती है।

He, whose anger and joy are productive of consequences or who is capable of giving punishment or showing mercy, he, who accomplishing the acts, investigates them personally or who looks personally what should be done, he who has a full knowledge of his treasury, the earth bestows wealth and prosperity on such a king.

नाममात्रेण तुष्येत क्षत्रेण च महीपतिः।
भृत्येभ्यो विसृजेदर्थान्नैकः सर्वहरो भवेत् ॥२६॥

भावार्थ—राजा को चाहिए कि वह राजा कहलवाने और राजछत्र धारणमात्र से ही सन्तुष्ट रहे, राज्य के ऐश्वर्यों को राजकर्मचारियों और प्रजा के लिए छोड़ दे, उनमें बाँट दे, अकेला सब-कुछ हरण करनेवाला न बने। एकाकी ऐश्वर्य भोगनेवाले राजा के भृत्य उसके शत्रु बन जाते हैं और उसे नष्ट कर डालते हैं।

The king should be content with the name he wins and the umbrella which is held over his head. He should share the wealth of the kingdom among his subjects and employees of the state who serve him. He alone should not appropriate everything to himself alone. The employees become the enemy of that king and ruin him who enjoys the wealth of the kingdom alone.

ब्राह्मणं ब्राह्मणो वेद भर्ता वेद स्त्रियं यथा।
अमात्यं नृपतिर्वेद राजा राजानमेव च ॥२७॥

भावार्थ—जैसे पति अपनी पत्नी के यथार्थरूप को पहचानता है, वैसे ब्राह्मण—ज्ञानी ब्राह्मण को, राजा मन्त्री को और राजा राजा को पहचानता है। जिसका जिसके साथ पाला पड़ता है, वही उसे यथार्थरूप से जानता है।

Just as a husband knows his wife fully well, similarly a *Brāhmaṇa*—a learned man knows a *Brāhmaṇa*, the king knows the minister and the monarch knows the monarch. One who deals with a person, only he knows him in reality.

न शत्रुर्वशमापन्नो मोक्तव्यो वध्यतां गतः ।
न्यग्भूत्वा पर्युपासीत वध्यं हन्याद् बले सति ।
अहताद्धि भयं तस्माज्जायते नचिरादिव ॥२८॥

भावार्थ—वश में आये हुए वध करने योग्य शत्रु को कभी नहीं छोड़ना चाहिए। यदि स्वयं निर्बल हो तो विनीतभाव से शत्रु की सेवा करे और प्रबल होते ही शत्रु को नष्ट कर दे। वध के योग्य शत्रु को न मारा जाए तो उससे शीघ्र ही भय उपस्थित होगा, अर्थात् वह बदला लेगा।

An enemy who deserves death, when brought under control should never be set free. If one is himself weak he should pay court to one's foe who is stronger, and as soon as one commands sufficient strength one should kill his enemy, because, if an enemy who deserves death, is not killed, dangers soon arise from him i.e. he will take revenge.

दैवतेषु प्रयत्नेन राजसु ब्राह्मणेषु च ।
नियन्तव्यः सदा क्रोधो वृद्धबालातुरेषु च ॥२९॥

भावार्थ—पूजनीय विद्वानों, राजाओं, ब्राह्मणों, बूढ़ों, बालकों और रोगियों पर होनेवाले क्रोध को सदा प्रयत्नपूर्वक रोकना चाहिए।

One should, with an effort, control his wrath against venerable scholars, kings, *Brāhmaṇās*, old men, children and those who are distressed, sick and helpless.

निरर्थं कलहं प्राज्ञो वर्जयेन्मूढसेवितम् ।
कीर्तिं च लभते लोके न चानर्थेन युज्यते ॥३०॥

भावार्थ—बुद्धिमान् मनुष्य को चाहिए कि वह मूर्खों द्वारा सेवित व्यर्थ के

लड़ाई-झगड़े को छोड़ दे। ऐसा करने से उसे संसार में यश मिलता है और वह विपत्तियों में नहीं फँसता।

He who is wise should avoid useless quarrels in which fools only engage in. By doing so one wins great fame in this world and avoids misery and unhappiness.

प्रसादो निष्फलो यस्य क्रोधश्चापि निरर्थकः।
न तं भर्तारमिच्छन्ति षण्ढं पतिमिव स्त्रियः ॥३१॥

भावार्थ—जिस राजा के प्रसन्न होने का कोई फल नहीं और जिसका क्रोध भी व्यर्थ होता है, ऐसे राजा को प्रजा उसी प्रकार नहीं चाहती, जैसे स्त्रियाँ नपुंसक पति को नहीं चाहतीं।

People never desire him to be a king, whose grace is fruitless and whose wrath goes for nothing, just as women never desire him for a husband who is impotant.

न बुद्धिर्धनलाभाय न जाड्यमसमृद्धये।
लोकपर्यायवृत्तान्तं प्राज्ञो जानाति नेतरः ॥३२॥

भावार्थ—न बुद्धि धन-प्राप्ति का कारण है और न मूर्खता दरिद्रता की हेतु है। सैकड़ों बुद्धिमान् दरिद्र और सैकड़ों मूर्ख धनवान् देखे जाते हैं। हाँ, बुद्धिमान् संसार-चक्र के वृत्तान्त को जान पाता है, मूर्ख नहीं।

Intelligence is not the cause for the acquisition of wealth, nor foolishness is the cause of adversity. Hundreds of intelligent are seen poor, while hundreds of fools are seen rich. One thing is sure that the cause of the diversities in the world is known only to the intelligent and not to the foolish.

विद्याशीलवयोवृद्धान् बुद्धिवृद्धाँश्च भारत।
धनाभिजातवृद्धाँश्च नित्यं मूढोऽवमन्यते ॥३३॥

भावार्थ—हे भारत ! मूर्ख मनुष्य विद्या, शील, आयु, बुद्धि, धन और कुल से श्रेष्ठ माननीय पुरुषों का सदा अपमान करता है।

O *Bhārata* ! the fool always disregards those who are elderly in years, and eminent in conduct and knowledge, in intelligence, wealth, and lineage.

अनार्यवृत्तमप्राज्ञमसूयकमधार्मिकम् ।
अनर्थाः क्षिप्रमायान्ति वाग्दुष्टं क्रोधनं तथा ॥३४॥

भावार्थ—दुश्चरित्र, मूर्ख, निन्दक, अधार्मिक, कटु और कठोर वचन बोलनेवाले तथा क्रोधी मनुष्यों को आपत्तियाँ शीघ्र ही घेर लेती हैं।

Calamities soon come upon them who are of wicked disposition, devoid of wisdom, backbiters, irreligious, foul tongued and wrathful.

अविसंवादनं दानं समयस्याव्यतिक्रमः ।
आवर्तयन्ति भूतानि सम्यक्प्रणिहिता च वाक् ॥३५॥

भावार्थ—किसी के साथ धोखा न करना, दान देना, समय अथवा प्रतिज्ञा का उल्लंघन न करना और मधुर बोलना—ये सब सम्पूर्ण प्राणियों को, अपने शत्रु और विरोधियों को भी अपना बना लेते हैं।

Absence of deceitfulness, giving alms, non-breaking of vow or punctuality of time and sweet speech—all these qualities make all creatures his own, even those who are enemies and opponents.

अविसंवादको दक्षः कृतज्ञो मतिमानृजुः ।
अतिसंक्षीणकोशोऽपि लभते परिवारणम् ॥३६॥

भावार्थ—किसी को धोखा न देनेवाला, सदा सावधान, कृतज्ञ, बुद्धिमान् और कोमल स्वभाववाला राजा अत्यन्त क्षीणकोशवाला होने पर भी भृत्य, मित्र और सहायकों को प्राप्त कर लेता है।

The king, who is without deceitfulness, who is always alert, grateful, intelligent and tender hearted, even if his treasury be empty, obtains friends, counsellors and servants

धृतिः शमो दमः शौचं कारुण्यं वागनिष्ठुरा ।
मित्राणां चानभिद्रोहः सप्तैताः समिधः श्रियः ॥३७॥

भावार्थ—धैर्य, मनोनिग्रह, इन्द्रियनिग्रह, व्यवहार में पवित्रता, दयालुता, मधुर वाणी और मित्रों से द्रोह न करना—ये सात गुण लक्ष्मी=धन-सम्पत्ति को बढ़ानेवाले हैं।

Perseverance, tranquility of mind, self control, purity in conduct, kindness, sweetness of speech and non-hostility towards friends—

these seven qualities are regarded as the fuel of prosperity's flame.

असंविभागी दुष्टात्मा कृतघ्नो निरपत्रपः ।
तादृङ्नराधिपो लोके वर्जनीयो नराधिप ॥३८॥

भावार्थ—हे राजन् ! अपने भृत्य और प्रजावर्ग को बिना बाँटे खानेवाला, दुष्ट स्वभाववाला, कृतघ्न और निर्लज्ज राजा इस संसार में त्याग देने योग्य है।

O king ! In this world that wretched king, who without giving to his servants and subjects their due share, enjoys alone, who is of wicked nature, who is ungrateful and shameless, should be renounced.

न स रात्रौ सुखं शेते ससर्प इव वेश्मनि ।
यः कोपयति निर्दोषं सदोषोऽभ्यन्तरं जनम् ॥३९॥

भावार्थ—जैसे सर्पयुक्त घर में मनुष्य चैन की नींद नहीं सो सकता, इसी प्रकार जो मनुष्य स्वयं दोषयुक्त होकर भी अपने निर्दोष अन्तरङ्ग मित्र को कुपित करता है, वह रात्रि में सुखपूर्वक नहीं सो सकता ।

Just as a person cannot sleep with mental ease in a house with a snake, similarly, the man who being himself guilty, enrages his innocent and intimate friend, cannot sleep peacefully at night.

येषु दुष्टेषु दोषः स्याद् योगक्षेमस्य भारत ।
सदा प्रसादनं तेषां देवतानामिवाचरेत् ॥४०॥

भावार्थ—हे भारत ! जिनके बिगड़ जाने से जीवन-निर्वाह की हानि हो, उन्हें सदा देवों की भाँति प्रसन्न करने का प्रयत्न करना चाहिए ।

O *Bhārata* ! they, who upon being angry endanger one's possessions and means of acquisition—who make one's life miserable, should always be propitiated like the very gods.

येऽर्थाः स्त्रीषु समायुक्ताः प्रमत्तपतितेषु च ।
ये चानार्ये समासक्ताः सर्वे ते संशयं गताः ॥४१॥

भावार्थ—जो कार्य अथवा धनादि पदार्थ स्त्रियों, प्रमादियों और पतितों के भरोसे छोड़ दिये जाते हैं और जो कार्य अनार्यों के हाथ में सौंप दिये जाते

हैं, वे सब सन्दिग्ध हो जाते हैं, अर्थात् उनका पूर्ण होना कठिन हो जाता है।

Those objects (or wealth) which depend upon women, careless persons, men who have fallen away from the studies of their caste, and which are entrusted in the hands of wicked persons—all become doubtful of success i.e. the accomplishment of those objects becomes difficult.

यत्र स्त्री यत्र कितवो बालो यत्रानुशासिता ।
मज्जन्ति तेऽवशा राजन् नद्यामश्मप्लवा इव ॥४२॥

भावार्थ—हे राजन् ! जिस परिवार, समाज वा राष्ट्र में स्त्री, जुआरी और मूर्ख शासन करनेवाला होता है, वहाँ के सब लोग विवश होकर ऐसे डूब जाते हैं, जैसे नदी में पत्थर की नौकाएँ डूब जाती हैं।

O king ! all the men, belonging to the family, or the society or the nation who have a woman, a gambler and a child or a fool as their leader, guide or king, sink helplessly like a raft made of stone.

प्रयोजनेषु ये सक्ता न विशेषेषु भारत ।
तानहं पण्डितान्मन्ये विशेषा हि प्रसंगिनः ॥४३॥

भावार्थ—हे भारत ! जो स्वार्थों और संघर्षों में आसक्त नहीं हैं, उन्हें मैं पण्डित मानता हूँ, क्योंकि स्वार्थ और संघर्ष फँसावट के कारण हैं।

O *Bhārata* ! Who is not attached to self interests and struggles of life, I think him as a learned man, because self-interest and struggles of life are the cause of attachment.

यं प्रशंसन्ति कितवा यं प्रशंसन्ति चारणाः ।
यं प्रशंसन्ति बन्धक्यो न स जीवति मानवः ॥४४॥

भावार्थ—जुआरी जिसकी प्रशंसा करते हैं, भाट जिसका यश गाते हैं और वेश्याएँ जिसकी बड़ाई करती हैं, वह मनुष्य जीता हुआ भी मुर्दे के समान है।

The man who is highly praised by gamblers, who is praised by bards and who is glorified by prostitutes, is more dead than alive.

हित्वा तान् परमेष्वासान् पाण्डवानमितौजसः ।
आहितं भारतैश्वर्यं त्वया दुर्योधने महत् ॥४५॥

तं द्रक्ष्यसि परिभ्रष्टं तस्मात् त्वमचिरादिव ।
ऐश्वर्यमदसम्मूढं बलिं लोकत्रयादिव ॥४६॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि विदुरनीतिवाक्ये अष्टात्रिंशोऽध्यायः ॥
इति विदुरनीतौ (विदुरप्रजागरे) षष्ठोऽध्यायः ॥

भावार्थ—हे भारत ! तुमने महाधनुर्धर, अत्यन्त पराक्रमी पाण्डवों को त्यागकर जिस दुर्योधन के कन्धों पर राज्यभार डाला है, तुम शीघ्र ही ऐश्वर्य के मद में चूर उस दुर्योधन को ऐश्वर्य से भ्रष्ट हुए ऐसे देखोगे, जैसे लोगों ने तीनों लोकों से भ्रष्ट हुए बलि को देखा था ।

O *Bharata* ! forsaking mighty bow-men and the highly valorous *Pandavas,* you have entrusted upon *Duryodhana*, the responsibility of a mighty empire. You will soon see *Duryodhana* who is intoxicated with prosperity, falling off from that, just as *Bali* was seen by people fallen off from the three worlds.

***विशेष**—अन्तिम श्लोक में वामन-बलि की कथा का संकेत होने से यह श्लोक निश्चय ही प्रक्षिप्त है और बहुत पीछे जोड़ा गया है ।*

***Note**—In the last verse there is a hint of the story of Vamana and Bali, therefore, this verse is an interpolation which has been added afterwards.*

यह विदुरनीति (विदुरप्रजागर) का छठा अध्याय सम्पूर्ण हुआ ।

Here ends the sixth chapter of Viḍura-Niti.

अथ सप्तमोऽध्यायः—Seventh Chapter

धृतराष्ट्र उवाच

अनीश्वरोऽयं पुरुषो भवाभवे
सूत्रप्रोता दारुमयीव योषा ।
धात्रा तु दिष्टस्य वशे कृतोऽयं
तस्माद् वद त्वं श्रवणे धृतोऽहम् ॥१॥

भावार्थ—धृतराष्ट्र बोले—यह मनुष्य ऐश्वर्य और दरिद्रता की प्राप्ति में असमर्थ है, ठीक वैसे ही जैसे धागे में पिरोई हुई कठपुतली परवश होती है। विधाता ने मनुष्य को भाग्य के अधीन रखा है। मैं भी परवश हूँ, अतः तुम कहो, मैं सुनने को तैयार हूँ।

Dhṛtrāṣtra said—Man is incompetent in acquiring either his prosperity or adversity. He is like a puppet dancing by a string. Indeed, the Creater has made man subject to Destiny. I am also subservient. Go on telling me, I am attentive to what you say.

विदुर उवाच

अप्राप्तकालं वचनं बृहस्पतिरपि ब्रुवन् ।
लभते बुद्ध्यवज्ञानमवमानं च भारत ॥२॥

भावार्थ—विदुरजी बोले—हे भरतकुलभूषण ! अवसर के प्रतिकूल वचन कहनेवाला बृहस्पति के समान ज्ञानी व मेधावी होने पर भी बुद्धिहीनता की पदवी और अपमान को प्राप्त होता है।

Viḍura said—O the best among the *Bharata* race ! by speaking words contrary to the occasion a person most learned like *Brhaspati* (the preceptor of gods), too incurs reproach and the charge of ignorance.

प्रियो भवति दानेन प्रियवादेन चापरः ।
मन्त्रमूलबलेनान्यो यः प्रियः प्रिय एव सः ॥३॥

भावार्थ—कोई दान देने से प्रिय होता है, कोई मधुरभाषण के कारण लोकप्रिय हो जाता है, कोई मन्त्रबल (उत्तम विचार देने) से प्रिय हो जाता है, परन्तु जो स्वभाव से प्रिय है, वह तो प्रिय है ही।

One becomes dear by charity, another by sweet words, a third by uttering good thoughts. He, however, who is sweet by nature always remains so.

द्वेष्यो न साधुर्भवति न मेधावी न पण्डितः।
प्रिये शुभानि कार्याणि द्वेष्ये पापानि चैव ह ॥४॥

भावार्थ—मनुष्य जिसके साथ द्वेष करता है, वह श्रेष्ठ=भला नहीं लगता। वह न बुद्धिमान् लगता है और न पण्डित प्रतीत होता है। ठीक है प्रिय में अशुभ कार्य भी शुभ और द्वेष्य में पुण्यकार्य भी पाप ही जँचते हैं।

The man who is hated by someone is never regarded as a noble man. He seems to be neither intelligent nor learned. One attributes everything good to him one loves and everything evil to him one hates.

उक्तं मया जातमात्रेऽपि राजन्
दुर्योधनं त्यज पुत्रं त्वमेकम्।
तस्य त्यागात्पुत्रशतस्य वृद्धि-
रस्यात्यागात्पुत्रशतस्य नाशः ॥५॥

भावार्थ—हे राजन्! मैंने दुर्योधन के उत्पन्न होते ही कहा था कि तुम इसे त्याग दो। इसके त्याग देने से तुम्हारे सौ पुत्रों का कल्याण होगा और इसके न त्यागने से तुम्हारे सौ पुत्रों का नाश हो जाएगा, परन्तु तुमने मेरी बात नहीं मानी, यह उसी का फल है।

O king! as soon as *Ḍuryodhana* was born, I had told you to abandon this one son, for by abandoning him you will secure the prosperity of your hundred sons, and by keeping him, destruction would overtake your hundred sons. But you did not agree to my proposal, this is the reward of the same.

न वृद्धिर्बहु मन्तव्या या वृद्धिः क्षयमावहेत्।
क्षयोऽपि बहु मन्तव्यो यः क्षयो वृद्धिमावहेत् ॥६॥

भावार्थ—उस वृद्धि को बड़ा नहीं मानना चाहिए जो अन्त में नाश का कारण हो। इसके विपरीत उस क्षय को भी उत्तम समझना चाहिए जो क्षय वृद्धि का कारण हो।

That gain should never be regarded as a great achievement which leads one to loss. On the other hand, the loss which will bring on gain should be regarded highly.

न स क्षयो महाराज यः क्षयो वृद्धिमावहेत्।
क्षयः स त्विह मन्तव्यो यं लब्ध्वा बहु नाशयेत् ॥७॥

भावार्थ—हे महाराज ! वह हानि हानि नहीं कहलाती, जो वृद्धि का कारण होती है। इस संसार में क्षय तो उसे मानना चाहिए, जिससे बहुत का नाश हो जाए।

O king ! that loss is no loss which brings on gain. That, however, in this world should be reckoned as loss which is certain to bring about greater losses still.

समृद्धा गुणतः केचिद् भवन्ति धनतोऽपरे।
धनवृद्धान् गुणैर्हीनान् धृतराष्ट्र विवर्जय ॥८॥

भावार्थ—संसार में कुछ लोग गुणों से समृद्ध होते हैं और कुछ धन से। हे धृतराष्ट्र ! इनमें से धन से समृद्ध, परन्तु गुणों से हीन व्यक्तियों को त्याग देना चाहिए।

O *Dhṛtrāṣtra* ! In this world some become eminent by possessing good qualities, others become so by having wealth. Abandon them those who are eminent in wealth but devoid of good qualities.

धृतराष्ट्र उवाच

सर्वं त्वमायतीयुक्तं भाषसे प्राज्ञसम्मतम्।
न चोत्सहे सुतं त्यक्तुं यतो धर्मस्ततो जयः ॥९॥

भावार्थ—धृतराष्ट्र बोला—हे विदुर ! यद्यपि तुम भविष्य के लिए हितकारी और बुद्धिमानों से मानने योग्य बात कहते हो कि जहाँ धर्म होता है वहाँ ही विजय होती है, फिर भी मैं अपने पुत्र को त्यागने का साहस नहीं कर सकता।

Dhṛtrāṣtra said—'O *Viḍura* ! all what you say is approved by

the wise and is for my future good, that where there is righteousness there is victory. Even then, I dare not, abandon my son.

विदुर उवाच

अतीवगुणसम्पन्नो न जातु विनयान्वितः ।
सुसूक्ष्ममपि भूतानामुपमर्दमुपेक्षते ॥१०॥

भावार्थ—विदुरजी बोले—जो मनुष्य अनेक गुणों से सम्पन्न और विनय से युक्त है, वह प्राणियों की तनिक-सी पीड़ा की भी उपेक्षा नहीं कर सकता ।

Vidura said—He, who is graced with many virtues and is endued with humility, can never be indifferent to even the slightest sufferings of the living creatures.

परापवादनिरताः परदुःखोदयेषु च ।
परस्परविरोधे च यतन्ते सततोत्थिताः ॥११॥
सदोषं दर्शनं येषां संवासे सुमहद् भयम् ।
अर्थादाने महान् दोषः प्रदाने च महद् भयम् ॥१२॥
ये वै भेदनशीलास्तु सकामा निस्त्रपाः शठाः ।
ये पापा इति विख्याताः संवासे परिगर्हिताः ।
युक्ताश्चान्यैर्महादोषैर्ये नरास्तान् विवर्जयेत् ॥१३॥

भावार्थ—जो मनुष्य दूसरों की निन्दा में तत्पर, दूसरों के लिए दुःख उत्पन्न करने और परस्पर के विरोध में सदा प्रयत्नशील, जिनका दर्शन भी दोषयुक्त, जिनके साथ रहने में महान् भय हो, जिनसे धन लेने में बड़ा दोष और देने में बड़ा भय हो, जो परस्पर फूट डालनेवाले, स्वार्थी, निर्लज्ज, धूर्त और पापी के रूप में प्रसिद्ध हैं, जो समीप रहने योग्य नहीं हैं तथा जो मद्यपान आदि अन्य महादोषों से युक्त हैं, ऐसे पुरुषों को तत्काल त्याग देना चाहिए ।

They who are ever ready in speaking ill of others, who always strive with activity in opposing others, and in all matters calculated to give pain to others. Whose very sight is inauspicious and whose companionship is fraught with danger. There is a great sin in accepting gifts from and danger in making gift to them. They who are known as quarrelsome, selfish, shameless, deceitful and sinful, whose company is condemnable and those who are addicted to

drinking etc., and other faults of grave nature—all such men should always be avoided.

निवर्तमाने सौहार्दे प्रीतिर्नीचे प्रणश्यति ।
या चैव फलनिर्वृत्तिः सौहृदे चैव यत्सुखम् ॥१४॥
यतते चापवादाय यत्नमारभते क्षये ।
अल्पेऽप्यपकृते मोहान्न शान्तिमधिगच्छति ॥१५॥
तादृशैः सङ्गतं नीचैर्नृशंसैरकृतात्मभिः ।
निशम्य निपुणं बुद्ध्या विद्वान् दूराद् विवर्जयेत् ॥१६॥

भावार्थ—मित्रता के हट जाने पर नीच मनुष्यों की प्रीति नष्ट हो जाती है। उस मैत्री से फल की प्राप्ति और उसका सुख भी नष्ट हो जाता है। वह नीच व्यक्ति मित्र को निन्दित और नष्ट करने के लिए यत्न करता है। जो थोड़ा-सा भी अपकार हो जाने पर मोहवश शान्त नहीं होता, ऐसे नीच, कठोरहृदय और दुष्ट मनुष्य की मित्रता (संगति) को विद्वान् बुद्धिपूर्वक विचारकर दूर से ही त्याग दे।

When the friendship is served, the affection of the low also ends. The beneficial result of that friendship and happiness derivable from it, also comes to an end. That mean fellow then strives to speak ill of his late friend and tries to ruin him. A wise man examining everything carefully and reflecting well, should from a distance avoid the friendship of such a vile, hard-hearted and wicked minded person who on being trifling wrong does not become calm due to attachment.

यो ज्ञातिमनुगृह्णाति दरिद्रं दीनमातुरम् ।
स पुत्रपशुभिर्वृद्धिं श्रेयश्चानन्त्यमश्नुते ॥१७॥

भावार्थ—जो अपने सम्बन्धियों, दरिद्रों, दीनों और रोगियों पर कृपा करता है, वह पुत्र और पशुओं अर्थात् सुख-साधनों की समृद्धि पाता हुआ लौकिक कल्याण को तथा अनन्त सुख=मोक्ष को प्राप्त करता है।

He who helps his relatives, the poor, the wretched and the sick, obtains worldly pleasure through children and animal and enjoyes prosperity that knows no end i.e. he is liberated in the after-world.

ज्ञातयो वर्धनीयास्तैर्य इच्छन्त्यात्मनः शुभम् ।
कुलवृद्धिं च राजेन्द्र तस्मात् साधु समाचर ।
श्रेयसा योक्ष्यते राजन् कुर्वाणो ज्ञातिसत्क्रियाम् ॥१८॥
विगुणा ह्यपि संरक्ष्या ज्ञातयो भरतर्षभ ।
किं पुनर्गुणवन्तस्ते त्वत्प्रसादाभिकांक्षिणः ॥१९॥

भावार्थ—जो मनुष्य अपना कल्याण चाहते हैं, उन्हें अपने आत्म-सम्बन्धियों की वृद्धि करनी चाहिए। हे राजेन्द्र ! तुम भी अपनी कुलवृद्धि के लिए पाण्डवों के साथ उत्तम व्यवहार करो। आत्म-सम्बन्धियों के साथ अच्छा व्यवहार करने से तुम्हारा भी कल्याण होगा। हे भरतभूषण ! गुणहीन आत्मीय जनों की भी रक्षा करनी चाहिए, फिर तुम्हारी कृपा के अभिलाषी गुणवानों का तो कहना ही क्या है ! वे तो अवश्य ही रक्षणीय हैं, अर्थात् गुणशील पाण्डव तुम्हारे आत्मीय हैं, अतः संरक्षणीय हैं।

They that desire their own benefit should always look to the advancement of their relatives. O great king! you for the growth of your own race, behave rightly with the *Pāndavās*. Prosperity will be yours, if you behave properly towards all your relatives. O the best among the *Bharata* race ! even relatives who are devoid of good qualities should be protected, how much more, therefore, they should be protected who are endued with every virtue and are humbly expectant of your favours. The meritorious *Pāndavās* are your own, therefore, they must be protected by you.

प्रसादं कुरु वीराणां पाण्डवानां विशाम्पते ।
दीयन्तां ग्रामकाः केचित् तेषां वृत्त्यर्थमीश्वर ॥२०॥

भावार्थ—हे प्रजापालक नरेश ! वीर पाण्डवों पर कृपा करो। उनके जीवन-निर्वाह के लिए उन्हें कुछ छोटे-मोटे गाँवड़े दे दीजिए।

O monarch! you should favour the heroic sons of *Pāndu.* Let a few small villages be assigned to them for their maintenance.

एवं लोके यशःप्राप्तं भविष्यति नराधिप ।
वृद्धेन हि त्वया कार्यं पुत्राणां तात शासनम् ॥२१॥

भावार्थ—हे राजन् ! पाण्डवों को कुछ ग्राम देने पर तुम्हें लोक में यश प्राप्त होगा। हे तात ! आप वृद्ध हैं, अतः आपको अपने पुत्रों का शासन करना चाहिए।

O king ! by assigning some villages to the *Pāndavās* you will get fame in this world. O sire ! you are elderly, you should, therefore, control your sons.

मया चापि हितं वाच्यं विद्धि मां त्वद्धितैषिणम् ।
ज्ञातिभिर्विग्रहस्तात न कर्तव्यः शुभार्थिना ।
सुखानि सह भोज्यानि ज्ञातिभिर्भरतर्षभ ॥२२॥

भावार्थ—हे तात ! मुझे भी आपके लिए हितकारी वचन ही कहने चाहिएँ। मुझे आप अपना हितैषी समझें। कल्याण-अभिलाषी को आत्मीय-सम्बन्धियों के साथ लड़ाई-झगड़ा नहीं करना चाहिए। हे भरतकुलभूषण ! सुखों को सम्बन्धियों के साथ मिलकर ही भोगना चाहिए।

O sire ! I should say what is good for you. Know me as one who wishes well of you. He who desires his own welfare and prosperity should never quarrel with his relatives. O the best among the *Bharata* race! happiness should ever be enjoyed with one's relatives and not without them.

सम्भोजनं संकथनं सम्प्रीतिश्च परस्परम् ।
ज्ञातिभिः सह कार्याणि न विरोधः कदाचन ॥२३॥
ज्ञातयस्तारयन्तीह ज्ञातयो मज्जयन्ति च ।
सुवृत्तास्तारयन्तीह दुर्वृत्ता मज्जयन्ति च ॥२४॥

भावार्थ—मिलकर भोगों को भोगना, मिलकर वार्तालाप करना और आपस में एकरस प्रेम रखना—ये कार्य आत्म-सम्बन्धियों के साथ मिलकर करने चाहिएँ, आपस में कभी विरोध नहीं करना चाहिए, क्योंकि आत्म-सम्बन्धी ही इस लोक में दुःखों से पार लगानेवाले होते हैं और वे ही दुःख-सागर में डुबाते हैं। सदाचरणशील सम्बन्धी इस संसार-सागर से पार उतार देते हैं और दुराचारी बीच मझधार में डुबा देते हैं।

To eat with one another, to talk with one another, and to have monotonous love with one another are acts which relatives should

always perform. They should never quarrel, because in this world it is the relatives who rescue from the miseries and it is the relatives who drown in the ocean of misery. Those amongst them who are righteous reach accross from the ocean of the world, while those who are immoral sink in the midst.

सुवृत्तो भव राजेन्द्र पाण्डवान् प्रति मानद ।
अधर्षणीयः शत्रूणां तैर्वृतस्त्वं भविष्यसि ॥२५॥

भावार्थ—हे मान करने योग्य राजन् ! तुम पाण्डवों के प्रति उत्तम व्यवहार करनेवाले बनो। उन पाण्डवों के द्वारा घिरे हुए (संरक्षित) तुम शत्रुओं द्वारा पराजित न हो सकने योग्य बन जाओगे।

O giver of honours or honourable! O king! be righteous in your conduct towards the sons of *Pāndu*. Surrouded by them you would become unconquerable by your enemies.

श्रीमन्तं ज्ञातिमासाद्य यो ज्ञातिरवसीदति ।
दिग्धहस्तं मृग इव स एनस्तस्य विन्दति ॥२६॥

भावार्थ—जैसे विषाक्त बाण हाथ में लिये हुए व्याध को मृग-वधरूपी पाप लगता है, उसी प्रकार ऐश्वर्य-सम्पन्न सम्बन्धी को प्राप्त करके भी जो सम्बन्धी दुःखी होता है, उसका पाप ऐश्वर्य-सम्पन्न व्यक्ति को लगता है।

Just as a hunter armed with arrows, is attributed with the sin of killing the deers, similarly, if a relative suffers miseries in the presence of a prosperous relative, then the prosperous relative becomes sinful.

पश्चादपि नरश्रेष्ठ तव तापो भविष्यति ।
तान् वा हतान् सुतान्वापि श्रुत्वा तदनुचिन्तय ॥२७॥

भावार्थ—हे नरश्रेष्ठ ! उन पाण्डवों को अथवा अपने पुत्रों को मरा हुआ सुनकर तुम्हें पीछे भी पश्चात्ताप होगा ही, अतः उसका पहले ही विचार कर लो।

O the best among men! you will repent (for your inaction at present) when you will come to know about the death of either the *Pandavas* or of your sons, therefore, think all about it at present.

येन खट्वां समारूढः परितप्येत कर्मणा ।
आदावेव न तत्कुर्यादध्रुवे जीविते सति ॥२८॥

भावार्थ—जिस कर्म को करके मनुष्य को खाट पर पड़े हुए सन्ताप करना पड़े, नींद हराम हो जाए अथवा किसी को मुँह दिखाने योग्य न रहे, उसे उचित है कि जीवन को अनिश्चित एवं क्षणभंगुर समझकर उस कार्य को आरम्भ ही न करे।

That act, by doing which one would have to regret at his bed—one would have to pass sleepless nights or one would have to be ashamed of, should be avoided in the very begining thinking that life is uncertain and transient.

न कश्चिन्नापनयते पुमानन्यत्र भार्गवात्।
शेषसम्प्रतिपत्तिस्तु बुद्धिमत्स्वेव तिष्ठति ॥२६॥

भावार्थ—संसार में नीति-शास्त्र-कर्ता शुक्राचार्य को छोड़कर अन्य ऐसा कोई मनुष्य नहीं है जो अनीति का आचरण न करता हो, अतः 'जो बीत गया सो बीत गया' उसकी चिन्ता छोड़कर बुद्धिमानों को भविष्य में होनेवाले कार्यों का विचार करना चाहिए।

It it true that a person other than *Śukrācharya*—the author of 'Science of Morality' is liable to commit actions which go against morality, therefore, 'what is done is done', leaving aside its worry the wiseman should think about the acts which would be accomplished in future.

दुर्योधनेन यद्येतत् पापं तेषु पुरा कृतम्।
त्वया तत् कुलवृद्धेन प्रत्यानेयं नरेश्वर ॥३०॥

भावार्थ—हे नरेश्वर! यदि दुर्योधन ने पहले पाण्डवों के प्रति राज्य-अपहरण आदि पापकर्म किया है तो कुलवृद्ध होने के कारण आपको वह दोष दूर कर देना चाहिए, उनका राज्य उन्हें लौटा देना चाहिए।

O king of men! If *Ḍuryodhana* has inflicted sinful deed by snatching off the kingdom of the *Pāndavās*, it is your duty to undo it. You should return their kingdom to them, because you are aged scion of the Kuru's race.

ताँस्त्वं पदे प्रतिष्ठाप्य लोके विगतकल्मषः।
भविष्यसि नरश्रेष्ठ पूजनीयो मनीषिणाम् ॥३१॥

भावार्थ—हे नरश्रेष्ठ! पाण्डवों को उनके राज्य पर प्रतिष्ठित करके तुम लोगों की दृष्टि में निर्दोष हो जाओगे और बुद्धिमानों के पूजनीय बन जाओगे।

O the best among men! Re-instaiting the *Pāndavās* in their position you will become sinless—blameless in this world and you will be object of worship even by intelligent men.

सुव्याहृतानि धीराणां फलतः परिचिन्त्य यः ।
अध्यवस्यति कार्येषु चिरं यशसि तिष्ठति ॥३२॥

भावार्थ—जो मनुष्य बुद्धिमानों द्वारा कहे गये उत्तम वचनों को फल की दृष्टि से विचार करके कार्यों का निश्चय करता है, वह संसार में चिरकाल तक यशस्वी रहता है ।

Reflecting over the well-spoken words of the wisemen according to their consequences, he who resolves to do the acts, his fame lasts longer in the world.

असम्यगुपयुक्तं हि ज्ञानं सुकुशलैरपि ।
उपलभ्यं चाविदितं विदितं चाननुष्ठितम् ।
पापोदयफलं विद्वान् यो नारभति वर्धते ॥३३॥

भावार्थ—ऐसे अत्यन्त चतुर मनुष्यों द्वारा उपदिष्ट ज्ञान भी व्यर्थ ही है जिन्होंने जानने योग्य वस्तु का ज्ञान प्राप्त नहीं किया और जाना तो उसके अनुकूल आचरण नहीं किया । जो विद्वान् पाप-परिणामवाले कर्म को आरम्भ ही नहीं करता, वह जीवन में उन्नति करता है ।

The knowledge imparted by such intelligent persons is useless, who did not obtain the knowledge of what was to be sought, or if they obtained the knowledge, it was not accomplished in practice. The learned man who never does an act, the consequences of which are sin and misery, always grows in prosperity.

यस्तु पूर्वकृतं पापमविमृश्यानुवर्तते ।
अगाधपङ्के दुर्मेधा विषमे विनिपात्यते ॥३४॥

भावार्थ—जो मनुष्य पहले किये हुए दुष्कर्म का विचार किये बिना पुनः उसी पापकर्म को बार-बार करता है, वह मूर्ख बड़ी भारी विपत्ति में फँस जाता है ।

Who from folly pursues the same sinful course again and again, which was committed by him before, such a foolish person falls into a slough of deep mire.

मन्त्रभेदस्य षट् प्राज्ञो द्वाराणीमानि लक्षयेत् ।
अर्थसन्ततिकामस्तु रक्षेदेतानि नित्यशः ॥३५॥
मदं स्वप्नमविज्ञानमाकारं चात्मसम्भवम् ।
दुष्टामात्येषु विश्रम्भं दूताच्चाकुशलादपि ॥३६॥

भावार्थ—बुद्धिमान् मनुष्य मन्त्र-भेद के निम्न छह द्वारों को जाने और निरन्तर सफलता-प्राप्ति, धन और वंश-वृद्धि का अभिलाषी मनुष्य इन्हें सदा बन्द रक्खे—(१) अहंकार अथवा मादक द्रव्यों से होनेवाली चित्त की जड़ता, (२) निद्रा अथवा असावधानता, (३) शत्रु के गुप्तचरों का ज्ञान न होना, (४) अपने में होनेवाले मुखादि अङ्गों के हाव-भाव, (५) दुष्ट मन्त्रियों पर और (६) मूर्ख दूतों पर विश्वास ।

He who is wise should ever keep in view the following six conduits by which counsels are disclosed and he who desires success, prosperity in wealth and a long dynasty should ever guard himself from those six. They are—1. Self-conceit or inertia of mind caused by intoxicating drugs, 2. too much sleeping or carelessness, 3. inattention to the spies of the enemy, 4. gestures and postures of one's own body, 5. confidence reposed in wicked counsellors and 6. foolish messengers.

द्वाराण्येतानि यो ज्ञात्वा संवृणोति सदा नृप ।
त्रिवर्गाचरणे युक्तः स शत्रूनधितिष्ठति ॥३७॥

भावार्थ—हे राजन् ! जो इन (पूर्वोक्त छह) द्वारों को जानकर सदा बन्द रखता है, सतत् सावधान रहता है, धर्म-अर्थ-काम के आचरण में तत्पर वह राजा शत्रुओं को वश में कर लेता है ।

O king! he who knowing these six doors (through which counsels leak out), keeps them shut, who is always alert, who is engaged in the attainment of *Dharma, Artha* and *Kāma* (virtue, wealth and desire) succeeds in standing over the heads of his enemies.

न वै श्रुतमविज्ञाय वृद्धाननुपसेव्य वा ।
धर्मार्थौ वेदितुं शक्यौ बृहस्पतिसमैरपि ॥३८॥

भावार्थ—शास्त्रों का अध्ययन और वृद्धों की सेवा किये बिना बृहस्पति के समान विद्वानों को भी धर्म और अर्थ के विषय में ज्ञान नहीं हो सकता।

Without deep study of the scriptures and without serving the elder-men, a man can neither obtain the knowledge of *Dharma*—religion nor of *Artha*—politics, even when he may be blessed with the intelligence of *Bṛhaspaṭi.*

नष्टं समुद्रे पतितं नष्टं वाक्यमशृण्वति।
अनात्मनि श्रुतं नष्टं नष्टं हुतमनग्निकम् ॥३६॥

भावार्थ—समुद्र में गिरी हुई वस्तु और न सुननेवाले के प्रति कहा गया वचन नष्ट हो जाता है। बुद्धिहीन मनुष्य में शास्त्र और भस्म में किया हुआ हवन भी नष्ट हो जाता है।

An article is lost if fallen into the sea, the words are lost, if uttered before him who does not listen to them. The scriptures are lost upon him who is foolish and *Agni-hoṭra* is lost, if the clarified butter is poured over the ashes left by a fire which is extinguished.

मत्या परीक्ष्य मेधावी बुद्ध्या सम्पाद्य चासकृत्।
श्रुत्वा दृष्ट्वाथ विज्ञाय प्राज्ञैर्मैत्रीं समाचरेत् ॥४०॥

भावार्थ—बुद्धिमान् मनुष्य मननपूर्वक परीक्षा करके और बुद्धि द्वारा बार-बार कार्य की योग्यता का निश्चय करके, अन्यों के द्वारा सुनकर, स्वयं देखकर और विशेषरूप से जानकर तत्पश्चात् बुद्धिमानों के साथ मित्रता का व्यवहार करे।

He, who is endued with the intelligence, having first examined by reflection, by intelligence knowing again and again his working capacity, by hearing it from others, by seeing it with his own eyes and specially knowing all about a person, should make friendship with those who are wise.

अकीर्तिं विनयो हन्ति हन्त्यनर्थं पराक्रमः।
हन्ति नित्यं क्षमा क्रोधमाचारो हन्त्यलक्षणम् ॥४१॥

भावार्थ—विनय अपयश को नष्ट कर देती है, पराक्रम संकटों को मार भगाता है, क्षमा क्रोध को नष्ट कर डालती है और सदाचार दुर्व्यसनों को नष्ट कर देता है।

Humility removes infamy. Prowess removes adversity. Forgiveness destroyes anger and righteousness annihilates all evil habits.

परिच्छदेन क्षेत्रेण वेश्मना परिचर्यया ।
परीक्षेत कुलं राजन् भोजनाच्छादनेन च ॥४२॥

भावार्थ—हे राजन् ! भोग्य-सामग्री, जन्म-स्थान, घर, सेवा और भोजन तथा वस्त्र—इन सबसे कुल की परीक्षा करनी चाहिए ।

O king ! the lineage of a person should be tested by his objects of enjoyment, birth-place, house, behaviour or service, food and dress.

उपस्थितस्य कामस्य प्रतिवादो न विद्यते ।
अपि निर्मुक्तदेहस्य कामासक्तस्य किं पुनः ॥४३॥

भावार्थ—शरीर के अभिमान से रहित=जीवन्मुक्त मनुष्य भी स्वतः प्राप्त अभीष्ट वस्तु का विरोध नहीं करता, उसे स्वीकार कर लेता है, फिर कामासक्त मनुष्य का तो कहना ही क्या है ?

The man who has attained emancipation is not unwilling to enjoy when an object of enjoyment is available, then what can be said of him who is yet wedded to the desires.

प्राज्ञोपसेविनं वैद्यं धार्मिकं प्रियदर्शनम् ।
मित्रवन्तं सुवाक्यं च सुहृदं परिपालयेत् ॥४४॥

भावार्थ—राजा को विद्वानों के सेवक, वैद्य, धार्मिक, प्रियदर्शन, मित्रोंवाले और मधुरभाषी मित्र की सब प्रकार से रक्षा करनी चाहिए ।

A king should protect by all means a friend who serves the persons endued with learning, who is an Āyurveḍic Physician, who is religious minded, who is of an agreeable appearance, who has many friends and who is of sweet speech.

दुष्कुलीनः कुलीनो वा मर्यादां यो न लङ्घयेत् ।
धर्मापेक्षी मृदुर्ह्रीमान् स कुलीनशताद्वरः ॥४५॥

भावार्थ—चाहे उत्तम कुल में उत्पन्न हुआ हो या अधम कुल में, जो मनुष्य मर्यादा का उल्लंघन नहीं करता, धर्मानुसार कार्य करनेवाला, कोमल स्वभाववाला और लज्जाशील है, ऐसा मनुष्य सैकड़ों कुलीनों से उत्तम है ।

Whether he may be of low or high birth, he who does not transgress the limits of propriety, who has an eye on virtue—who acts according to the rules of religion, who is endued with humility and modesty, is superior to a hundred persons of high birth.

ययोश्चित्तेन वा चित्तं निभृतं निभृतेन वा।
समेति प्रज्ञया प्रज्ञा तयोर्मैत्री न जीर्यति ॥४६॥

भावार्थ—जिन दो व्यक्तियों का चित्त के साथ चित्त अथवा गुप्त रहस्य के साथ गुप्त रहस्य और बुद्धि के साथ बुद्धि मेल खाती है, उनकी मित्रता अटूट होती है।

The friendship of those persons never comes to an end whose hearts, secret pursuits and intelligence accord in every respect.

दुर्बुद्धिमकृतप्रज्ञं छन्नं कूपं तृणैरिव ।
विवर्जयीत मेधावी तस्मिन्मैत्री प्रणश्यति ॥४७॥

भावार्थ—बुद्धिमान् मनुष्य को चाहिए कि मूर्ख और कृतघ्न को तिनकों से ढके हुए कुएँ के समान त्याग दे, क्योंकि उसके साथ की हुई मित्रता नष्ट हो जाती है।

He who is intelligent should avoid the friendship of an ignorant and ungrateful person, like a pit whose mouth is covered with grass, for friendship with such a person can never last longer.

अवलिप्तेषु मूर्खेषु रौद्रसाहसिकेषु च ।
तथैवापेतधर्मेषु न मैत्रीमाचरेद् बुधः ॥४८॥

भावार्थ—विद्वान् मनुष्य को चाहिए कि वह अहंकारी, दुःसाहसी, मूर्ख, क्रोधी, विवेकरहित और धर्महीन मनुष्यों के साथ मित्रता न करे।

A man, who is endued with learning, should never form friendship with those who are proud or engrossed in sinful conduct, rash, ignorant, hot-tempered, without discretion, fierce and fallen off from righteousness.

कृतज्ञं धार्मिकं सत्यमक्षुद्रं दृढभक्तिकम् ।
जितेन्द्रियं स्थितं स्थित्यां मित्रमत्यागि चेष्यते ॥४९॥

भावार्थ—कृतज्ञ, धार्मिक, सच्चा, उदार, स्थिर प्रीतिवाला, संयमी, मर्यादा में स्थित और आपत्ति में भी मित्रता का त्याग न करनेवाला मित्र अभीष्ट=चाहने योग्य होता है।

He who is grateful, virtuous, truthful, generous, devoted, he who has his senses under control, who preserves his dignity and never forsakes a friend in need, should be desired for a friend.

इन्द्रियाणामनुत्सर्गो मृत्युनापि विशिष्यते ।
अत्यर्थं पुनरुत्सर्गः सादयेद् दैवतान्यपि ॥५०॥

भावार्थ—इन्द्रियों को विषयों में प्रवृत्त होने से रोकना मृत्यु को जीतने से भी कठिन कार्य है और विषयों में अत्यधिक प्रवृत्ति तो देवों का भी नाश कर देती है।

The withdrawal of the senses from their respective objects is more difficult than to conquer death even. Their excessive indulgence again would ruin the very gods—the learned men.

मार्दवं सर्वभूतानामनसूया क्षमा धृतिः ।
आयुष्याणि बुधाः प्राहुर्मित्राणां चावमानना ॥५१॥

भावार्थ—विद्वान् लोग कहते हैं कि सब प्राणियों के प्रति कोमलता अथवा दया का व्यवहार, गुणों में दोष न देखना, सहनशीलता, धैर्य और मित्रों का तिरस्कार न करना—ये गुण आयु को बढ़ानेवाले हैं।

The learned men declare that—love and kindness for all the creatures, absense of envy or not to find fault with the merits of others, forgiveness or forbearance, perseverance and respect for friends—these qualities lengthen life.

अपनीतं सुनीतेन योऽर्थं प्रत्यानिनीषते ।
मतिमास्थाय सुदृढां तदकापुरुषव्रतम् ॥५२॥

भावार्थ—जो मनुष्य कुनीति से नष्ट धन को स्थिर बुद्धि का सहारा लेकर उत्तम नीति से पुनः प्राप्त करने की इच्छा करता है, वह वीर पुरुष के व्रत का आचरण करता है।

He who with a firm resolution strives to re-acquire the wealth which was earlier lost due to evil policy, he acts upon the vow of a heroic person i.e., he possesses real manhood.

आयत्यां प्रतिकारज्ञस्तदात्वे दृढनिश्चयः ।
अतीते कार्यशेषज्ञो नरोऽर्थैर्न प्रहीयते ॥५३॥

भावार्थ—भविष्य में आनेवाले विघ्नों को जाननेवाला, वर्तमान में दृढ़ निश्चयवाला और भूतकाल में अवशिष्ट रहे कार्य को जाननेवाला मनुष्य धन-सम्पत्ति से वियुक्त नहीं होता—सदा धन-धान्य से सम्पन्न रहता है।

The man, who is aware of the future impediments and the remedies thereof, who is firmly rooted in the present and who knows the incomplete acts of the past and the way to complete them, is never separated from money and possessions—he is ever prosperous.

कर्मणा मनसा वाचा यदभीक्ष्णं निषेवते।
तदेवापहरत्येनं तस्मात्कल्याणमाचरेत् ॥५४॥

भावार्थ—मनुष्य मन, वचन और कर्म से जिस विषय का बार-बार सेवन करता है, वही इसे अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है, इसलिए मनुष्य को शुभ कर्मों का ही आचरण करना चाहिए।

The object which a man pursues in thought, word and deed, the same attracts him for its own, therefore, one should always seek that which is for his good.

मङ्गलालम्भनं योगः श्रुतमुत्थानमार्जवम्।
भूतिमेतानि कुर्वन्ति सतां चाभीक्ष्णदर्शनम् ॥५५॥

भावार्थ—सुवर्ण, गौ आदि मङ्गलकारी पदार्थों का स्पर्श अथवा उन्हें प्राप्त करने का प्रयत्न, मन का निरोध, शास्त्रों का अध्ययन और श्रवण, उद्योग=पुरुषार्थ, सरलता और सत्पुरुषों का बार-बार दर्शन—ये कल्याणकारक=सुखकारी होते हैं।

The touching or effort after securing auspicious things like gold, cow etc., the control of the mind, the study of and listening to the scriptures, strenuous and continuous endeavour, straight-forwardness and frequent meetings with those that are good—these bring prosperity.

अनिर्वेदः श्रियो मूलं लाभस्य च शुभस्य च।
महान् भवत्यनिर्विण्णः सुखं चानन्त्यमश्नुते ॥५६॥

भावार्थ—सतत उद्योग में लगे रहना और शोक न करना लक्ष्मी और कल्याण-प्राप्ति का मूल है। उद्योगी और शोकरहित मनुष्य महान् बनता है और मोक्ष प्राप्त करता है।

Strenuous and continuous endeavour and absense of sorrow is the root of prosperity and of what is beneficial. A diligent and a man unafflicted with sorrow becomes great and enjoys happiness which is unending.

नातः श्रीमत्तरं किञ्चिदन्यत् पथ्यतमं मतम् ।
प्रभविष्णोर्यथा तात क्षमा सर्वत्र सर्वदा ॥५७॥

भावार्थ—हे तात ! समर्थ पुरुष द्वारा सब स्थानों और सब कालों में क्षमा करने से बढ़कर शोभायुक्त और अत्यन्त हितकारी अन्य कोई कार्य नहीं है ।

O sire ! at every place and at all times, there is nothing more beneficial and more splendid for a competent man of power and energy as forgiveness.

क्षमेदशक्तः सर्वस्य शक्तिमान् धर्मकारणात् ।
अर्थानर्थौ समौ यस्य तस्य नित्यं क्षमा हिता ॥५८॥

भावार्थ—दुर्बल स्वहितार्थ सबको क्षमा करे, क्योंकि उसके लिए और कोई उपाय नहीं है, बलवान् धर्म के लिए क्षमा कर दे (अर्थात् क्षमा करने से धर्म होगा, इसलिए क्षमा कर दे) । जिसके लिए अर्थ और अनर्थ दोनों समान हैं अर्थात् मध्यम श्रेणी के मनुष्य के लिए भी क्षमा सदा हितकर है । इस प्रकार क्षमा सभी के लिए कल्याणकारिणी है ।

He who is weak should forgive all for his own welfare, because for him there is no other way. He who is possessed of power should show forgiveness from motives of virtue (by forgiveness he will be doing an act of *Dharma*), to whom the success or failure of his objects is the same i.e. for a man of second grade also forgiveness is always beneficial. In this way forgiveness is beneficial to all.

यत्सुखं सेवमानोऽपि धर्मार्थाभ्यां न हीयते ।
कामं तदुपसेवेत न मूढव्रतमाचरेत् ॥५९॥

भावार्थ—जिस सुख का भोग करता हुआ मनुष्य धर्म और अर्थ से हीन नहीं होता, उसका यथेष्ट उपभोग करे, परन्तु मूर्खों की भाँति विषयों में अत्यन्त आसक्त न हो ।

The pleasure, the pursuit of which does not injure one's *Dharma* (religion) and *Artha* (wealth), should certainly be pursued to one's

full. But one should not act like a fool by giving free indulgence to his senses.

दुःखार्त्तेषु प्रमत्तेषु नास्तिकेष्वलसेषु च ।
न श्रीर्वसत्यदान्तेषु ये चोत्साहविवर्जिताः ॥६०॥

भावार्थ—जो दुःखों से पीड़ित, प्रमादी, नास्तिक (वेद, ईश्वर और पुनर्जन्म को न माननेवाले), आलसी, अजितेन्द्रिय और उत्साहहीन हैं, उनके पास लक्ष्मी नहीं रहती ।

Prosperity never dwells in those who are afflicted with troubles and grief, who are careless or addicted to intoxications, who are atheists (who do not believe in God, *Vedas* and Re-birth), who are lazy, whose senses are not under their control and who are unenthusiastic.

आर्जवेन नरं युक्तमार्जवात्सव्यपत्रपम् ।
अशक्तं मन्यमानास्तु धर्षयन्ति कुबुद्धयः ॥६१॥

भावार्थ—मूर्ख लोग सरल स्वभाव और सरलता के कारण ही लज्जाशील मनुष्य को दुर्बल समझते हुए उसे दबाते अथवा तिरस्कृत करते हैं, अतः अत्यन्त सरल नहीं बनना चाहिए ।

The man who is straightforward and who by his straightforwardness is modest, is regarded as weak by fools and people of misdirected intelligence oppress and humilate him.

अत्यार्यमतिदातारमतिशूरमतिव्रतम् ।
प्रज्ञाभिमानिनं चैव श्रीर्भयान्नोपसर्पति ॥६२॥

भावार्थ—अत्यन्त श्रेष्ठ, अति दानशील, अत्यधिक शूरवीर, दृढ़व्रती और बुद्धि का अत्यधिक अभिमान करनेवाले मनुष्य के पास भय के मारे लक्ष्मी नहीं जाती, अर्थात् अति सर्वत्र दुःखदायी है ।

Prosperity never approaches from fear the person who is excessively noble, who gives away without measure, who is possessed of extra ordinary bravery, who practises the most rigid vows and who is very proud of his wisdom. Therefore, too much of anything is bad.

न चातिगुणवत्स्वेषा नात्यन्तं निर्गुणेषु च ।
नैषा गुणान् कामयते नैर्गुण्यान्नानुरज्यते ।
उन्मत्ता गौरिवान्धा श्रीः क्वचिदेवावतिष्ठते ॥६३॥

भावार्थ—लक्ष्मी न तो अत्यन्त गुणवान् मनुष्यों के पास रहती है और न ही सर्वथा गुणहीनों के पास ठहरती है। यह न तो गुणों को चाहती है और न निर्गुणता से रीझती है। पगली गौ के समान यह अन्धी लक्ष्मी किसी-किसी स्थान पर ही टिक पाती है।

Prosperity neither dwells in one who is highly accomplished, nor in one who is without any accomplishment. She neither desires a combination of all the virtues, nor is she pleased with the total absense of all the virtues. Like a mad cow the blind godess of wealth resides with only at few places.

अग्निहोत्रफला वेदाः शीलवृत्तफलं श्रुतम् ।
रतिपुत्रफला नारी दत्तभुक्तफलं धनम् ॥६४॥

भावार्थ—वेदों का प्रयोजन अग्निहोत्रादि उत्तम कर्मों का आचरण है, शास्त्र-अध्ययन और श्रवण का फल उत्तमशील और सदाचार का पालन है, पत्नी का प्रयोजन सुख का उपभोग तथा पुत्रोत्पत्ति है, धन का प्रयोजन दान और भोग है।

The fruits (purpose) of the *Vedas* is to perform *Agni-hotra* and good acts, the fruits of the study of and listening to the scriptures are goodness of disposition and conduct. The fruits of women are the pleasures of intercourse and offspring and the fruits of wealth are enjoyment and charity.

अधर्मोपार्जितैरर्थैर्यः करोत्यौर्ध्वदेहिकम् ।
न स तस्य फलं प्रेत्य भुंक्तेऽर्थस्य दुरागमात् ॥६५॥

भावार्थ—जो मनुष्य अधर्म से कमाये हुए धन से यज्ञ, दान आदि कर्मों को करता है कि इनसे परलोक में सुख मिलेगा, वह मरने के पश्चात् उस यज्ञ, दान आदि के शुभ फल को प्राप्त नहीं करता, क्योंकि वह धन अनुचित उपायों से कमाया गया था।

He who performs acts like *Agni-hotra*, charity etc., tending to secure his prosperity and happiness in the other world, with the

wealth acquired sinfully, never reaps the fruits of these acts in the other world, because the money spent for that purpose was acquired by sinful means.

कान्तारे वनदुर्गेषु कृच्छ्रास्वापत्सु सम्भ्रमे ।
उद्यतेषु च शस्त्रेषु नास्ति सत्त्ववतां भयम् ॥६६॥

भावार्थ—जंगलों में, वन के दुर्गम स्थानों में, घोर विपत्तियों में, युद्धादि की हलचल में और उठे हुए शस्त्रों में मनोबल से युक्त शक्तिशाली मनुष्यों को भय नहीं होता।

In the midst of the deserts and inaccessible forests, amidst all kind of dangers and alarms, in the stir of war, or in view of deadly weapons upraised for striking him, he who is of high morale and is powerful has no fear.

उत्थानं संयमो दाक्ष्यमप्रमादो धृतिः स्मृतिः ।
समीक्ष्य च समारम्भो विद्धि मूलं भवस्य तु ॥६७॥

भावार्थ—उद्योग=परिश्रम, संयम, चतुरता, जागरूकता, धैर्य, स्मरणशक्ति और सोच-विचारकर कार्य का आरम्भ—इन्हें सम्पन्नता और उन्नति का मूल समझना चाहिए।

It should be known that endeavour, self-control, skill, carefulness, perseverance, deep memory and commencement of acts after mature delibration—all these are the roots of prosperity.

तपो बलं तापसानां ब्रह्म ब्रह्मविदां बलम् ।
हिंसा बलमसाधूनां क्षमा गुणवतां बलम् ॥६८॥

भावार्थ—तपस्वितों का बल तप है, ब्रह्मवेत्ताओं का बल वेद और ईश्वर है, दुष्टों का बल हिंसा है और गुणवानों का बल क्षमा है।

Austerities constitute the strength of ascetics, the *Vedas* and God are the strength of those who are conversent with the *Vedas*, in injury to others lies the strength of the wicked and in forgiveness the strength of the virtuous.

अष्टौ तान्यव्रतघ्नानि आपो मूलं फलं पयः ।
हविर्ब्राह्मणकाम्या च गुरोर्वचनमौषधम् ॥६९॥

भावार्थ—जल, कन्दमूल, फल, दूध, यज्ञशेष, ब्राह्मण की कामना की पूर्ति के लिए खा लेना, गुरु के कथन से खाना और ओषधि-सेवन—ये आठ व्रत के नाशक नहीं हैं।

These eight viz., use of water, roots like carrot, fruits, milk, the eating of the remnants of a *Yajña*, eating to fulfil the desire of a *Brāhmaṇa* or at the command of a preceptor and taking of medicine—do not violate a fast.

न तत्परस्य सन्दध्यात्प्रतिकूलं यदात्मनः ।
संग्रहेणैष धर्मः स्यात् कामादन्यः प्रवर्तते ॥७०॥

भावार्थ—'जो आचार-व्यवहार अपने प्रतिकूल है, वह दूसरे के साथ न करे'—संक्षेप में यही तो धर्म है। इसके विपरीत कामना से अधर्म की प्रवृत्ति होती है।

The conduct and behaviour which is antagonistic to one's own-self, should never be applied in respect of another. In brief this is *Dharma* (Religion, Virtue). Contrary to this *Adharma* (Unrighteousness) prevails by inclination.

अक्रोधेन जयेत्क्रोधमसाधुं साधुना जयेत् ।
जयेत् कदर्यं दानेन जयेत्सत्येन चानृतम् ॥७१॥

भावार्थ—क्रोध को शान्ति से जीते, दुष्ट को सज्जनता से वश में करे, कंजूस को दान से जीते और असत्य को सत्य से जीते।

Anger must be conquered by tranquility, the wicked must be conquered by gentlemenliness, the miser must be conquered by charity and falsehood must be conquered by truth.

स्त्रीधूर्त्तकेऽलसे भीरौ चण्डे पुरुषमानिनि ।
चौरे कृतघ्ने विश्वासो न कार्यो न च नास्तिके ॥७२॥

भावार्थ—स्त्री, धूर्त, आलसी, डरपोक, क्रोधी, बल के घमण्डी, चोर, कृतघ्न और नास्तिक—इनपर विश्वास नहीं करना चाहिए।

One should not trust a women, a swindler, an idle person, a coward, a hot-tempered, one who boasts of his own power, a thief, an ungrateful person and an atheist.

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः ।
चत्वारि सम्प्रवर्धन्त आयुर्विद्या यशो बलम् ॥७३॥

भावार्थ—माता-पिता आदि गुरुजनों को चरणस्पर्शपूर्वक नमस्कार करनेवाले और ज्ञानवृद्ध, वयोवृद्ध तथा अनुभववृद्धों का सत्संग करनेवाले के—आयु, ज्ञ न, कीर्ति और बल—ये चारों बढ़ते हैं।

Knowledge, longevity of life, fame and power—these four always expand in the case of him who pays due respect to his superiors and preceptors like parents etc. by touching their feet and waiting upon those who are learned, aged and experienced.

अतिक्लेशेन येऽर्थाः स्युर्धर्मस्यातिक्रमेण वा।
अरेर्वा प्रणिपातेन मा स्म तेषु मनः कृथाः ॥७४॥

भावार्थ—जो धन वा प्रयोजन अत्यन्त कष्ट से, धर्म का उल्लंघन करने से अथवा शत्रु के समक्ष झुकने से सिद्ध हों, उनमें मन मत लगा, अर्थात् उनकी इच्छा मत कर।

Do not desire for or set your heart upon those objects which cannot be acquired except by very painful exertion, or by sacrificing righteousness or by bowing down to an enemy.

अविद्यः पुरुषः शोच्यः शोच्यं मैथुनमप्रजम्।
निराहाराः प्रजाः शोच्याः शोच्यं राष्ट्रमराजकम् ॥७५॥

भावार्थ—विद्यारहित मनुष्य शोचनीय है, जिस मैथुन से सन्तान न हो वह मैथुन शोचनीय है, भूखी प्रजा शोचनीय है और राजा से हीन राष्ट्र शोचनीय है।

A man who is devoid of knowledge is to be pitied, an act of intercourse which is not fruitful—by which no offspring is born, is to be pitied, the people of a kingdom who are without food are to be pitied and a kingdom without a king is also to be pitied.

अध्वा जरा देहवतां पर्वतानां जलं जरा।
असम्भोगो जरा स्त्रीणां वाक्शल्यं मनसो जरा ॥७६॥

भावार्थ—देहधारियों के लिए अधिक मार्ग चलना आयु को क्षीण करनेवाला है, जल पर्वतों को क्षीण कर देता है, इच्छा होने पर भी सम्भोग से वञ्चित रहने से स्त्रियों की आयु क्षीण होती है, वचनों के बाण मन के लिए वृद्धावस्था के समान कष्टदायक होते हैं।

Walking too much shortens the lives of embodied creatures (men). The rains decay the hills and mountains, the absence of enjoyment shortens the lives of women and wordy arrows are painful just like old-age to the heart and mind.

अनाम्नायमला वेदा ब्राह्मणस्याव्रतं मलम् ।
मलं पृथिव्या बाह्लीकाः पुरुषस्यानृतं मलम् ।
कौतूहलमला साध्वी विप्रवासमलाः स्त्रियः ॥७७॥

भावार्थ—अभ्यास न करना वेदों का मल है, व्रतों का पालन न करना ब्राह्मण का मल है, बाह्लीक देश पृथिवी का मल है । पुरुष का मल झूठ है, साध्वी का मल कौतूहल (परपुरुष को देखने की उत्सुकता) है, पति से अलग होकर परदेश में रहना अथवा पति का लगातार बाहर रहना स्त्रियों का मल है ।

The scum of the *Vedas* is the want of study, of *Brāhmanās*, unobservance of vows; of the earth, the *Vahlikas*; of man, untruth; of the chaste woman, curiosity (eagerness to have a glimps of other man than his own); of woman exile from home or husband's continueously living out of the home.

सुवर्णस्य मलं रूप्यं रूप्यस्यापि मलं त्रपु ।
ज्ञेयं त्रपुमलं सीसं सीसस्यापि मलं मलम् ॥७८॥

भावार्थ—सोने का मल चाँदी है, चाँदी का मल रांगा है, रांगे का मल सीसा है और सीसे का मल उसका मैल है ।

The scum of gold is silver; of silver, tin; of tin, lead; and of lead, useless dross.

विशेष—*यह श्लोक प्रक्षिप्त है, क्योंकि किसी मूर्ख और अवैज्ञानिक द्वारा निर्मित है । सोने आदि का मल चाँदी आदि कैसे हो सकता है ?*

Note—*The verse is an interpolation. It is composed by some fool and non-scientist. How can the silver etc. be the scum of gold etc.?*

न स्वप्नेन जयेन्निद्रां न कामेन जयेत्स्त्रियः ।
नेन्धनेन जयेदग्निं न पानेन सुरां जयेत् ॥७९॥

भावार्थ—सोये रहने के द्वारा निद्रा को, कामोपभोग से स्त्रियों को, ईंधन से अग्नि को और सुरापान से सुरापान के व्यसन को नहीं जीता जा सकता। इनसे तो ये बढ़ते ही हैं।

One cannot conquer sleep by lying down, women by sexual enjoyments, fire by fuel and wine by drinking. They increase only in this way.

यस्य दानजितं मित्रं शत्रवो युधि निर्जिताः।
अन्नपानजिता दाराः सफलं तस्य जीवितम् ॥८०॥

भावार्थ—जिसने दान के द्वारा अपने मित्रों को वश में कर लिया है, शत्रुओं को युद्ध में जीत लिया है और भोग-सामग्री से स्त्रियों को वश में कर लिया है, उसका जीवन सफल है।

His life is, indeed, crowned with success who has won his friends by making gifts to them, his foes in the battle, and wife by food and clothing—the means of enjoyment.

सहस्त्रिणोऽपि जीवन्ति जीवन्ति शतिनस्तथा।
धृतराष्ट्र विमुञ्चेच्छां न कथञ्चिन्न जीव्यते ॥८१॥

भावार्थ—हज़ारों रुपयेवाले भी जीते हैं और सैकड़ों रुपयोंवाले भी जीते हैं, अतः धृतराष्ट्र ! अधिक की इच्छा को छोड़ो, ऐसा नहीं है कि अधिक सम्पत्ति के बिना किसी प्रकार जीवित नहीं रहा जा सकता।

O *Dhṛtrāṣtra*! they having thousands of rupees live, they who have hundreds of rupees also live. Therefore, forsake the desire of having more. It is not so that a man cannot live without huge amounts of wealth. Somehow or other one manages to live.

यत्पृथिव्यां व्रीहियवं हिरण्यं पशवः स्त्रियः।
नालमेकस्य तत्सर्वमिति पश्यन्न मुह्यति ॥८२॥

भावार्थ—भूमण्डल में जो चावल, जौ (अन्न), सोना (धन), पशु तथा स्त्रियाँ हैं, वे सब एक लोभी मनुष्य के लिए भी पर्याप्त नहीं हैं, ऐसा जानकर बुद्धिमान् मोहित नहीं होता।

Paddy or rice, wheat, gold, animals and women that are on the earth—all together cannot satiate even one person, who is covetous.

Reflecting on this, those who are wise do not fall in the trap of fascination.

राजन् भूयो ब्रवीमि त्वां पुत्रेषु सममाचर ।
समता यदि ते राजन् स्वेषु पाण्डुसुतेषु च ॥८३॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि प्रजागरपर्वणि विदुरनीतौ एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥

इति विदुरनीतौ (विदुरप्रजागरे) सप्तमोध्यायः ॥

भावार्थ—हे राजन् ! मैं आपसे पुनः कहता हूँ कि यदि आपकी अपन और पाण्डुपुत्रों पर समता-बुद्धि है तो सभी पुत्रों के साथ एक-सा व्यवहार करो ।

O king! I tell you again, if you have the same attitude towards your sons and the sons of *Pandu*, then adopt an impartial behaviour towards all the children.

यह विदुरनीति (विदुरप्रजागर) का सातवाँ अध्याय सम्पूर्ण हुआ ॥

Here ends the seventh chapter of Vidura-Niti.

अथाष्टमोऽध्याय:—Eighth Chapter

विदुर उवाच

योऽभ्यर्चितः सद्भिरसज्जमानः
करोत्यर्थं शक्तिमहापयित्वा ।
क्षिप्रं यशस्तं समुपैति सन्त-
मलं प्रसन्ना हि सुखाय सन्तः ॥१॥

भावार्थ—विदुरजी बोले—जो सत्पुरुषों से प्रशंसित हुआ, अनासक्त होकर यथाशक्ति बहुत कार्य कर डालता है, उस सज्जन को शीघ्र ही सुयश प्राप्त होता है, क्योंकि प्रसन्न हुए सत्पुरुष निश्चय ही कल्याण करने में समर्थ होते हैं।

Vidura said—Praised by gentlemen, detached from worldly objects, within the limits of his power, who does a lot of work, that good man soon succeeds in winning fame, because the good men when gratified with a person are certainly competent to bestow happiness on him.

महान्तमप्यर्थमधर्मयुक्तं
यः सन्त्यजत्यनपाकृष्ट एव ।
सुखं सुदुःखान्यवमुच्य शेते
जीर्णां त्वचं सर्प इवावमुच्य ॥२॥

भावार्थ—जो मनुष्य अधर्मयुक्त बहुत बड़ी धनराशी को भी उसकी ओर आकृष्ट हुए बिना ही त्याग देता है, वह जैसे सर्प अपनी पुरानी केंचुली को त्यागकर सुखी होता है, उसी प्रकार बड़े-बड़े दुःखों से छूटकर सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करता है।

He, who forsakes a huge amount of wealth, owing to its being fraught with unrighteousness, of his own accord, without any attraction towards it, lives happily casting off all his troubles, woes and miseries, like a snake that has cast off its slough.

अनृते च समुत्कर्षो राजगामि च पैशुनम् ।
गुरोश्चालीकनिर्बन्धः समानि ब्रह्महत्यया ॥३॥

भावार्थ—बढ़-चढ़कर झूठ बोलना अथवा झूठ बोलकर विजय प्राप्त करना, राजा के विषय में निन्दा फैलाना और बड़ों के साथ झूठा व्यवहार करना—ये सब ब्रह्महत्या के समान पातक हैं।

To tell big lies or to gain victory by falsehood, to talk ill of the king and the deceitful conduct towards the superiors—each of them is equal to the sin of slaying a *Brāhmaṇa.*

असूयैकपदं मृत्युरतिवादः श्रियो वधः ।
अशुश्रूषा त्वरा श्लाघा विद्यायाः शत्रवस्त्रयः ॥४॥

भावार्थ—पर-गुणों में दोष-दर्शन एकदम मृत्यु है, असूयक स्वयं नष्ट हो जाता है; अत्युक्तिपूर्ण आत्मप्रशंसा कल्याण की नाशक है अथवा अभिमान करने से ऐश्वर्य नष्ट हो जाता है। गुरु की सेवा न करना, शीघ्रता करना और आत्म-प्रशंसा— ये तीन विद्या-प्राप्ति के विघ्न हैं।

Finding fault with the merits of others is atonce like death—the backbiter is himself ruined, boastfulness destroys welfare or proud ruins the prosperity. Carelessness in waiting upon the preceptor, haste and boastfulness are three enemies of acquiring knowledge.

आलस्यं मदमोहौ च चापलं गोष्ठिरेव च ।
स्तब्धता चाभिमानित्वं तथात्यागित्वमेव च ।
एते वा अष्ट[§] दोषाः स्युः सदा विद्यार्थिनां मताः ॥५॥

भावार्थ—आलस्य में पड़े रहना, मादक द्रव्यों का सेवन, परिवार में आसक्ति—फँसावट, चञ्चलता, व्यर्थ गप्पें हाँकना, बुद्धि की जड़ता, अभिमानी और लालची होना—ये आठ दोष विद्यार्थियों के माने गये हैं।

Physical and mental inertia, use of intoxicants, attachment to the family, fickleness of the mind and senses, idle gossip, confusion of the intellect, pride and covetousness—these are the eight faults of the students who are in the persuit of knowledge.

§ मूल ग्रन्थ में 'सप्त' पाठ है, परन्तु दोष आठ हैं, इसलिए यह पाठ हमने बदला है। —**व्याख्याकार**

सुखार्थिनः कुतो विद्या नास्ति विद्यार्थिनः सुखम् ।
सुखार्थी वा त्यजेद् विद्यां विद्यार्थी वा त्यजेत्सुखम् ॥६॥

भावार्थ—सुखाभिलाषी को विद्या नहीं आ सकती और विद्यार्थी को सुख प्राप्त नहीं हो सकता । सुखाभिलाषी को विद्या-प्राप्ति की इच्छा छोड़ देनी चाहिए और विद्यार्थी को सुख-प्राप्ति की इच्छा त्याग देनी चाहिए ।

How can they, who desire pleasure, acquire knowledge ? Students engaged in the pursuit of knowledge cannot have pleasure. Votaries of pleasure must give up knowledge and votaries of knowledge must give up pleasure.

नाग्निस्तृप्यति काष्ठानां नापगानां महोदधिः ।
नान्तकः सर्वभूतानां न पुंसां वामलोचना ॥७॥

भावार्थ—अग्नि ईंधन से तृप्त नहीं होती, अपितु बढ़ती है; समुद्र नदियों के जल से तृप्त नहीं होता—उसमें बाढ़ नहीं आती, मृत्यु सब प्राणियों को मारकर भी तृप्त नहीं होती और स्त्री अनेक पुरुषों से संभोग करके भी तृप्त नहीं होती ।

Fire is never gratified with fuel, instead it becomes intense by fuel. The great ocean is never gratified with the rivers it receives—no flood can rise in it. Death is never gratified even with entire living creatures. A beautiful women is never gratified with any number of men she may have.

विशेष—न पुंसां वामलोचना—यह दृष्टान्तमात्र है । कामी पुरुष भी स्त्रियों से तृप्त नहीं होता ।

Note—'न पुंसां वामलोचना'—It is only an example. A lustful person also is not gratified with women.

आशा धृतिं हन्ति समृद्धिमन्तकः
क्रोधः श्रियं हन्ति यशः कदर्यता ।
अपालनं हन्ति पशूंश्च राज-
न्नेकः क्रुद्धो ब्राह्मणो हन्ति राष्ट्रम् ॥८॥

भावार्थ—हे राजन् ! किसी वस्तु की प्राप्ति की आशा धैर्य को नष्ट कर देती है, मृत्यु ऐश्वर्य को नष्ट कर डालती है, क्रोध शरीर के सौन्दर्य को नष्ट कर डालता है, कंजूसी यश को नष्ट कर देती है, देख-भाल न करने से पशु नष्ट हो जाते हैं

और क्रुद्ध हुआ अकेला ब्राह्मण सारे राष्ट्र को नष्ट कर देता है।

O king! the hope of acquiring something kills patience, death kills growth and prosperity, anger ruins the beauty of the body, miserliness kills fame, absence of supervision kills cattle and an angry *Brahmana* destroys the whole kingdom.

अजाश्च कांस्यं रजतं च नित्यं
मध्वाकर्षः शकुनिः श्रोत्रियश्च।
वृद्धो ज्ञातिरवसन्नः कुलीन
एतानि ते सन्तु गृहे सदैव ॥९॥

भावार्थ—हे राजन्! बकरियाँ, कांसी के पात्र, चाँदी, विष का बोध करानेवाले मैना आदि पक्षी, वेदज्ञ ब्राह्मण, कुलीन वृद्ध और अपने कुल का दुःखी मनुष्य—ये सदा तुम्हारे घर में रहें।

O king! let goats, vessels of bronze, silver, the birds like 'मैना' (a black Indian bird with a melodious voice) which indicate about poison in the food, *Brahmanas* well-versed in the *Vedas*, old men of high birth and relatives who are in trouble and misery, be always present in your family.

अजोक्षा चन्दनं वीणा आदर्शो मधुसर्पिषी।
विषमौदुम्बरं शंखः स्वर्णनाभोऽथ रोचना ॥१०॥
गृहे स्थापयितव्यानि धन्यानि मनुरब्रवीत्।
देवब्राह्मणपूजार्थमतिथीनां च भारत ॥११॥

भावार्थ—हे भरतवंशी राजन्! मनुजी ने कहा है कि देव, ब्राह्मण और अतिथियों के आदर-सत्कार के लिए अजा, वृषभ, चन्दन, वीणा, दर्पण, शहद, घी, विष=तीक्ष्ण शस्त्रास्त्र, तांबे के पात्र, दक्षिणावर्त्त शंख, स्वर्णनाभ और गोरोचन आदि मङ्गल पदार्थ सदा घर में रखने चाहिएँ।

O the king of the *Bharata* race! *Manu* has said that goats, bull, sandal, lyres, mirrors, honey, clarified butter, iron=sharp weapons of iron, vessels of bronze, counch-shell, ammonia, *Gorochana* should always be kept in one's house for the worship of learned *Brahmanas* and guests, for all these objects are auspicious.

इदं च त्वां सर्वपरं ब्रवीमि
पुण्यं पदं तात महाविशिष्टम् ।
न जातु कामान्न भयान्न लोभाद्
धर्मं जह्याज्जीवितस्यापि हेतोः ॥१२॥

भावार्थ—हे तात ! मैं तुम्हें सबसे बढ़कर, अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और पुण्य प्राप्त करानेवाली बात कहता हूँ कि मनुष्य भय, काम और लोभ के वशीभूत होकर और प्राणों की रक्षा के लिए भी धर्म का परित्याग न करे।

O sire! I would tell you a sacred lesson which is the most important, productive of great fruits and highest of all teachings, viz., *Dharma* (virtue) should never be forsaken from desire, fear or temptation, nay nor for the sake of life it-self.

नित्यो धर्मः सुखदुःखे त्वनित्ये
जीवो नित्यो हेतुरस्य त्वनित्यः ।
त्यक्त्वानित्यं प्रतितिष्ठस्व नित्ये
सन्तुष्य त्वं तोषपरो हि लाभः ॥१३॥

भावार्थ—हे राजन् ! संसार में धर्म ही नित्य=सदा रहनेवाला है, सुख-दुःख तो अनित्य हैं—आते-जाते रहते हैं। जीव नित्य है, परन्तु इसके साधन—शरीरादि अनित्य हैं। तुम अनित्य को छोड़कर और नित्य में प्रतिष्ठित होकर सन्तुष्ट होओ, क्योंकि सन्तोष में ही परम लाभ है।

O king ! virtue is ever lasting; pleasure and pain are transitory—they come and go. The soul is eternal, but its means the body etc., are transitory. Forsaking those which are transitory, betake yourself to that which is eternal and let contentment be yours, for contentment is the highest of all acquisitions.

महाबलान् पश्य महानुभावान्
प्रशास्य भूमिं धनधान्यपूर्णाम् ।
राज्यानि हित्वा विपुलाँश्च भोगान्
गतान्नरेन्द्रान् वशमन्तकस्य ॥१४॥

भावार्थ—हे राजन् ! तुम महाबलवान्, उदारचेता, धन-धान्य से परिपूर्ण इस

भूमि का शासन करके, राज्यों और विपुल भोगों को छोड़कर मृत्यु के मुख में गये हुए राजाओं के जीवनों पर दृष्टिपात करो, अर्थात् तुम्हें भी इस सारे वैभव को छोड़कर जाना होगा, अतः अनित्य सुख के लिए धर्म को मत त्यागो।

O king ! behold, illustrious, magnanimous and mighty kings having ruled lands abounding with wealth and corn have become the victims of death, leaving behind their kingdoms and vast sources of enjoyments i.e. one day you will also have to die leaving behind all the glory and wealth, therefore, for transitory pleasures do not forsake everlasting virtue.

मृतं पुत्रं दुःखपुष्टं मनुष्या
उत्क्षिप्य राजन् स्वगृहान्निर्हरन्ति।
तं मुक्तकेशाः करुणं रुदन्ति
चितामध्ये काष्ठमिव क्षिपन्ति ॥१५॥

भावार्थ—हे राजन् ! मनुष्य अत्यन्त दुःख उठाकर पाले-पोसे अपने मरे हुए पुत्र को उठाकर घर से बाहर ले-जाते हैं। स्त्रियाँ केश खोलकर उसके लिए करुण स्वर में विलाप करती हैं और बन्धुवर्ग उसे चिता में वैसे ही धर देते हैं, जैसे लकड़ियों को चिनते हैं।

O king! the son brought up with anxious care, when dead, is taken up and carried away by men (to the burning ground). The women with their hair-locks unfold lament pathetically for him, but the kinsmen cast his body in the funeral pyre, as if it were a peace of wood.

अन्यो धनं प्रेतगतस्य भुंक्ते
वयांसि चाग्निश्च शरीरधातून्।
द्वाभ्यामयं सह गच्छत्यमुत्र
पुण्येन पापेन च वेष्ट्यमानः ॥१६॥

भावार्थ—मरे हुए मनुष्य के धन को कोई और (उसका उत्तराधिकारी) ही खाता=भोगता है। उसके शरीर के मांस आदि धातुओं को जंगल में छोड़ देने पर पक्षी और चिता में रखने पर अग्नि खाती है। मरा हुआ मनुष्य पुण्य और पाप—इन दो के साथ लिपटा हुआ ही परलोक में जाता है।

The wealth of the deceased is enjoyed by others (who are his

heirs), while the birds (if the body is left in he forest) and the fire feast on the elements of his body. Only his virtues and sins accompany him, when he travels to the other world.

उत्सृज्य विनिवर्तन्ते ज्ञातयः सुहृदः सुताः ।
अपुष्पानफलान् वृक्षान् यथा तात पतत्रिणः ॥१७॥

भावार्थ—हे तात ! जैसे पक्षी पुष्प और फलरहित वृक्षों को छोड़ देते हैं, वैसे ही सम्बन्धी, मित्र और पुत्र मृतक पुरुष को छोड़कर लौट जाते हैं ।

O sire! just as the birds abandon the trees which are without blossoms and fruits, similarly the relatives and friends throwing away the dead body return home.

अग्नौ प्रास्तं तु पुरुषं कर्मान्वेति स्वयं कृतम् ।
तस्मात्तु पुरुषो यत्नाद्धर्मं सञ्चिनुयाच्छनैः ॥१८॥

भावार्थ—मरने के पश्चात् शरीर के अग्नि में भस्म हो जाने पर उसके किये हुए पुण्य या पाप कर्म ही उसके साथ जाते हैं, अतः मनुष्य को प्रयत्नपूर्वक शनैः-शनैः धर्म का सञ्चय करना चाहिए ।

After death, when the body is reduced to ashes, the soul is followed only by its own virtuous and evil acts, therefore, a man should acquire carefully and gradually the merits of righteousness.

अस्माल्लोकादूर्ध्वममुष्य चाधो
महत्तमस्तिष्ठति ह्यन्धकारम् ।
तद् वै महामोहनमिन्द्रियाणां
बुध्यस्व मा त्वां प्रलभेत राजन् ॥१९॥

भावार्थ—इस मनुष्यलोक से ऊपर और इससे नीचे गहन अन्धकार है, वह इन्द्रियों के ज्ञान का हरण करनेवाला है, इस बात को जानो और समझो । हे राजन् ! यह अन्धकार तुम्हें प्राप्त न हो, इसका प्रयत्न करो ।

In the world above this and also in that below this, there are regions of great gloom and darkness. O king! know it well, that by that gloom the senses of men are exceedingly afflicted. Try your best, to keep yourself aloof from that darkness.

***विशेष**—मनुष्यलोक से ऊपर देवयोनियों और नीचे पशुयोनियों में इन्द्रियों*

के ज्ञान को नष्ट करनेवाला प्रगाढ़ अन्धकार है। देवयोनि में मनुष्य इन्द्रियातीत हो जाता है और पशुयोनियों में शुभ कर्म करने की शक्ति छिन जाती है।

***Note**—There are celestial vagina above the world of men and below there are animal vagina. In both of them there is gloom by which the senses are exceedingly afflicted. In celestial vagina a man becomes devoid of senses and in animal kingdom there is no power of doing good deeds.*

इदं वचः शक्ष्यसि चेद्यथाव-
न्निशम्य सर्वं प्रतिपत्तुमेव।
यशः परं प्राप्स्यसि जीवलोके
भयं न चामुत्र न चेह तेऽस्ति ॥२०॥

भावार्थ—हे राजन्! मेरे इस (उक्त) वचन को सुनकर यदि तुम पूर्णरूप से समझ सकोगे और उसके अनुसार कर्म करोगे तो संसार में तुम्हें उत्तम कीर्ति प्राप्त होगी और इस लोक तथा परलोक में तुम्हें किसी प्रकार का कोई भय नहीं होगा।

O king! carefully listening to my words, which I have just uttered, if you will act according to them, you will obtain great fame in this world and you will have no fear here and hereafter.

आत्मा नदी भारत पुण्यतीर्था
सत्योदका धृतिकूला दयोर्मिः।
तस्यां स्नातः पूयते पुण्यकर्मा
पुण्यो ह्यात्मा नित्यमलोभ एव ॥२१॥

भावार्थ—हे भारत! आत्मा पवित्र घाटोंवाली नदी है। इस नदी में सत्यरूपी जल है, धैर्यरूपी किनारे हैं, दयारूपी लहरें हैं। इस नदी में स्नान करनेवाला पुण्यकर्मा पवित्र हो जाता है। सदा लोभरहित आत्मा ही पुण्यशील होती है।

O *Bhārata*! the soul is spoken of as a river, religious merit constitutes its sacred baths. In this river truth is the water, perseverance its banks, kindness its waves. He who is righteous purifies himself by a bath therein. The soul which has no desire is sacred.

कामक्रोधग्राहवतीं पञ्चेन्द्रियजलां नदीम् ।
नावं धृतिमयीं कृत्वा जन्मदुर्गाणि सन्तर ॥२२॥

भावार्थ—हे राजन् ! धैर्यरूपी नौका के द्वारा काम-क्रोधरूपी मगरमच्छोंवाली, पाँच इन्द्रियोंरूपी जलवाली अथवा पाँच इन्द्रियों के पाँच विषयोंरूपी जलवाली इस संसाररूपी नदी को, जीवन के संघर्षों अथवा जन्म-मृत्युरूपी भँवरों को तर जाओ।

O king ! the world is a river. The five senses are its waters or the objects of five senses are its waters. Desires and anger are its crocodiles and sharks. Making self-control your raft, cross this river– the struggle of life or cross its eddies which are represented by repeated births.

प्रज्ञावृद्धं धर्मवृद्धं स्वबन्धुं
विद्यावृद्धं वयसा चापि वृद्धम् ।
कार्याकार्ये पूजयित्वा प्रसाद्य
यः सम्पृच्छेन्न स मुह्येत्कदाचित् ॥२३॥

भावार्थ—जो मनुष्य कर्तव्य और अकर्तव्य के विषय में संशय होने पर बुद्धि में बड़े (दूरदर्शी), धर्म में बड़े, विद्या में बड़े और आयु में भी बड़े अपने बन्धु का सत्कार और उसे प्रसन्न करके उससे पूछता है, उसकी सम्मति लेता है, वह कभी भी मोह को प्राप्त नहीं होता, कर्तव्यक्षेत्र में कभी भ्रान्त नहीं होता ।

Worshipping and gratifing one's own relatives and friends who are eminent in wisdom, virtue, learning and age, he who asks for their advice about what he should do and should not do, is never misled.

धृत्या शिश्नोदरं रक्षेत्पाणिपादं च चक्षुषा ।
चक्षुः श्रोत्रे च मनसा मनो वाचं च कर्मणा ॥२४॥

भावार्थ—अपने उदर और उपस्थ की धैर्य से रक्षा करे, अर्थात् खान-पान और भोग में अधीर न होवे । सम्यक् रूप से देखकर हाथ-पाँव चलाए, अर्थात् ठीक प्रकार से देखकर वस्तुओं के ग्रहण से हाथों की और मार्ग देखकर चलने

से पैरों की रक्षा करे। मन से आँख और कान की रक्षा करे अर्थात् आँख और कान पर मन का नियन्त्रण रखे और मन तथा वाणी की कर्मों के संयम द्वारा रक्षा करनी चाहिए।

One should retain one's lust and stomach by patience—one should not be impatient in the matter of eating and enjoyment. One should restrain one's hands and feet by one's eyes i.e. by seeing carefully he should accept something by hands and by carefully walking in the way he should protect his feet. One should protect his eyes and ears by mind i.e. one should have a control of mind over all the senses. One should retain one's mind and words by one's acts.

नित्योदकी नित्ययज्ञोपवीती
नित्यस्वाध्यायी पतितान्नवर्जी।
सत्यं ब्रुवन् गुरुवे कर्म कुर्वन्
न ब्राह्मणश्च्यवते ब्रह्मलोकात् ॥२५॥

भावार्थ—प्रतिदिन सन्ध्या=ब्रह्मयज्ञ करनेवाला, सदा यज्ञोपवीत धारण करनेवाला, अर्थात् नित्य अग्निहोत्रादि यज्ञ करनेवाला, सदा स्वाध्याय करनेवाला, पतितों का अन्न न लेनेवाला, सत्य बोलनेवाला और गुरु=वृद्धजनों की सेवा करनेवाला ब्राह्मण अवश्य मुक्ति पाता है।

The *Brāhmaṇa* who never omits his daily prayers (सन्ध्या), who always wears his sacred thread i.e. who daily performs *Agni-hoṭra*, who always attends to the study of the *Veḍas*, who does not accept the food of those who are fallen of the virtues, who always speaks truth and waits upon his preceptors, never falls off from the region of *Brahma* i.e. he certainly attains liberation.

अधीत्य वेदान् परिसंस्तीर्य चाग्नी-
निष्ट्वा यज्ञैः पालयित्वा प्रजाश्च।
गोब्राह्मणार्थं शस्त्रपूतान्तरात्मा
हतः संग्रामे क्षत्रियः स्वर्गमेति ॥२६॥

भावार्थ—वेदों को पढ़कर, अग्नियों को चारों ओर से कुशाओं से आच्छादित करके, यज्ञों से यजन करके, धर्मपूर्वक प्रजाओं का पालन करके, शस्त्र के आघात

से पवित्र आत्मावाला क्षत्रिय गौ और ब्राह्मण की रक्षा के निमित्त मारा जाकर कल्याण को प्राप्त होता है, मुक्त हो जाता है।

He who studies the *Veḍas*, covers the sacrificial *Vedi* by *Kuśa* grass, performs all the five *Yajñas*, protects the subjects with righteousness, such a *Kshatriya* of pious soul attains liberation. Also he who is killed by weapons protecting the *Brahmana* and the kine.

वैश्योऽधीत्य ब्राह्मणान् क्षत्रियाँश्च
धनैः काले संविभज्याश्रिताँश्च।
त्रेतापूतं धूममाघ्राय पुण्यं
प्रेत्य स्वर्गे दिव्यसुखानि भुंक्ते ॥२७॥

भावार्थ—वैश्य गुरु से वेदों को पढ़कर, यथासमय ब्राह्मण, क्षत्रिय और अपने आश्रित भृत्यवर्ग को धन बाँटकर, आहवनीय आदि तीनों अग्नियों से उठे हुए यज्ञीय पवित्र धूम-गन्ध को सूँघकर अर्थात् यज्ञ करके, मरकर आनन्द की स्थिति में दिव्य सुखों को भोगता है।

The *Vaisya* having studied the *Veḍas* by the preceptor and distributing his wealth among *Brāhmaṇās*, *Kshatriyas* and his own dependent servants at proper time, inhaling the sanctified smoke of the three kinds of fires i.e. performing three kinds of *Yajña*, the *Vaisya* enjoys heavenly bliss in the other world.

ब्रह्म क्षत्रं वैश्यवर्णं च शूद्रः
क्रमेणैतान्न्यायतः पूज्यमानः।
तुष्टेष्वेतेष्वव्यथो दग्धपाप-
स्त्यक्त्वा देहं स्वर्गसुखानि भुंक्ते ॥२८॥

भावार्थ—शूद्र भी क्रम से ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्यवर्ण की न्यायपूर्वक सेवा करता हुआ इन्हें प्रसन्न करके, स्वयं व्यथा से रहति हो पापों से मुक्त होकर, मरने के पश्चात् स्वर्ग के सुखों को भोगता है।

By properly worshipping and gratifing *Brāhmaṇās*, *Kshatriyas* and *Vaiśyas* in due order, and thus making himself free from the sins, then peacefully casting off his body the *Sudra* also enjoys the bliss of heaven.

चातुर्वर्ण्यस्यैष धर्मस्तवोक्तो
हेतुं चानुब्रुवतो मे निबोध ।
क्षात्राद् धर्माद्धीयते पाण्डुपुत्र-
स्तं त्वं राजन् राजधर्मे नियुङ्क्ष्व ॥२६॥

भावार्थ—हे राजन् ! मैंने जिस कारण से तुम्हें यह चारों वर्णों के धर्म का उपदेश दिया है, वह बताता हूँ, उसे सुनो और समझो । तुम्हारे कारण यह पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर क्षात्रधर्म से हीन हो रहा है, अर्थात् राज्य का अधिकारी होकर भी राज्य से वञ्चित हो रहा है । तुम इसे क्षात्रधर्म=प्रजापालन में नियुक्त करो, इन पाण्डवों का परम्परा-प्राप्त राज्य इन्हें दे दो ।

O king! Why I have enumerated the duties of the four orders, I tell you the reason of my speech, listen to it, know it and act upon it. *Yudhiṣthira* the son of *Pāndu* is falling off from the duties of *Kshatriya* order. Place him therefore, O king ! in a position to discharge off the duties of a king. Hand over their kingdom to them.

धृतराष्ट्र उवाच

एवमेतद् यथा त्वं मामनुशाससि नित्यदा ।
ममापि च मतिः सौम्य भवत्येवं यथात्थ माम् ॥३०॥

भावार्थ—धृतराष्ट्र बोले—हे सौम्य विदुर ! जैसा तुम मुझे नित्य उपदेश करते हो यह बात है तो ऐसी ही, अर्थात् सत्य है । जैसा तुम मुझे कहते हो मेरा विचार भी वैसा ही बनता है, अर्थात् मैं भी पाण्डवों का राज्य उन्हें देना चाहता हूँ ।

Dhṛtrāṣtra said—O amiable *Vidura*! it is even so as you always teach me i.e. what you say is true. My heart also inclines that very way of which you tell me i.e. I also want to hand over their kingdom to them.

सा तु बुद्धिः कृताप्येवं पाण्डवान् प्रति मे सदा ।
दुर्योधनं समासाद्य पुनर्विपरिवर्तते ॥३१॥

भावार्थ—पाण्डवों के प्रति मेरी भी सदा ऐसी ही बुद्धि होती है कि उनका राज्य उन्हें लौटा दूँ, परन्तु दुर्योधन का संग होने पर मेरी वह मति पुनः परिवर्तित हो जाती है ।

I incline in my mind towards the *Pāndavās* that I should hand over their kingdom to them, but as soon as I come in contact with *Duryodhana* it turns off in a different way.

न दिष्टमभ्यतिक्रान्तुं शक्यं भूतेन केनचित् ।
दिष्टमेव ध्रुवं मन्ये पौरुषं तु निरर्थकम् ॥३२॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि प्रजागरपर्वणि विदुरनीतौ चत्वारिंशोऽध्यायः ॥

इति विदुरनीतौ (विदुरप्रजागरे) अष्टमोध्यायः ॥

समाप्तश्चायं ग्रन्थः ॥

भावार्थ—कोई भी प्राणी भाग्य को नहीं बदल सकता । मैं तो भाग्य को अटल और पुरुषार्थ को निरर्थक मानता हूँ, अर्थात् पाण्डवों को राज्य न लौटाकर हमारा भाग्य ही सम्पूर्ण कुरुकुल को विनाश की ओर ले-जा रहा है ।

No creature is able to avert the destiny. I think the destiny is certain to take its course and individual exertion is futile i.e. by not handing over the kingdom of the *Pāndavās,* the destiny is taking away the whole of the *Kuru* dynasty to destruction.

विशेष—*भ्रान्तचित्त मनुष्य ही भाग्य में विश्वास करते हैं । प्रबल पुरुषार्थ से भाग्य को भी बदला जा सकता है ।*

Note—*The men of confusing mind only trust in the destiny. By mighty efforts the destiny can also be changed.*

परमहंस स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ के शिष्य स्वामी जगदीश्वरानन्दकृत विदुरनीति-(विदुरप्रजागर)-भाष्य का यह आठवाँ अध्याय सम्पूर्ण हुआ और यह ग्रन्थ भी समाप्त हुआ ॥

Here ends the eighth chapter of Vidura-Niti.

The book also ends.

विदुरनीतेः श्लोकानुक्रमणिका

श्लोक	पृष्ठ
अकर्मशीलं च महा	१५१
अकस्मादेव कुप्य०	१२५
अकामान् कामयति	२०
अकार्यकरणाद्	६६
अकीर्तिं विनयो	१६१
अक्रोधेन जयेत्क्रोधं	२००
अग्निस्तेजो महल्लोके	१६०
अग्निहोत्रफलाः	१६८
अग्नौ प्रास्तं तु	२११
अजाश्च कांस्यं	२०८
अजोक्षा चन्दनं	२०८
अतिक्लेशेन ये	२०१
अतिमानोऽति०	१४३
अतिवादं न	११५
अतीतायां च	८७
अतीवगुणस०	१८३
अतीत्य सर्वान्	८३
अतृणे पतितो वह्निः	२७
अत्यार्यमतिदातारं	१६७
अत्राप्युदाहरन्ति	८५
अत्रैवोदाहरन्ति	४६, १११
अथ ये सहिता	१३४
अथ यो नैव	६४
अथ संत्यजतो धर्मं	६४
अद्भ्योऽग्निर्ब्रह्मतः	१६८
अधर्मोपार्जितैरर्थैः	१६८
अधीत्य वेदान्	२१४
अध्वा जरा देहवतां	२०१
अनधीत्य यथा	१७२
अनर्थकं विप्रवासं	४८
अनर्थमर्थतः पश्यन्	७४
अनवाप्यं च शोकेन	१२६
अनसूयाऽऽर्जवं शौचं	७८
अनसूयुः कृतप्रज्ञः	१०६
अनाम्नायमलाः	२०२
अनारभ्या भवन्त्यर्था	६२
अनार्यवृत्तमप्राज्ञं	१७६
अनाश्रिता दानपुण्यं	१२६
अनाहूतः प्रविशति	२२
अनिज्यया कुविवाहैः	१२०
अनिर्वेदः श्रियो	१६५
अनीश्वरोऽयं	१८०
अनीर्षुर्गुप्तदारश्च	१६७
अनुक्रोशादानृशंस्यात्	८३
अनुबन्धं च	५८
अनुबन्धानवेक्षेत	५८
अनृते च समुत्कर्षः	२०६
अन्यो धनं प्रेतगतस्य	२१०
अन्योऽन्यसमुपष्टम्भात्	१३४
अन्वालभे हिरण्मयं	८८
अपकृत्य बुद्धिमतः	१६६
अपनीतं सुनीतेन	१६४
अप्युन्मत्तात्प्रलपतः	६५
अप्रशस्तानि कार्याणि	१७१
अप्राप्तकालं वचनं	१८०
अभिप्रायं यो	१४८
अभियुक्तं बलवता	१४
अभिवादनशीलस्य	२००
अभ्यावहति कल्याणं	८०
अमात्यलाभो भद्रं	१५८
अमित्रं कुरुते मित्रं	२१
अमोघक्रोधहर्षश्च	१७३
अरक्षितारं राजानं	३६
अरुन्तुदं परुषं	११४
अरोषणो यः	१६५
अर्चयेदेव मित्राणि	१२६
अर्थं महान्तमा०	१६
अर्थसिद्धिं परां	१५६
अर्थागमो नित्यं	४०
अर्थानामीश्वरो यः	७५
अवध्या ब्राह्मणाः	१३४
अवलिप्तेषु मूर्खेषु	१६३
अविक्रेयं लवणं	१६५
अविजित्य यः	७६
अविद्यः पुरुषः	२०१
अविसंवादको	१७६
अविसंवादनं दानं	१७६
अवृत्तिर्भयं	७२
अव्याधिजं कटुकं	१३५
अव्याहृतं व्याहृता	११५
अशिष्यं शास्ति	२३
अश्रुतश्च समुन्नद्धः	२०
अष्टाविमानि हर्ष०	४४
अष्टौ गुणाः पुरुषं	१०२

अष्टौ तान्यव्रतघ्नानि १६६
अष्टौ नृपेमानि १०३
अष्टौ पूर्वनिमित्तानि ४३
असंविभागी १७७
असन्तोऽभ्यर्थिताः ७०
असंत्यागात्पापकृतां ७८
असम्यगुपयुक्तं हि १८६
असूयको दन्दशूकः १०६
असूयैकपदं मृत्युः २०६
अस्तब्धम क्लीबं १४६
अस्माल्लोकादूर्ध्वं २११
आक्रुश्यमानो ११२
आक्रोशपरिवादाभ्यां ७६
आगारदाही गरदः १००
आढ्यानां मांसपरमं ७१
आत्मज्ञानमनायासं ७६
आत्मज्ञानं समारम्भः १५
आत्मनाऽऽत्मानं ७५
आत्मनो बलमज्ञाय २३
आत्मा नदी भारत २१२
आत्मानमेव प्रथमं ७६
आदेशकृद् वृत्तिहन्ता १४३
आनृशंस्यादनु १४
आपदर्थे धनं १४५
आयत्यां प्रतिका १६४
आरोग्यमानृण्यं ४०
आर्जवं प्रतिपद्यस्व ८५
आर्जवेन नरं युक्तं १६७
आर्यकर्मणि रज्यन्ते १८
आलस्यं मदमोहौ २०६
आवां कुत्र गमिष्यावः ६०
आशा धृतिं हन्ति २०७
इज्याध्ययनदानानि १०३
इदं च त्वां सर्वपरं २०६
इदं वचः शक्यसि २१२
इन्द्रियाणामनु १६४
इन्द्रियैरिन्द्रियार्थेषु ७३
इमौ तौ सम्प्रदृश्येते ६१
इहैवावां प्रतीक्षाव ८७
ईर्ष्युर्घृणी न ४३
उक्तं मया जात० १८१
उक्तं मया द्यूत० १४६
उत्तमानेव सेवेत ११८
उत्थानं संयमो १६६
उत्पाद्य पुत्रान् १५३
उत्सृज्य विनि० २११
उदकं मधुपर्कं च ६३
उदकं मधुपर्कं वा ६२
उपस्थितस्य १६२
ऊर्ध्वं प्राणाः १६३
ऋजुः पश्यति यः ६२
ऋषीणां च नदीनां १०८
एकं विषरसो हन्ति २६
एकं हन्यान्न वा २४
एकः क्षमावतां दोषः ३७
एकः पापानि कुरुते २४
एकः सम्पन्नमश्नाति २३
एकः स्वादु न भुञ्जीत २६
एकमेवाद्वितीयं २७
एकया द्वे विनिश्चित्य २४
एको धर्मः परं श्रेयः २८
एत एवासयः १४३
एतत् कार्यमपराः ११२
एतयोपमया धीरः ६७
एतान् गुणांस्तात १०२
एतान्यनिगृहीतानि ७४
एवं कृतपणौ क्रुद्धौ ६१
एवं मनुष्यमप्येकं १३४
एवं लोके यशः १८५
एवमुक्तस्तु विदुरः १०
एवमेतद् यथा त्वं २१६
एवमेव कुले जाताः १६०
एषः प्रह्लाद पुत्रस्ते ६७
ऐश्वर्यमदपापिष्ठा ६६
कच्चिदेतैर्महादोषैः १३
कदर्यमाक्रोशकं १५२
करिष्यन्न प्रभाषेत १७०
कर्णिनालीकनाराचान् ८०
कर्मणां तु प्रशस्ता १७१
कर्मणा मनसा १६५
काँश्चिदर्थान् नरः ६२
काकैरिमांश्चित्र १४७
कान्तारे वनदुर्गेषु १६६
कामक्रोधग्राहवतीं २१३
किं ब्राह्मणाः स्वित् ८६
किं वै सहैवं चरथः ६१
किन्नु मे स्यादिदं ६२
कुलानि समुपेतानि १२१
कृतज्ञं धार्मिकं १६३
कृतानि सर्वका १७१
कृत्यानि पूर्वं १४८
क्रोधो हर्षश्च १६
क्षमा वशीकृतिर्लोके २७
क्षमेदशक्तः सर्वस्य १६६
क्षिप्रं विजानाति १७
क्षुद्राक्षेणेव जालेन ७६
गतिरात्मवतां ७१
गन्धेन गावाः ६६
गां प्रदद्यास्त्वौरसाय ६३

गिरिपृष्ठमुपारुह्य १७०
गुणा दश स्नान० १५१
गुणाश्च षण्मित १५१
गुरुरात्मवतां १०८
गृहीतवाक्यो नय० १४४
गृहे स्थापयितव्यानि २०८
गोभिः पशुभिः १२२
घृणी राजा पुंश्चo १५०
चक्षुषा मनसा ६३
चत्वारि कर्माण्य ३६
चत्वारि ते तात ३५
चत्वारि राज्ञा तु ३४
चत्वार्याह महाराज ३६
चरन्तं हंसरूपेण १११
चलच्चित्तमना १२५
चलचित्तस्य वै १२५
चलानि ह्रीमानि १२७
चातुर्वर्ण्यस्यैष धर्मः २१५
चिकित्सकः शल्य १६४
चिकीर्षितं विप्र ५३
जरा रूपं १०१, १४२
जाग्रतो दह्य० १३, ४६
जानाति विश्वास० ४७
जिता सभा वस्त्र० ७१
जीर्णमन्नं प्रशंसन्ति १०७
ज्ञातयस्तारयन्तीह १८६
ज्ञातयो वर्धनीयाः १८५
तं द्रक्ष्यसि परि १७६
ततः प्रविश्य विदुरः १२
तत्त्वज्ञः सर्वभूतानां १८
तत्र पूर्वचतुर्वगः १०३
तथा भद्रे करिष्यामि ८७
तथैव योगविहितं ५७
तनुरुद्धः शिखी १२८
तन्तवोऽप्यायिता १३२
तपो दमो ब्रह्मवित्तं ११६
तपो बलं तापसानां १६६
तव पुत्रशतं १५५
तवार्हते तु फलकं ८६
तस्मात्पापं न १०५
तस्माद्राजेन्द्र ६७
तस्माद् वक्ष्यामि ५७
तस्याद्य कुरुवीर० १२
ताँस्त्वं पदे प्रति० १८८
तादृशैः संगतं १८४
तृणानि भूमिरुदकं १२३
तृणोल्कया ज्ञायते १०१
त्यजेदेकं कुलस्यार्थे १४५
त्रय एवाधना ३३
त्रयोपाया मनुष्याणां ३२
त्रिविधं नरकस्येदं ३३
त्रिविधाः पुरुषाः ३२
त्वं मां यथावद् ५६
त्वरमाणश्च ४५
दम्भं मोहं मात्सर्यं ५१
दश धर्मं न जानन्ति ४५
दानं शौचं दैवतं ५२
दानवेन्द्रस्य च १३६
दिवसेनैव तत्कुर्यात् १०६
दुःखार्त्तेषु प्रमत्तेषु १६७
दुःशासनस्तूपह्नतः ११७
दुर्बुद्धिमकृतप्रज्ञं १६३
दुर्योधनेऽथ शकुनौ १०६
दुर्योधनेन यद्येतत् १८८
दुर्योधने सौबले च १५
दुष्कुलीनः कुलीनो १६२
दृश्यन्ते हि महात्मानो ७७
देवतानां च संकल्पं ३६
देवद्रव्यविनाशेन १२०
देशाचारान् समया ५१
दैवतेषु प्रयत्नेन १७४
द्यूतमेतत् पुराकल्पे १४६
द्वाःस्थं प्राह महाप्राज्ञः १०
द्वाराण्येतानि यो १६०
द्वावम्भसि निवेष्टव्यौ ३१
द्वाविमौ कण्टकौ २६
द्वाविमौ ग्रसते २८
द्वाविमौ न विराजेते ३०
द्वाविमौ पुरुषव्या २६, ३१
द्वाविमौ पुरुषौ ३०
द्विजातिपूजाभि० १०८
द्वे कर्मणि नरः २८
द्वेष्यो न साधुः १८०
धनेनाधर्मलब्धेन १०७
धर्ममाचरतो राज्ञः ६४
धर्मार्थौ यः परित्यज्य ७५
धर्मेण राज्यं विन्देत ६५
धार्तराष्ट्राः पाण्डवान् १३७
धार्तराष्ट्रा वनं १५५
धूमायन्ते व्यपेतानि १३३
धृतिः शमो दमः ७६
धृत्या शिश्नोदरं २१३
न कश्चिन्नापनयते १८८
न कुलं वृत्तहीनस्य ६८
नगरे प्रतिरुद्धः ६४
न चातिगुणवत्सु १६८
न जीयते नानुजि ११६
न तत्परस्य सन्द २००
न तथेच्छन्ति १५६

न तद्बलं यन्मृदुना १३६
न तन्मित्रं यस्य १२४
न दिष्टमभ्यति २१७
न देवा दण्डमादाय ६८
न निह्नवं मन्त्र १५०
न बुद्धिर्धनलाभाय १७५
न भृत्यानां वृत्ति १४७
न मनुष्ये गुणः १३५
न मे सुधन्वना ६२
न योऽभ्यसूयत्यनु ४६
न राज्यं प्राप्तमित्येव ५६
नवद्वारमिदं वेश्म ४५
न विश्वासाज्जातु १४६
न विश्वसेदविश्वस्ते १६७
न वृद्धिर्बहुमन्तव्या १८१
न वै तेषां स्वदते १३१
न वै भिन्ना जातु १३१
न वैरमुद्दीपयति ५०
न वै श्रुतमविज्ञाय १६०
न शत्रुर्वशमापन्नः १७४
न श्रद्दधाति कल्याणं ११८
नष्टं समुद्रे पतितं १६१
नष्टप्रज्ञः पापमेव १०५
न संरम्भेणारभते ४६
न स क्षयो महाराज १८२
न स रात्रौ सुखं १७७
न सा सभा यत्र न १०४
न स्याद्वनमृते १५६
न स्वप्नेन जयेत् २०२
न स्वे सुखे वै कुरुते ५०
न हृष्यत्यात्मसम्माने १८
नाक्रोशी स्यान्नाव ११३
नाग्निस्तृप्यति २०७
नातः श्रीमत्तरं १६६
नानर्थकं सान्त्वयति ११७
नान्यत्र विद्यातपसोः १२६
नापरीक्ष्य मही १७०
नाप्राप्यमभिवा १७
नाममात्रेण तुष्येत १७३
नारीं विगतकामाः ४२
नासुहृत् परमं १७०
निजानुत्पततः ७८
नित्यं सन्तः कुले १६६
नित्योदकी नित्य २१४
नित्योद्विग्नमिदं १२८
नित्यो धर्मः सुख २०६
निरर्थं कलहं प्राज्ञः १७४
निवर्तमाने सौहार्दे १८४
निश्चित्य यः १८
निषेवते प्रशस्तानि १५
नीवारमूलेङ्गुद १६६
नैनं छन्दाँसि ६८
नैनान् स्मृति ४४
न्यायागतस्य ३१
पञ्च त्वामनुगमिष्यन्ति ३८
पञ्च पश्वनृते ६५
पञ्चाग्नयो मनुष्येण ३७
पञ्चेन्द्रियस्य ३८
पञ्चैव पूजयन् ३७
परं क्षिपति दोषेण २२
परश्चेदेनमभि ११४
परापवादनिरताः १८३
परिच्छदेन क्षत्रेण १६२
पर्जन्यनाथाः पशवः ६७
पश्चादपि नरश्रेष्ठ १८७
पश्य दोषान् १५४
पापं कुर्वन् पाप १०५
पापाशंकी पापमेव ५६
पितरं ते गमि ६१
पिता पुत्रौ सहा ८६
पिता हि ते समा ८६
पितुरन्तःपुरं १६८
पितृपैतामहं राज्यं ६४
पीठं दत्वा साधवे १६३
पुत्र एको मम ६३
पुनर्नरो म्रियते १२७
पुरा ह्युक्तं नाकरोः १३६
पुष्पं पुष्पं विचिन्वीत ६१
पूजनीयाः महाभागाः १६७
पूर्वे वयसि तत्कुर्यात् १०७
प्रज्ञामेवागमयति यः १०६
प्रज्ञावृद्धं धर्मवृद्धं २१३
प्रज्ञाशरेणाभिहतस्य १५६
प्रदायैतेषामुचितं ५५
प्रमदाः कामयानेषु ४१
प्रयोजनेषु ये १७८
प्रविशान्तःपुरं ११
प्रवृत्तवाक् चित्रकथः १६
प्रवेशय महाप्राज्ञं ११
प्रसादं कुरु वीराणां १८५
प्रसादो निष्फ ६२, १७५
प्रहितो धृतराष्ट्रेण १०
प्राजापत्यास्तु वै ८६
प्राज्ञोपसेविनं १६२
प्राप्नोति वै वित्तं ११८
प्राप्यापदं न व्यथते ४८
प्रायेण श्रीमतां ७२
प्रियो भवति दानेन १८०
बन्धुरात्माऽऽत्मानं ७५

बलं पञ्चविधं १५८
बुद्धिश्रेष्ठानि १०६
बुद्धौ कलुषभूतायां ८२
बुद्ध्या भयं प्रणुदति १२६
ब्रह्म क्षत्रं वैश्य २१५
ब्राह्मणं ब्राह्मणो १७३
ब्राह्मणस्वानि च ४४
ब्राह्मणानां परि १२१
ब्राह्मणेषु च ये १३३
ब्रूहि भूयो महा ८४
भक्तं च भजमानं ३४
भक्ष्योत्तमप्रतिछन्नं ६०
भावमिच्छन्ति ११७
भीष्मस्य कोपस्तव १५५
भूयांससं लभते ६६
भ्रूणहा गुरुतल्पी १००
मङ्गलालम्भनं १६५
मत्या परीक्ष्य १६१
मत्तः श्रेयानङ्गिरः ६६
मदं स्वप्नमविज्ञानं १६०
मद्यपानं कलहं ६६
मन्त्रभेदस्य षट् १६०
मया चापि हितं १८६
मर्माण्यस्थिनि ११३
महते योऽपकाराय १५८
महाकुलेभ्यः स्पृह १२०
महानप्येकजो १३४
महान्तमप्यर्थं २०५
महाबलान् पश्य २०६
मा नः कुले वैरकृत् १२२
मानेन रक्ष्यते ६८
मार्दवं सर्वभूतानां १६४
मितं भुंक्ते संविभज्य ५२
मिथ्योपेतानि ५७
मृतं पुत्रं दुःखपुष्टं २१०
मेढीभूतः कौरवाणां १३७
यं प्रशंसन्ति १७८
यः कश्चिदप्य १२५
यः काममन्यू ४६
यः पञ्चाभ्यन्तरान् ७७
यः प्रमाणं न ५६
यः सर्वभूतप्रशमये ५३
य आत्मनाऽपत्रपते ५४
य ईर्ष्युः परवित्तेषु ६६
य एव यत्नः क्रियते ६५
यच्छक्यं ग्रसितुं ६०
यज्ञो दानमध्ययनं १०३
यतः प्राप्तः सञ्जयः १३
यतते चापवादाय १८४
यतो यतो निवर्तते ११६
यत्त्वस्य सहजं १५८
यत्पृथिव्यां व्रीहि २०३
यत्र स्त्री यत्र १७८
यत्सुखं सेवमानो १६६
यथा मधु समादत्ते ६१
यथा यथा हि ६८
यथाशक्ति चिकीर्षन्ति १७
यदतप्तं प्रणमति ६७
यदि सन्तं सेवते ११४
यद्धर्ममवृणीथाः ६६
ययोश्चित्तेन वा १६३
यश्च नो ब्राह्मणान् १२३
यश्चापि लब्ध्वा न १४०
यश्चाभिजातः १४०
यश्चाशिष्यं शास्ति १३६
यस्तात न क्रुध्यति १४७
यस्तु पक्वमुपादत्ते ६१
यस्तु पूर्वकृतं पापं १८६
यस्त्वेतानि प्रमा ५६
यस्मात्त्रस्यन्ति ६४
यस्मिन् यथा वर्तते १४२
यस्मै देवा प्रयच्छन्ति ८१
यस्य कृत्यं न जानन्ति १६
यस्य कृत्यं न विघ्नन्ति १६
यस्य दानजितं २०३
यस्य मन्त्रं न १६६
यस्य संसारिणी १६
यस्यात्मा विरतः १५७
यस्योदकं मधुपर्कं १६४
यां रात्रिमधिविन्ना ६५
यादृशैः संनिविशते ११६
यावत्कीर्तिर्मनुष्यस्य ८५
येन खट्वां समारूढः १८७
येन त्वेतानि स० १५८
येऽर्थाः स्त्रीषु समा० १७७
ये वै भेदनशीलास्तु १८३
येषां हि वृत्तं व्यथते १२०
येषु दुष्टेषु दोषः १७७
यो जितः पञ्च ७३
यो ज्ञातिमनुगृह्णाति १८४
यो धर्ममर्थं कामं १५७
यो नोद्धतं कुरुते ५०
योऽभ्यर्चितः २०५
यो हि धर्मं समा० १४५
रथः शरीरं पुरुषस्य ७४
राजन् भूयो ब्रवीमि २०४
राजा लक्षण १४, ८२
रोगार्दिता न १३५
रोहते सायकैर्विद्धं ८०

लताधर्मा त्वं १६१
वध्वावहासं १४०
वनं राजंस्तव पुत्रो १६१
वनस्पतेरपक्वानि ६१
वने जाताः शापदग्धस्य५४
वरप्रदानं राज्यं च ३४
वश्येन्द्रियं जिता ७३
वाक्यं तु यो नाद्रियते१४६
वाक्संयमो हि नृपते ८०
वाक्सायका वदनात् ८१
विगुणा ह्यपि १८५
विदुरोऽयमनुप्राप्तः ११
विदुरोऽहं महाप्राज्ञ १२
विद्यामदो धनमदः ६६
विद्याशीलवयो १७५
विपरीततरश्च १४
विरोचन सुधन्वा ६६
विरोचनोऽथ दैतेयं ८६
विश्वस्तस्यैति यो १४३
वृत्तं यत्नेन संरक्षेत् १२१
वृत्ततस्त्वविहीनानि १२१
वृद्धप्रज्ञः पुण्यमेव १०५
वृद्धिः प्रभावस्तेजः १५४
वैश्योऽधीत्य २१५
शतायुरुक्तः पुरुषः १४२
शीलं प्रधानं पुरुषे ७१
शुभं वा यदि वा ५७
श्रद्धया परया १२३
श्राद्धं पितृभ्यो २१
श्रीमन्तं ज्ञातिमासाद्य१८७
श्रीर्मङ्गलात्प्रभवति १०१
श्रुतं प्रज्ञानुगं यस्य १६
श्रोतुमिच्छामि ते १४
षडिमानि विनश्यन्ति ४२
षडिमान् पुरुषो ३६
षडिमे षट्सु ४१
षडेते ह्यवमन्यन्ते ४२
षडेव तु गुणाः पुंसा ३६
षड् दोषाः पुरुषेणेह ३८
षण्णामात्मनि ४१
संक्लिष्टकर्माणं १५२
संजयो विदुर १२
संधत्स्व त्वं कौरव १३८
संसारयति कृत्यानि २१
स एव खलु १६०
सत्कृताश्च,कृता १२६
सत्यं रूपं श्रुतं १०४
सत्येन रक्ष्यते ६८
सदोषं दर्शनं येषां १८३
सन्तापाद् भ्रश्यते १२६
सन्नियच्छति यो १५७
सप्तदशेमान् रजेन्द्र १३६
सप्त दोषाः सदा ४३
समये च प्रियालापः ४४
समवेक्ष्येह धर्मार्थौ ७७
समागतं द्विजं ८८
समागमश्च सखिभिः ४४
समृद्धा गुणतः १८२
समैर्विवाहं कुरुते ५२
सम्पन्नतरमेवान्नं ७२
सम्भाव्यं गोषु १३२
सम्भोजनं संकथनं १८६
सर्पाश्चाग्निश्च १६०
सर्वं त्वमायती १८२
सर्वतीर्थेषु वा ८४
सर्वैर्गुणैरुपेताः ११०
सहस्त्रिणोऽपि २०३
सहायबन्धनाः १५३
सा तु बुद्धिः कृत्ता २१६
साध्या देवा वयं १११
सामुद्रिकं वणिजं ६६
सुखं च दुःखं च १२७
सुखार्थिनः कुतो २०७
सुदुर्बलं नावजानाति ४८
सुपुष्पितः स्यादफलः ६३
सुलभाः पुरुषाः १४५
सुवर्णपुष्पां पृथिवीं १०६
सुवर्णस्य मलं रूप्यं २०२
सुवृत्तो भव राजेन्द्र १८७
सुव्याहृतानि धीराणां१८६
सुव्याहृतानि सूक्तानि ६५
सूक्ष्मोऽपि भारं १२४
सेयं बुद्धिः परीता ८२
सोऽस्य दोषो न २७
स्त्रियोऽक्षा मृगया ४३
स्त्रीधूर्तकेऽलसे २००
स्त्रीषु राजसु १५६
स्थानवृद्धिक्षय १७२
स्रुवप्रग्रहणो व्रात्यः १००
स्वधीतस्य सुयुद्धस्य १३०
स्वमर्थं यः परित्यज्य २०
स्वयंवरे स्थिता ८६
स्वास्तीर्णानि १३०
हन्ति जातान् ६५
हरणं च परस्वानां ३३
हिंसाबलमसाधूनां ७६
हितं यत्सर्वभूतानां १५३
हित्वा तान् परमे १७८
हिरण्यं च गवाश्वं ६०

Swami Jagdishwarananda Saraswati

Date of Birth—20.01.1931—31.01.2009.

Education—*Prabhakara* and B.A. from Punjab University, M.A. in Sanskrit from Delhi Unviersity.

Written work—On the *Vedas, Ramayana, Mahabharata,* Six Systems of Philosophy, *Upnishad,* Medical Science and on general topics 75 books have been published which have been appriciated much by the scholars and readers.

Orator—Besides a good writer, he is an influential orator. He speaks on Vedas and Yoga. He speaks with great zeal against sanctimoniousness.

Foreign tours—After getting into the order of *Sannyasa* he visited Suriname, Guyana, Trinided, Holland, Fiji Islands, Srilanka and Nepal. There he preached the Vedic religion. His ideal life and sermons both influenced people.

Library—His personal library is very big. It is difficult to find out another such a big religious library in Delhi.

Sannyasa-order—He is a celibate. Without entering into the house-holders' life he on the 16th February 1975 on the auspicious day of *Vasant Panchmi* entered the *Sannyasa Asram*. He is wholly and solely devoted to the propagation of *Vedic* teachings.

He is a scholar of the *Vedas*, he has studied deeply the *Upnishadas*. He is a reviewer of the *Ramayana* and the *Mahabharata*. He possesses a deep knowledge of sects, and has a clear insight of Vedic principles. He is well-versed in performing *Vedic* rites. Inspite of all this he pratises *Yoga*. By nature he is very sweet, highly simple, bears a good moral character and very honest. He is sociable and humorous.